... हिन्द
के लिये भट्टारक
एवं कृतित्व जैसे
यदि मुझे यह
अपनी पुस्तक
literature'
साहित्य व
प्रकाशित
पात्र

प्रथम संस्करण १९८१ कार्तिक २०३८ प्रतियां — १०००

प्रकाशक— **श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी**
८६७ अमृत कलश
बरकत कालोनी, किसान मार्ग
टोंक फाटक, जयपुर ३०२०१५

मूल्य — ४० रुपये

मुद्रक— कपूर आर्ट प्रिन्टर्स, जयपुर

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी—एक परिचय

प्राकृत एव सस्कृत के पश्चात् राजस्थानी एव हिन्दी भाषा ही एक ऐसी भाषा है जिसमें जैन आचार्यो, भट्टारको, सन्तो एव विद्वानो ने सबसे अधिक लिखा है। वे गत ८०० वर्षो से उसके भण्डार को समृद्ध बनाने में लगे हुए हैं। उन्होने प्रबन्ध काव्य लिखे, खण्ड काव्य लिखे, चरित लिखे, रास, फागु एव वेलिया लिखी। और न जाने कितने नामो से काव्य लिखकर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया। राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, एव देहली के सैकडो जैन शास्त्र भण्डारो में जैन कवियो की रचनाओ का विशाल सग्रह मिलता है। जिसमें से किन्ही का नामोल्लेख राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूचियो के पांच भागो में हुआ है। इधर श्री महावीर क्षेत्र से ग्रथ सूचियो के अतिरिक्त, राजस्थान के जैन सन्त व्यक्तित्व एव कृतित्व, महाकवि दौलतराम कासलीवाल तथा टोडरमल स्मारक भवन से महापडित टोडरमल पर गत कुछ वर्षों में पुस्तकें प्रकाशित हुई है लेकिन हिन्दी के विशाल साहित्य को देखते हुए ये प्रकाशन बहुत थोडे लग रहे थे। इसलिये किसी ऐसी सस्था की कमी खटक रही थी जो जैन कवियो द्वारा निबद्ध समस्त हिन्दी कृतियो को उनके मूल्यॉकन के साथ प्रकाशित कर सके। जिससे हिन्दी साहित्य के इतिहास में जैन कवियो को उचित स्थान प्राप्त हो तथा हाईस्कूल एव कालेज के पाठ्यक्रम में इन कवियो की रचनाओ को भी कही स्थान प्राप्त हो सके।

स्वतन्त्रता सस्था की योजना—

इसलिये सम्पूर्ण हिन्दी जैन कवियो की कृतियो को 20 भागो में प्रकाशित करने के उद्देश्य से सन् 1977 मे श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी नाम से एक स्वतन्त्र सस्था की स्थापना की गयी। साथ मे यह भी निश्चय किया गया कि हिन्दी कवियो के 20 भागो की योजना पूर्ण होने पर सस्कृत, प्राकृत एव अपभ्रश के आचार्यों पर भी इसी प्रकार की सिरीज प्रकाशित की जावे। जिससे समस्त जैनाचार्यों एव कवियो की साहित्यिक सेवाओ से जन सामान्य परिचित हो सके तथा देश के विश्व-विद्यालयो मे जैन विद्या पर जो शोध कार्य प्रारम्भ हुआ है उसमे और भी गति आ सके।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी की हिन्दी योजना के अन्तर्गत निम्न २० भाग प्रकाशित करने की योजना बनायी गयी।

१ महाकवि ब्रह्म रायमल एवं भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति (प्रकाशित)
२ कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि "
३ महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एव कृतित्व "
४. भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र "
५ आचार्य सोमकीर्ति एव ब्रह्म यशोधर प्रेस में
६. महाकवि वीरचन्द एव महिचद
७ विद्याभूषण, ज्ञानसागर एव जिनदास पाण्डे
८ कविवर रूपचन्द, जगजीवन एव ब्रह्म कपूरचन्द
९ महाकवि भूधरदास एव बुलाकीदास
१० जोधराज गोदीका एव हेमराज
११ महाकवि द्यानतराय
१२ प० भगवतीदास एव भाउ कवि
१३ कविवर खुशालचन्द काला एव अजयराज पाटनी
१४ कविवर किशनसिंह, नथमल विलाला एव पाण्डे लालचन्द
१५ कविवर बुधजन एव उनके समकालीन कवि
१६. कविवर नेमिचन्द्र एव हर्षकीर्ति
१७ भैय्या भगवतीदास एव उनके समकालीन कवि
१८ कविवर दौलतराम एव छत्तदास
१९ मनराम, मन्नासाह, लोहट कवि
२० २०वी शताब्दि के जैन कवि .

योजना तैयार होने के पश्चात् उसके क्रियान्वय का कार्य आरम्भ कर दिया गया। एक ओर प्रथम भाग "महाकवि ब्रह्मरायमल एव भट्टारक त्रिभवनकीर्ति" के लेखन एव सम्पादन का कार्य प्रारम्भ किया गया तो दूसरी ओर अकादमी की योजना एव नियम प्रकाशित करवा कर समाज के साहित्य प्रेमी महानुभावो के पास सस्था सदस्य वनने के लिये भेजे गये। कितने ही महानुभावो से साहित्य प्रकाशन की योजना के सम्बन्ध मे विचार विमर्श किया गया। मुझे यह लिखते हुए प्रसन्नता है कि समाज के सभी महानुभावो ने अकादमी की स्थापना एव उसके माध्यम से साहित्य प्रकाशन योजना का स्वागत किया है और अपना आर्थिक सहयोग देने का आश्वासन दिया। सर्व प्रथम अकादमी की प्रकाशन योजना को जिन महानुभावो का

समर्थन प्राप्त हुआ उनमे सर्व श्री स्व० साहु शान्तिप्रसाद जी जैन, श्री गुलाबचन्द जी गगवाल रेनवाल, श्री अजितप्रसाद जी जैन ठेकेदार देहली, श्रीमती सुदर्शन देवी जी छाबडा जयपुर, प्रोफेसर अमृतलालजी जैन दर्शनाचार्य एव डा० दरबारीलाल जी कोठिया वाराणसी, श्रीमती कोकिला सेठी जयपुर, श्रीमान् हनुमान बक्सजी गगवाल कुली, प० अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। योजना की क्रियान्विति, प्रथम भाग के लेखन एव प्रकाशन एव अकादमी के प्रारम्भिक सदस्य बनने के अभियान मे कोई १॥ वर्ष निकल गया और हमारा सबसे पहिला भाग जून १६७८ में ज्येष्ठ शुक्ला पचमी के शुभ दिन प्रकाशित होकर सामने आया। उस समय तक अकादमी के करीब १०० सदस्यो की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी थी।

"महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एव भट्टारक त्रिभूवनकीर्ति" के प्रकाशित होते ही अकादमी की योजना मे और भी अधिक महानुभावो का सहयोग प्राप्त होने लगा। जुलाई १६७६ मे इसका दूसरा भाग "कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि" प्रकाशित हुआ जिसका विमोचन एक भव्य समारोह मे हिन्दी के वरिष्ठ विद्वान् डा० सत्येन्द्र जी द्वारा किया गया गया : प्रस्तुत भाग मे ब्रह्म बूचराज, ठक्कुरसी, छीहल, गारवदास एव चतरूमल का जीवन परिचय, मूल्याकन एव उनकी ४४ रचनाओ के पूरे मूल पाठ दिये गये हैं।

अकादमी का तीसरा भाग महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एव कृतित्व का विमोचन मई ८० मे पाचवा (राजस्थान) मे आयोजित पच कल्याण प्रतिष्ठा समारोह मे पूज्य क्षु० सिद्धसागर जी महाराज लाडनूं वालो ने किया था। इस भाग के लेखक डा० प्रेमचन्द रावका है जो युवा विद्वान हैं तथा साहित्य सेवा मे जिनकी विशेष रूचि हैं। तीसरे भाग का समाज मे जोरदार स्वागत हुआ और सभी विद्वानो ने उसकी एव अकादमी के साहित्य प्रकाशन योजना की सराहना की।

अकादमी का चतुर्थ भाग "भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र" पाठको के समक्ष प्रस्तुत है। इस भाग मे सवत् १६३१ से १७०० तक होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र के अतिरिक्त ६६ अन्य हिन्दी कवियो का भी परिचय एव मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है। यह युग हिन्दी का स्वर्णयुग रहा और उसमे कितने ही ख्याति प्राप्त विद्वान हुये। महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द, ब्रह्म गुलाल, ब्रह्म रायमल्ल, भट्टारक, अभयचन्द, समयसुन्दर जैसे कवि इसी युग के कवि थे।

पचम भाग

अकादमी का पचम भाग आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर "प्रेस मे प्रकाशनार्थ दिया जा चुका है। तथा जिसके नवम्बर ८१ तक प्रकाशन की सभावना

है। सोमकीर्ति एवं यशोधर दोनो ही १६ वीं शताब्दि के उद्भट् विद्वान तथा रास्थानी के कट्टर नमर्थक थे।

सम्पादन में सहयोग

अकादमी के प्रत्येक भाग के सम्पादन मे लेखक एव प्रधान सम्पादक के अति रिक्त तीन–तीन विद्वानो का महयोग लिया जाता है। प्रस्तुत भाग के सम्पादक तीर्थंकर के यशस्वी सम्पादक डा० नेमीचन्द जैन इन्दौर, युवा विद्वान डा० भाग चन्द भागेन्दु दमोह एव उदीयमान विदुषी श्रीमती सुशीला वाकलीवाल हैं। इस भाग के सम्पादन मे तीनो विद्वानो का जो सहयोग मिला है, उनके लिए हम उनके पूर्ण आभारी हैं। अब तक अकादमी को जिन विद्वानो का मम्पादन मे सहयोग प्राप्त हो चुका है उनमे डा० सत्येन्द्र जी, डा० दरबारीलालजी कोठिया वाराणसी, प० अनूप चन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर, डा० ज्योतिप्रसाद जी लखनऊ, डा० हीरालाल जी महेश्वरी जयपुर, प० मिलापचन्द जी शास्त्री जयपुर, डा० नरेन्द्र भानावत जयपुर, प० भवरलाल जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय हैं।

नवीन सदस्यो का स्वागत

अब तक अकादमी के ३०० सदस्य वन चुके है। जिनमे ७० सचालन समिति मे तथा २३० विशिष्ट सदस्य हैं। तीसरे भाग के प्रकाशन के पश्चात् सम्माननीय श्री रमेशचन्द्र जी सा० जैन पी०एस० मोटर कम्पनी देहली एव आदरणीय श्री वीरेन्द्र हेगडे धर्मस्थल ने अकादमी सरक्षक वनने की कृपा की है। श्री रमेशचन्दजी उदीयमान युवा उद्योगपति हैं। ये उदारमना है तथा समाज सेवा में खूब मनोयोग से कार्य करते है। समाज को उनसे विशेष आशाए हैं। उन्होंने अकादमी का सरक्षक बन प्राचीन साहित्य के प्रकाशन मे जो योग दिया है उसके लिये हम उनके पूर्ण आभारी हैं। अकादमी के चौथे सरक्षक धर्मस्थल के प्रमुख धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्र हेगडे है। जो बीसवी शताब्दि के अभिनव चामुण्डराय हैं, तथा समाज एव साहित्य की सेवा करने मे जिनकी विशेष रुचि रहती है। जो दक्षिण एव उत्तर भारत की जैन समाज के लिये सेतु का कार्य करते हैं। उनके सरक्षक बनने से अकादमी गौरवान्वित हुई है।

इसी तरह गया (विहार) के प्रमुख समाज सेवी श्री रामचन्द्रजी जैन ने उपाध्यक्ष बन कर साहित्य प्रकाशन मे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनके विशेष आभारी है। इनके अतिरिक्त सगीतरत्न श्री ताराचन्दजी प्रेमी फिरोजपुर झिरका, श्री हीरालालजी रानीवाले जयपुर, राजस्थानी भाषा समिति के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री नाथूलाल जी जैन एडवोकेट श्री नन्दकिशोर जी जैन जयपुर, प० गुलाब

चन्द जी दर्शनाचार्य जदलपुर ने सचालन समिति का सदस्य बन कर अकादमी के के कार्य सचालन मे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम, इन सभी महानुभावो के आभारी है। इसी तरह करीव ५० से भी अधिक महानुभावो ने अकादमी की विशिष्ट सदस्यता स्वीकार की है। उन सब महानुभावो के भी हम पूर्ण आभारी है। आशा है भविष्य में सदस्य वनाने की दिशा मे और भी तेजी आवेगी जिससे पुस्तक प्रकाशन रहे कार्य में और भी गति अधिक आ सके।

सहयोग

अकादमी के सदस्य वनाने मे वैसे तो सभी महानुभावो का सहयोग मिलता रहता है लेकिन यहा हम श्री ताराचन्द जी प्रेमी के विशेष रूप से आभारी है जिन्होंने अकादमी के साहित्यिक गतिविधियो मे रूचि लेते हुए नवीन सदस्य वनाने के अभियान मे पूरा सहयोग दिया है। इनके अतिरिक्त प० मिलापचन्द जी शास्त्री जयपुर, डा० दरवारीलाल जी कोठिया वाराणसी प० सत्यन्धर कुमार जी सेठी उज्जैन, डा० भागचन्द जी भागेन्दु दमोह आदि का विशेष सहयोग प्राप्त होता रहता है जिनके हम विशेष रूप से आभारी हैं।

सन्तो का शुभाशीर्वाद

अकादमी को सभी जैन सन्तो का शुभाशीर्वाद प्राप्त हैं। परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज, एलाचार्य श्री विद्यानन्दजी महाराज, आचार्य कल्प श्री श्रुतसागर जी महाराज, १०८ मुनि श्री वर्धमान सागर जी महाराज, पूज्य क्षुल्लक श्री सिद्धसागर जी महाराज लाडनू वाले, भट्टारक जी श्री चारूकीर्ति जी महाराज मूडविद्री एव श्रवणवेलगोला आदि सभी सन्तों का शुभाशीर्वाद प्राप्त है।

अन्त मे समाज के सभी साहित्य प्रेमियो से अनुरोध है कि वे श्री श्री महावीर ग्रथ अकदमी के स्वय सदस्य बन कर तथा अधिक से अधिक सख्या मे दूसरों को सदस्य वनाकर हिन्दी जैन साहित्य के प्रकाशन मे अपना योगदान देने का कष्ट करें।

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल
निदेशक एव प्रधान सपादक

कार्याध्यक्ष की कलम से

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के चतुर्थ भाग—भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र को माननीय सदस्यो एव पाठको के हाथो मे देते हुए मुझे अतीव प्रसन्नता है। प्रस्तुत भाग मे प्रमुख दो राजस्थानी कवियो का परिचय एव उनकी कृतियो के पाठ दिये गये हैं लेकिन उनके साथ साठ से भी अधिक तत्कालीन कवियो का भी सक्षिप्त परिचय दिया गया है। इससे पता चलता है कि सवत् १६३१ से १७०० तक जैन कवियो ने हिन्दी मे कितने विशाल साहित्य की सर्जना की थी। प्रस्तुत भाग के प्रकाशन से इतने अधिक कवियो का एक साथ परिचय हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिये एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जावेगी। इस प्रकार जिस उद्देश्य को लेकर अकादमी की स्थापना की गई थी उसकी ओर वह आगे बढ रही है। सन् १६८१ के अन्त तक इसके अतिरिक्त दो भाग और प्रकाशित हो जावेंगे ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। २० भाग प्रकाशित होने के पश्चात् सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के अधिकाश अज्ञात, अल्प ज्ञात एव महत्त्वपूर्ण जैन कवि प्रकाश मे ही नही आवेंगे किन्तु सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास भी तैयार हो सकेगा जो अपने आप मे एक महान् उपलब्धि होगी।

प्रस्तुत भाग के लेखक डा० कस्तूर चन्द कासलीवाल हैं जो अकादमी के निदेशक एव प्रधान सम्पादक भी हैं। डा० कासलीवाल समाज के सम्माननीय विद्वान् हैं जिनका समस्त जीवन साहित्य सेवा मे समर्पित है। यह उनकी ४१वीं कृति है।

अकादमी की सदस्य सख्या मे निरन्तर वृद्धि हो रही है। तीसरे भाग के प्रकाशन पश्चात् श्रीमान् रमेशचन्द जी सा० जैन देहली ने अकादमी के सरक्षक बनने की महती कृपा की है उनका हम हृदय से स्वागत करते हैं। श्री रमेशचन्द जी समाज एव साहित्य विकास मे जो अभिरुचि ले रहे हैं अकादमी उन जैसा उदार सरक्षक पाकर स्वय गौरवान्वित है। धर्मस्थल के आदरणीय श्री डी० वीरेन्द्र हेगडे ने भी अकादमी का सरक्षक बन कर हमें जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनका अभिनन्दन करते हैं। इसी तरह गया निवासी श्री रामचन्द्रजी जैन ने उपाध्यक्ष बन कर अकादमी को जो सहयोग दिया है हम उनका भी हार्दिक स्वागत करते हैं। सचालन समिति के नये सदस्यो मे सर्वश्री ताराचन्द जी सा० फिरोजपुर झिरका, महेन्द्रकुमार जी पाटनी जयपुर, हीरालाल जी रानीवाला जयपुर, नाथूलाल

जी जैन ऐडवोकेट जयपुर एव श्री नन्दकिशोर जी सा० जैन जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। हम सभी का हार्दिक स्वागत करते हैं। इसी तरह करीव ४० महानुभाव अकादमी के विशिष्ट सदस्य बने है। सभी माननीय सदस्यो का मैं हार्दिक स्वागत करता हू। इस तरह ८०० सदस्य वनाने की हमारी योजना मे हमे ३५ प्रतिशत सफलता मिली है। मैं आशा करता हूँ कि भविष्य मे अकादमी को समाज का और भी अधिक सहयोग मिलेगा।

हम चाहते हैं कि अकादमी के करीव १०० सेट देश-विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयो के हिन्दी विभागाध्यक्षो को नि शुल्क भेंट किये जावें जिससे उन्हे जैन कवियो द्वारा निवद्ध साहित्य पर शोध कार्य कराने के लिये सामग्री मिल सके। इसलिये मैं समाज के उदार एव साहित्यप्रेमी महानुभावो से प्रार्थना करूगा कि वे अपनी ओर से पांच-पांच सेट भिजवाने की स्वीकृति भिजवाने का कष्ट करें।

प्रस्तुत भाग के माननीय सम्पादको—डा० नेमीचन्द जी जैन इन्दौर, डा० भागचन्द जी भागेन्दु दमोह एव श्रीमती सुशीला जी वाकलीवाल जयपुर का भी आभारी हूँ जिन्होंने प्रस्तुत भाग का सम्पादन करके उसके प्रकाशन मे अपना अमूल्य सहयोग दिया है। अन्त मे मैं अकादमी के सरक्षको श्री अशोककुमार जी जैन देहली, पूनमचन्द जी सा० जैन भरिया एव रमेशचन्द जी सा० जैन देहली, अध्यक्ष माननीय सेठ कन्हैय लाल जी सा० जैन मद्रास, सभी उपाध्यक्षो, सचालन समिति के सदस्यो एवं विशिष्ट सदस्यो का आभारी हूँ जिनके सहयोग से अकादमी द्वारा साहित्यिक कार्य सम्भव हो रहा है। डा० कासलीवाल सा० को मे किन शब्दो मे धन्यवाद दूँ, वे तो इसके प्राण है और जिनकी सतत साधना से यह कष्ट साध्य कार्य सरल हो सका हैं।

८ लोवर राउडन स्ट्रीट
कलकत्ता २०

रतनलाल गंगवाल

संपादकीय

अब यह लगभग निर्विवाद हो गया है कि हिन्दी-साहित्य के विकास का अध्ययन/अनुसंधान जैन साहित्य के अध्ययन के बिना संभव नहीं है। इस शताब्दी के तीसरे दशक मे जब आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास लिख रहे थे तब, और आज जब भी कोई साहित्येतिहास के लेखन का प्रयत्न करता है तब उसके लिये यह असभव ही होता है कि वह जैन साहित्य की अनदेखी करे और इस क्षेत्र में अपने कदम आगे रखे। राजस्थान कहने को मरुभूमि है, किन्तु यहाँ रस की जो अजस्र/मधुर धारा प्रवाहित हुई है, वह अन्यत्र देखने को नही मिलती। जैन साहित्य की दृष्टि से राजस्थान के शास्त्र-भण्डार बहुत समृद्ध माने जाते हैं। इन भण्डारो मे से बहुत सारे ग्रन्थो को तो सामने लाया जा सका है, किन्तु बहुत सारे हमारी असावधानी/प्रमाद के कारण नष्ट हो गये हैं। यह नष्ट हुआ या विलुप्त साहित्य हमारे सांस्कृतिक और आँचलिक रिक्त की दृष्टि से कितना महत्त्वपूर्ण था, यह कह पाना तो सभव नही है, किन्तु जो भी पर्त-दर-पर्त उघडता गया है, उससे ऐसा लगता है कि उसके बने रहने से हमे हिन्दी साहित्य के विकास की कई महत्त्व की कडियाँ मिल सकती थी। इस दृष्टि से डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल का प्रदेय उल्लेखनीय और अविस्मरणीय है। जैसे कोई नये टापू या द्वीप की खोज करता है और वहाँ के ब्यौरे खनिज-वन की जानकारी देता है ठीक वैसे ही डॉ० कासलीवाल जैसे मनीषी ने जैन शास्त्रागारों में जा-जा कर वहाँ की दुर्लभ/अस्तव्यस्त/बहुमूल्य पाण्डुलिपियो को सूचीबद्ध किया है और दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी से प्रकाशित कराया है। ये सूचियां न केवल जैन साहित्य के लिए अपितु सपूर्ण भारतीय वाङ्मय के लिए बहुमूल्य धरोहर है। पूरा काम इतनी भारी-भरकम है कि इसे किसी एक या दो आदमियो ने सपन्न किया है इस पर एकाएक भरोसा करना सभव नही होता तथापि यह हुआ है और बडी सफलता के साथ हुआ है। अत हम सहज ही कह सकते हैं कि डा० कासलीवाल की भूमिका जैन साहित्य और हिन्दी साहित्य के मध्य सीधे सबन्ध बनाने की ठीक वैसी ही है जैसी कभी वास्कोडिगामा की रही थी, जिसने 15 वी सदी के अन्त में भारत और यूरोप को समुद्री मार्ग से जोड़ा था।

हिन्दी साहित्य की भाँति ही हिन्दी भाषा की सरचना तथा उसके विकास का अध्ययन भी प्राकृत/अपभ्रंश कीअनुपस्थिति में करना संभव नही है। ये दोनो भाषा-

ईतर जैन साहित्य से सबधित हैं। इनके अध्ययन का मतलब होता है हिन्दी की भाषिक पृष्ठभूमि को समझने का वस्तुनिष्ठ प्रयास। अभी इस दृष्टि से हिन्दी भाषा का व्युत्पत्तिक अध्ययन शेष है, जिसके अभाव में उसके बहुत सारे शब्दो को देशज आदि कह कर अव्याख्यायित छोड दिया जाता है *, किन्तु जब प्राकृत/अपभ्रंश /राजस्थानी के विविध व्यावर्तनो का उनमे उपलब्ध जैन साहित्य का, शैली/भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन किया जायेगा और कुछ प्रशिक्षित व्यक्ति इस दायित्व को सपन्न करेंगे तब हम यह जान पायेंगे कि एक निवृत्तमूलक चिन्तन–परम्परा ने प्रवृत्तिपरक इलाके को क्या कितना योग दिया है ? किस तरह हिन्दी–साहित्य के विधा–वैविध्य का विकास हुआ और किस तरह हिन्दी-भाषा अभिवृद्ध हुई। इतना ही नही बल्कि मानना पडेगा कि द्राविड भाषाओ के विकास में भी जैन रचनाकारो ने–विशेषतः साधुओं और भट्टारको ने–विस्मयजनक योगदान किया था। एक तो हम इन सारे तथ्यो की सूक्ष्म छानबीन कर नही पाये, हैं, दूसरे कई बार हम अनुसधान के क्षेत्र मे भरपूर वस्तुनिष्ठा से काम करने/निष्कर्ष लेने मे चूक जाते हैं। हमारे इस सलूक से साहित्य के विकास को भलिभाँति समझने मे कठिनाई होती है।

जहाँ तक इतिहास का सबध है उसके सामने कोई घटना इस या उस जाति अथवा इस या उस सप्रदाय की नही होती। उसका सीधा सरोकार घटना के व्यक्तित्व और उसके प्रभाव से होता है, इसलिए जो लोग साहित्य के वस्तून्मुख समीक्षक होते हैं वे किसी एक कालखण्ड को सिर्फ एक अकेला अलहदा कालखण्ड मान कर नही चल पाते वरन् तथ्यो का 'इन डेप्थ' विश्लेषण करते हैं और उनके सापेक्ष सबधो/अन्त सबधो को खोजने का अनवरत यत्न करते है। कोई बीता 'कल' किसी उपस्थित 'आज' की ही परिणति होता है, और कोई प्रतीक्षित 'आज' किसी आगामी 'कल' में से ही जनमता है। आनेवाले कल की खोज–प्रक्रिया बडी कठिन होती है। एक तो जब तक हम वर्तमान को सापेक्ष नही देखते तब तक आगामी कल की सही अगवानी नही कर पाते, दूसरे हम अपने अतीत यानी विगत कल की ठीक से व्याख्या भी नही कर पाते। प्राय हमने माना है कि ये तीनो परस्पर विच्छिन्न चलते हैं, किन्तु दिखाई देते हैं कि ये वैसा कर रहे हैं, कर वैसा सकते नही हैं। कल/आज/कल एक तिकोन है बल्कि कहे, समत्रिभुज है जिसकी आधार-भुजा आज है। जो कौम अपने 'आज' को नही समझ पाती, वह न तो अपने विगत 'कल' मे से कुछ ले पाती है और न ही प्रतीक्षित 'कल' को कोई स्पष्ट आकार दे पाती है।

धर्म/दर्शन/सस्कृति ही ऐसे आधार हैं, जो आगामी कल को एक सश्लिष्ट आकृति प्रदान करने मे समर्थ होते हैं। साहित्य अक्षर के माध्यम से आगामी कल

---

* राजस्थान के शास्त्र–भण्डारो की ग्रन्थ–सूची, चतुर्थ भाग, डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ 4.

को आज में रूपान्तरित करता है। मान कर चलें कि जो कृति आज आपको एक वेष्टन मे अस्त-व्यस्त मिल रही है, उसका भी कभी कोई आज था और वह भी कभी किसी शिल्पी के भावना-गर्भ मे कोई प्रतीक्षित कल रही थी। कितना रोमांचक है यह सब ! ! ऐसी हजारो हजार कृतियो को छुआ है डा० कासलीवाल ने और जाना है उनके "आज" को अपनी सवेदनशील अंगुलियो के जरिये' फिर भी कहना होगा कि अभी काम अधूरा है और उसकी परिपूर्णता के लिए किसी ऐसे समीक्षक/पाठालोचक की आवश्यकता है, जो सवेदनशील होने के साथ ही एक निर्मम भाषाविज्ञानी भी हो - ऐसा, जो तथ्य को तथ्य मानने के अलावा और कुछ मानने को ही सहज तैयार न हो। सापेक्ष दृष्टि से अभी साहित्य/भाषा के विविध स्तरीन अन्त सबधो के विश्लेषण/समीक्षण की जरूरत से भी हम मुंह नही मोड सकते।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर ने इस दिशा मे मात्र रचनात्मक कदम ही नही उठाये हैं अपितु 3 बहुमूल्य ग्रन्थो के प्रकाशन द्वारा कुछ ऐसे ठोस आधार प्रस्तुत कर दिये हैं, जो भारतीय वाङ्मय को अधिक गहराई मे/से समझने की दिशा मे बहुत उपयोगी भूमिका निभायेंगे। जब तक चारो ओर से हमारे पास इस तरह की सामग्री एकत्र/आकलित नही हो जाती तब तक कोई निश्चित शक्ल हम इतिहास को नहीं दे सकते। इतिहास भी एक 'जेनरेटिव्ह' अस्तित्व है। इस सदर्भ मे डा० कासलीवाल/महावीर ग्रन्थ अकादमी की भूमिका ऐतिहासिक है, और इसलिए अविस्मरणीय है।

हिन्दी/साहित्य का दुर्भाग्य रहा है कि उसका कोई एकीकृत/सश्लिष्ट अध्ययन अभी तक नही हो पाया है। उसके इस अध्ययन को-यदि कही शुरु हुआ भी है तो अंग्रेजी या राजनीति ने छिन्नभिन्न/बाधित किया है और उसे एक धारावाहिक-प्रक्रिया नही बनने दिया है हिन्दी- कोश- -रचना का इतिहास इसका एक जीवन्त उदाहरण है। भारत की लोकभाषाओ का, वस्तुतः, अध्ययन/ अनुसधान जैसा होना चाहिए था' वैसा हो नहीं पाया है और कई दुर्लभ स्रोत अब नष्ट हो गए हैं। आचलिक बोलियो के सुर (टोनेशन) का अध्ययन तो अब इसलिए असभव हो गया है कि इनमे से बहुतो के प्रयोक्ता ही अब नही रहे हैं। लगता है यही हस्र अब हमारी पाण्डुलिपियो का होने वाला है।

हमारे शास्त्र- भण्डारो मे सदियो से सुरक्षित साहित्य भी अब जीर्णोद्धार के लिए उद्ग्रीव/उत्कण्ठित है। डा० कासलीवाल ने तो अभी लिफाफे पर लिखे जाने वाले पतों की सूचियाँ दी हैं, असली पत्र लिखाने का काम तो उनके अकादमी ने शुरु किया है। सूचियाँ मात्र इन्फर्मेशन' हैं, ग्रन्थ-संपादन उनके बाद का सोपान है। अकादमी की मुश्किलें बहुत स्पष्ट है। एक तो लोगों की मनोवृत्ति ग्रन्थो

पर से अपना कब्जा छोडने की नही है, दूसरे उनके साथ अब एक खतरनाक व्यावसायिकता भी जुड गयी हैं। इन/ऐसी कठिनाइयो से जूझते हुए अकादमी ने जो कुछ किया है और जो कुछ वह अपने सीमित साधनो मे करने के लिए सकल्पित है, उससे भारतीय सस्कृति और साहित्य का मस्तक गौरव से ऊँचा उठेगा इतना ही नही बल्कि राजस्थानी/हिन्दी साहित्य समृद्ध भी होगा।

विज्ञान की कृपा से आज ऐसे साधन उपलब्ध है कि हम दुष्प्राप्य पाण्डुलिपियो को अध्ययन के लिए सुरक्षित/ व्यवस्थित प्राप्त कर सकते है, किन्तु मेरी समझ मे अभी ऐसा कोई सुसमृद्ध अनुसधान-केन्द्र जैनो का नही हैं जहाँ सारे ग्रन्थ एक साथ उपलब्ध हो या उनके उपलब्ध कर दिये जाने की कोई कारगर व्यवस्था हो ताकि कोई शोधार्थी बिना किसी बाधा/असुविधा के कोई तुलनात्मक अध्ययन कर सके। श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, हमे विश्वास है, जल्दी ही उस अभाव को पूरा करेगी और हमारे इस स्वप्न को यथार्थ मे बदल सकेगी।

प्रस्तुत ग्रन्थ अकादमी का चतुर्थ प्रकाशन है। प्रथम मे महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एव भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति, द्वितीय मे कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि और तृतीय में महाकवि ब्रह्म जिनदास, के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर विचार किया गया है। ये तीनो ग्रन्थ क्रमश 1978, 79, और 1980 मेंप्रकाशित हुए है। इन ग्रन्थो में जो बहुमूल्य सामग्री सकलित/सपादित है, उससे साहित्य का भावी अध्येता/ अनुसधित्सु अनुगृहीत हुआ है। प्रस्तुत ग्रन्थ में भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर व्यापक/गहन अभिमन्थन हुआ है। कहा गया है कि 1574-1643 ई० का समय भारतीय इतिहास मे शान्ति समृद्धि का था। इस समय भट्टारको ने साहित्य/समाज-रचना के क्षेत्र मे एक विशिष्ट भूमिका का निर्वाह किया। भ रत्नकीर्ति गुजरात के थे, किन्तु उन्होने हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा की। उनके प्रमुख शिष्य कुमुदचन्द्र हुए जिन्होंने जैन साहित्य/धर्म को तो समृद्ध किया ही, किन्तु हिन्दी साहित्य को भी विभूषित किया। ग्रन्थान्त मे उनकी कृतियाँ सकलित हैं, जिनसे उन दिनो के हिन्दी-रूप पर तो प्रकाश पडता ही है दोनो गुरु-शिष्य की साहित्य सेवाओ का भी भलीभाति द्योतन हो जाता है। कुल मिलाकर महावीर ग्रन्थ अकादमी जो ऐतिहासिक कार्य कर रही है नागरी प्रचारिणी सभा' वाराणसी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग; और हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद जैसी साधन-सपन्न संस्थाओ के समान, उससे उसकी सुगध दिगदिगन्त तक फैलेगी और उसे समाज का/सरकार का/जन-जन का सहयोग सहज ही मिलेगा।

—डा० नेमीचन्द्र जैन

सपादक "तीर्थकर"

कृते सम्पादक मडल

इन्दौर,
21 सितम्बर 1981

लेखक की ओर से

राजस्थानी एव हिन्दी साहित्य इतना विशाल है कि सैकडो वर्षों की साधना के पश्चात् भी उसके पूरे भण्डार का पता लगाना कठिन है। उसकी जितनी अधिक खोज की जाती है, साहित्य सागर मे मे उतने ही नये नये रत्नो की प्राप्ति होती रहती है। जैन कवियो की कृतियो के सम्बन्ध मे मेरी यह धारणा और भी सही निकलती है। राजस्थान, मध्यप्रदेश, देहली, एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे अब भी ऐसी सैकडो रचनाओ की उपलब्धि होने की सम्भावना है जिनके सम्बन्व मे हमे नाम मात्र का भी ज्ञान नही है। पता नही वह दिन कब आवेगा जब हम पूरी तरह से ऐसी कृतियो की खोज कर चुके होगें।

चतुर्थ भाग मे सवत् १६३१ से १७०० तक की अवधि मे होने वाले जैन कवियो की राजस्थानी कृतियो को लिया गया है। ये ७० वर्ष हिन्दी जगत के लिये स्वर्ण युग के समान थे जब उसे महाकवि सूरदास, तुलसीदास, बनारसीदास, रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, ब्रह्म रायमल्ल जैसे कवि मिले। जिनका समस्त जीवन हिन्दी विकास के लिये समर्पित रहा। उन्होंने जीवन पर्यन्त लिखने लिखाने एव उसका प्रचार करने को सबसे अधिक महत्त्व दिया तथा नवीन काव्यो के सृजन के युग का निर्माण किया।

रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र इसी युग के कवि थे। वे दोनो ही भट्टारक पद पर सुशोभित थे। समाज के आध्यात्मिक उपदेष्टा थे। स्थान स्थान पर विहार करके जन जन को सुपथ पर लगाना ही उनके जीवन का ध्येय था। स्वय का एक बडा सघ था जो शिष्य प्रशिष्यो से युक्त था। लेकिन इतना सब होते हुये भी उनके हृदय मे साहित्य सेवा की प्यास थी और उसी प्यास को बुझाने मे वे लगे रहते थे। जब देश मे भक्ति रस की धारा बह रही हो। देश की जनता उसमे झूम रही हो तो वे कैसे अपने आपको अछूता रख सकते थे इसलिये उन्होंने भी समाज मे एक नये युग का सूत्रपात किया। राधा कृष्ण की भक्ति गीतो के समान नेमि राजुल के गीतो का निर्माण किया और उनमे इतनी अधिक सरलता, विरह प्रवणता एव करुण भावना भर दी कि समाज उन गीतो को गाकर एक नयी शक्ति का अनुभव करने लगा। जैन सन्त होते हुए भी उन्होंने अपने गीतो मे जो दर्द भरा है, राजुल की विरह वेदना एव मनोदशा का वर्णन किया है। वह सब उनकी काव्य प्रतिभा का परिचायक है। जब राजुल मन ही मन नेमि से प्रार्थना करती है तथा एक घडी के

लिये ही सही, आने की कामना करती है तो उस समय उसकी तडफन सहज ही मे समझ मे आ सकती है। रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल से सम्बन्धित कृतिया लिख कर उस युग मे एक नयी परम्परा को जन्म दिया। उन्होने नेमिनाथ का बारहमासा लिखा, नेमिनाथ फाग लिखा, नेमीश्वर हमची लिखी और राजुल की विरह वेदना को व्यक्त करने वाले पद लिखे।

लेकिन भट्टारक कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल के अतिरिक्त और भी रचनायें निबद्ध कर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया। उन्होंने 'भरत बाहुबली छन्द' लिख कर पाठको के लिये एक नये युग का सूत्रपात किया। भरत–बाहुबलि छन्द वीर रस प्रधान काव्य है और उसमे भरत एवं बाहुबली दोनो की वीरता का सजीव वर्णन हुआ है। इसी तरह कुमुदचन्द्र का ऋषभ विवाहलो है। जिसमे आदिनाथ के विवाह का बहुत सुन्दर वर्णन दिया गया है। उस युग मे ऐसी कृतियो की महती आवश्यकता थी। वास्तव मे इन दोनो कवियो की साहित्य सेवा के प्रति समस्त हिन्दी जगत सदा आभारी रहेगा।

इन दोनो सन्त कवियो के समान ही उनके शिष्य प्रशिष्य थे। जैसे गुरु वैसे ही शिष्य। इन्होंने भी अपने गुरु की साहित्य रुचि को देखा, जाना और उसे अपने जीवन मे उतारा। ऐसे शिष्य कवियो मे भट्टारक अभयचन्द्र, शुभचन्द्र, गणेश, ब्रह्म जयसागर, श्रीपाल, सुमतिसागर एव सयमसागर के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इन कवियो ने अपने गुरु के समान अन्य विषयक पद एव लघु काव्यो के निर्माण मे गहरी रुची ली। साथ मे अपने गुरु के सम्बन्ध मे जो गीत लिखे वे भी सब हिन्दी साहित्य के इतिहास मे निराले हैं। वे ऐसे गीत हैं जिनमे इतिहास एव साहित्य दोनो का पुट है। इन गीतो मे रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, एव शुभचन्द के बारे मे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री मिलती है। ये शिष्य प्रशिष्य भट्टारको के साथ रहते थे और जैसा देखते वैसा अपने गीतो में निबद्ध करके जनता को सुनाया करते थे। प्रस्तुत भाग मे ऐसे कुछ गीतो को दिया गया है।

भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र एव शुभचन्द के सम्बन्ध मे लिखे गये गीतो से पता चलता है कि उस समय इन भट्टारको का समाज पर कितना व्यापक प्रभाव था। साथ ही समाज रचना मे उनका कितना योग रहता था। वे आध्यात्मिक गुरु थे। धार्मिक क्रियाओ के जनक थे। वे जहा भी जाते धार्मिक उत्सव आयोजित होने लगते और एक नये जीवन की धारा बहने लगती। मगलगीत गाये जाते, तोरण और वन्दनवार लगाये जाते। उनके प्रवेश पर भव्य स्वागत किया जाता। और ये जैन सन्त अपनी अमृत वाणी से सभी श्रोताओ को सरोबार कर देते। सच ऐसे सन्तो पर किस समाज को गर्व नही होगा

हिन्दी जैन कवियो की साहित्यिक सेवा का हिन्दी जगत के सामने प्रस्तुत करने के लिये जितना अधिक व्यापक अभियान छेडा जावेगा हिन्दी के विद्वानो, शोधार्थियो एव विश्व विद्यालयो मे उतना ही अधिक उनका अध्ययन हो सकेगा। इन कवियो की साहित्यिक सेवाओ के व्यापक प्रचार की दृष्टि से साहित्यिक गोष्ठिया होना आवश्यक है जिसमे उनके कृतित्व पर खुल कर चर्चा हो सके साथ ही मे विभिन्न कवियो से उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके।

भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र आदि कवियो की रचनायें राजस्थान के विभिन्न भण्डारो मे सग्रहीत हैं। जिनमे ऋषभदेव, डूगरपुर, उदयपुर, जयपुर, अजमेर, आदि के शास्त्र भण्डार उल्लेखनीय हैं। छोटी रचनायें होने से उन्हें गुटको अधिक स्थान मिला है। जो उनकी लोकप्रियता का द्योतक है। तत्कालीन समाज मे इनका व्यापक प्रचार था, ऐसा लगता है। इसलिये अभी बागड एवं गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे सग्रहीत गुटको की विशेष खोज की आवश्यकता है जिससे उनकी और भी कृतियो की उपलब्धि हो सके।

आभार

पुस्तक के सम्पादन मे डॉ० नेमीचन्द जैन इन्दौर, डॉ० भागचन्द भागेन्दु दमोह एव श्रीमती सुशीला बाकलीवाल जयपुर ने जो सहयोग दिया है उसके लिये मैं उनका पूर्ण आभारी हूँ। इसी तरह मैं प० अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ का भी आभारी हूँ जिनके सहयोग के अभाव मे पुस्तक का लेखन नही हो सकता था।

पुस्तक के कुछ पृष्ठो को जब मैंने परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराजा को जबलपुर मे दिखलाया तो उन्होंने अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करते हुए भविष्य मे इस ओर बढने का आशिर्वाद दिया। इसलिये मैं उनका पूर्ण आभारी हूँ। मै परम पूज्य एलाचार्य विद्यानन्द जी महाराज का भी आभारी हूँ जिन्होंने अपना शुभाशीर्वाद देने की महती कृपा की है। अन्त मे मैं श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के सभी माननीय सदस्यो एव पदाधिकारियो का आभारी हूँ जिन्होंने अकादमी की स्थापना में अपना आर्थिक सहयोग देकर समस्त हिन्दी जैन साहित्य को प्रकाशित करने में अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है।

जयपुर ८-९-८१ डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

विषयानुक्रमणिका

क्र० स०　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　पृष्ठ सख्या

पूर्व पीठिका

स० १६२१ से १७०० तक का काल देश के इतिहास मे शांति एव समृद्धि का काल माना जाता है। इन वर्षों मे तीन मुगल सम्राटो का शासन रहा। स० १६३१ से १६६२ तक अकबर बादशाह ने, स० १६६२ से १६८५ तक जहागीर ने, तथा शेष स० १६८५ से १७०० तक शाहजहा ने देश पर शासन किया। राजनीतिक सगठन, शान्ति तथा सुव्यवस्था की दृष्टि से अकबर का शासन देश के इतिहास मे सर्वथा प्रशसनीय माना जाता है। इसी तरह जहागीर एव शाहजहा के शासन काल में भी देश मे शान्ति एव पारम्परिक सद्भाव का वातावरण बना रहा। अकबर का राज-दरबार कवियो, विद्वानो, सगीतज्ञो एव कला प्रेमियो से अलकृत था। उस युग मे कला की सर्वांगीण उन्नति होने के साथ साथ हिन्दी कविता भी अपने उत्कृष्ट विकास को प्राप्त हुई। महाकवि सूरदास एव तुलसीदास दोनो ही अकबर के शासन काल मे हुए। इनके अतिरिक्त स्वय अकबर के दरबार मे भी कितने ही हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे जिनमे नरहरी, तानसेन एव रहीम के नाम उल्लेखनीय है। हिन्दी के प्रसिद्ध जैन कवि बनारसीदास अकबर एव जहागीर के शासन काल मे हुए। जिन्होने अपनी अर्धकथानक नामक जीवन कथा में दोनो ही बादशाहो के शासन की प्रशसा की है। वे अकबर के शासन से इतने प्रभावित थे कि जब उन्हें बादशाह की मृत्यु के समाचार मिले तो वे स्वय मूर्छित हो गये और सम्राट के प्रति अपनी गहरी सवेदना प्रकट की।

इन ७० वर्षों मे देश में भट्टारक युग भी अपने चरमोत्कर्ष पर था। राजस्थान मे एक ओर भट्टारक चन्द्रकीर्ति तथा भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति के आमेर, अजमेर, नागौर, आदि नगरो में केन्द्र थे तो बागड प्रदेश भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा मे होने वाले भट्टारक सुमतिकीर्ति, गुणकीर्ति तथा भट्टारक लक्ष्मीचन्द की परम्परा मे होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र अपने समय के प्रमुख जैन सन्त माने जाते थे। इन भट्टारको के कारण सारे देश मे एव विशेषत उत्तर भारत मे जैनधर्म की प्रभावना एव उसके सरक्षण को विशेष बल मिला। उस समय के वे सबसे बडे सन्त थे जिनका समाज पर तो पूर्ण प्रभाव था ही किन्तु तत्कालीन शासन पर भी उनका अच्छा प्रभाव था। शासन की ओर से उनके विहार के अवसर पर उचित प्रबन्ध ही नही किया जाता था किन्तु उनका सम्मान भी किया जाता था। शासन

में उनके इस प्रभाव ने भट्टारक सस्था के प्रति जन साधारण मे श्रद्धा एव आदर के भाव जागृत करने मे गहरा योग दिया। इन भट्टारको के प्रत्येक नगर या गाव मे केन्द्र होते थे जिनमें या तो उनके प्रतिनिधि रहते थे या जब कभी वे विहार करते तो वहा कुछ दिन ठहर कर समाज को धार्मिक एव सामाजिक क्षेत्र मे दिशा निर्देशन देते थे। वे धार्मिक विधि विधान कराते एव पच कल्याणक प्रतिष्ठा के प्रतिष्ठाचार्य बन कर उसकी पूरी विधि सम्पन्न कराते। धार्मिक क्षेत्र मे उनका अखण्ड प्रभाव था। समाज के सभी वर्गों में उनके प्रति सहज भक्ति थी। राजस्थान, गुजरात, दिल्ली, हरियाणा, मध्यप्रदेश के अधिकाश क्षेत्र में भट्टारक सस्था का पूर्ण प्रभाव था। वास्तव में समाज पर उनका पूर्ण वर्चस्व था। जब वे किसी ग्राम या नगर मे प्रवेश करते तो सारा समाज उनके स्वागत मे पलक पावडे बिछा देता था और गद्गद् होकर उनकी भक्ति एव अर्चना मे लग जाता था।

१७वी शताब्दी अर्थात् स० १६३१ से १७०० तक का ७० वर्षों का काल हमारे देश में भक्ति काल के रूप मे माना जाता है। उस समय देश के सभी भागो मे भक्ति रस की धारा बहने लगी थी। इस काल में होने वाले महाकवि सूरदास एव तुलसीदास ने भी सारे देश को भक्ति रूपी गगा में डुबोया रखा और अपना सारा साहित्य भक्ति साहित्य के रूप मे प्रसारित किया। एक ओर सूरदास ने अपनी कृतियों में भगवान कृष्ण के गुणो का व्याख्यान किया तो दूसरी ओर तुलसीदास ने राम काव्य लिखकर देश मे भगवान राम के प्रति भक्ति भावना को उभारने मे योग दिया। ये दोनो ही महाकवि समन्वयवादी कवि थे। इसलिये तत्कालीन समाज ने इनको खूब प्रश्रय दिया और राम एवं कृष्ण की भक्ति मे अपने आपको डुबोया रखा।

जैनधर्म निवृत्ति प्रधान धर्म है। उसे त्याग धर्म माना जाता है। इसलिये जैनधर्म मे जितनी त्याग की प्रधानता है उतनी ग्रहण की नही है। उसमें आत्मा को परमात्मा बनाने का लक्ष्य ही प्रत्येक मानव का प्रमुख कर्त्तव्य माना जाता है। तीर्थंकर मानव रूप में जन्म लेकर परम पद प्राप्त करते है उनके साथ हजारो लाखो सन्त उन्ही के मार्ग का अनुसरण कर निर्वाण प्राप्त करके जीवन के अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। इसलिये जैनधर्म मे भक्ति को उतना अधिक उच्च स्थान प्राप्त नही हो सका। यद्यपि अर्हद् भक्ति मे अपार पुण्य की प्राप्ति होती है और फिर स्वर्ग की उत्तम गति मिलती है। ससारिक वैभव प्राप्त होता है लेकिन निर्वाण प्राप्ति के लिये तो भक्ति के स्थान निवृति मार्ग को ही अपनाना पड़ेगा और तभी जाकर ससारिक बन्धनो से मुक्ति मिलेगी।

17वीं शताब्दि में जब सारा उत्तर भारत राम व कृष्ण की भक्ति मे समर्पित

था, तब ऐसे समय मे जैन समाज भी कैसे अछूता रहता। उस समय समाज मे दो धारायें वहने लगी। एक अध्यात्म की और दूसरी भक्ति की। एक धारा के अगुआ थे महाकवि बनारसीदास जिन्होंने समयसार नाटक के माध्यम से अध्यात्म की लहर को जीवन दान दिया। स्थान-स्थान पर अध्यात्म सैलिया स्थापित होने लगी जिनमे बैठ कर आत्म-चर्चा करने मे समाज का युवा वर्ग अत्यधिक रस लेने लगा। सागानेर, आगरा, मुलतान जैसे नगर इन अध्यात्म सैलियो के प्रमुख केन्द्र थे। इन शैलियों मे भेद-विज्ञान, आत्म रहस्य, निमित्त उपादान आदि विषयो पर चर्चायें होती थी। वास्तव मे ये सैलिया सामाजिक सगठन की भी एक प्रकार से केन्द्र विन्दु बन गई थी। दूसरी ओर मेवाड, बागड एव राजस्थान के अन्य नगरो मे अर्हद् भक्ति की गगा भी वहने लगी। तत्कालीन जैन कवि नेमिनाथ को लेकर उसी तरह के भक्ति एव शृगार परक पदो की रचना करने लगे जिस तरह सूरदास एव मीरा के पद रचे गये। इस तरह के साहित्य के निर्माण करने मे भट्टारक रत्नकीर्ति एवं भट्टारक कुमुदचन्द्र का विशेष योगदान रहा। इन्होंने अर्हद् भक्ति की गगा वहायी तथा आगे होने वाले कवियो के लिये दिशा निर्देश का कार्य किया।

हिन्दी जैन साहित्य के लिये सवत् १६३१ से १७०० तक का समय अत्यधिक प्रगतिशील रहा। इस ७० वर्षों मे राजस्थानी एव हिन्दी भाषा के जितने जेन कवि हुए हैं उतने इसके पहिले कभी नही हुए। ढूढाहड, बागड, आगरा, आदि क्षेत्र इनके प्रमुख केन्द्र थे। ऐसे राजस्थानी एव हिन्दी जैन कवियो की सख्या साठ से भी अधिक हैं जिनके नाम निम्न प्रकार हैं —

१ महाकवि वनारसीदास	२ ब्रह्म गुलाल
३ मनराम	४. पाण्डे रूपचन्द
५ हर्षकीर्ति	६ कल्याणकीर्ति
७ ठाकुर कवि	८ देवेन्द्र
९ जैनन्द	१० वर्धमान कवि
११ आचार्य जयकीर्ति	१२ प० भगवतीदास
१३ ब्र० कपूरचन्द	१४ मुनि राजचन्द
१५ पाण्डे जिनदास	१६ पाण्डे राजमल्ल
१७ छीतर ठोलिया	१८. भट्टारक वीरचन्द्र
१९, खेनसी	२० ब्रह्म अजित
२१ आ० नरेन्द्र कीर्ति	२२. ब्र० रायमल्ल
२३ जगजीवन	२४ कुअरपाल
२५ सालिवाहन	२६ सुन्दरदास
२७. परिहानन्द	२८. परिमल्ल

२९ वादिचन्द्र	३० कनककीर्ति
३१ विष्णुकवि	३२. हीरकलश
३३ समयसुन्दर	३४ जिनराज सूरी
३५ दामो	३६ कुशललाभ
३७, मानसिंह भान	३८ उदयराज
३९ श्रीसार	४०. गणि महानन्द
४१ सहजकीर्ति	४२. हीरानन्द मुनीम
४३ हेमविजय	४४ पदमराज
४५ जयराज	४६. भट्टारक रत्नकीर्ति
४७ भट्टारक कुमुदचन्द्र	४८ शातिदास
४९ भ० अभयचन्द	५० भ० शुभचन्द
५१. भ० रत्नचन्द	५२ श्रीपाल
५३. ब्र० जय सागर	५४. गणेश
५५ सुमतिसागर	५६ दामोदर
५७ कल्याण सागर	५८ आणद सागर
५९ विद्यासागर	६० ब्रह्म धर्मरुचि
६१. आचार्य चन्द्रकीर्ति	६२ सयमसागर
६३ धर्मचन्द्र	६४ राघव
६५ मेघसागर	६६ धर्मसागर
६७ गोपालदास	६८ पाण्डे हेमराज

इस प्रकार ७० वर्ष मे ६८ हिन्दी जैन कवियो का होना किसी भी जाति समाज एव देश के लिये गौरव की वस्तु है। वास्तव मे जैन कवियो ने देश मे हिन्दी कृतियो का धुआधार प्रचार किया और हिन्दी भाषा मे अधिक से अधिक लिखने का प्रयास किया। इन कवियो मे महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द, पाण्डे जिनदास, पाण्डे राजमल्ल, भट्टारक रत्नकीर्ति, एव कुमुदचन्द्र तथा श्वेताम्बर कवि समयसुन्दर एव हीरकलश तथा कुशललाभ के अतिरिक्त शेष कवि समाज के लिये एव हिन्दी जगत के लिये अज्ञात से है। एक बात और महत्वपूर्ण है कि भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र जैसे सन्त गुजरात वासी होने पर भी उन्होने हिन्दी को अपनी रचनाओ माध्यम बनाया। यही नही इस भट्टारक परम्परा के अधिकाश विद्वान् शिष्य प्रशिष्यो ने भी इसी भाषा को अपनाया और उसमें पद, गीत जैसे सरल एव लघु रचनाओ को प्राथमिकता दी। भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र की परम्परा मे होने वाले कवियो के अतिरिक्त शेष कवियो का सक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है —

१–महाकवि बनारसीदास

बनारसीदास का जन्म सवत् १६४३ माघ शुक्ला ग्यारस रविवार को हुआ था। इनके पिता का नाम खरगसेन था। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात वे कभी कपड़े का, कभी जवाहरात का और कभी दूसरी चीजो का व्यापार करने लगे। लेकिन व्यापार मे इन्हे कभी सफलता नही मिली। इसीलिये डा० मोतीचन्द ने इन्हे असफल व्यापारी के नाम से सम्बोधित किया है। दरिद्रता ने इनका कभी पीछा नहीं छोड़ा और अन्त तक वे उससे जूझते रहे।

साहित्य की ओर इनका प्रारम्भ से ही झुकाव था। सर्व प्रथम वे शृ गार रस की कविता करने लगे और इसी चक्कर मे वे इश्कबाजी में भी फस गये। अचानक ही इनके जीवन मे मोड आया और उन्होंने शृ गार रस पर लिखी हुई "नवरस पद्यावली" की पूरी पाण्डुलिपि गोमती में बहा दी। इसके पश्चात् वे अध्यात्मी बन गये और जीवन भर अध्यात्मी ही बने रहे। ये अपने समय मे ही प्रसिद्ध कवि हो गये थे और समाज मे इनकी रचनाओ की माग बढने लगी थी।

रचनाए

बनारसीदास की निम्न रचनाए मानी जाती हैं —

१–नाममाला	२–नाटक समयसार
३–बनारसी विलास	४–अर्द्ध कथानक
५–माझा	६–मोह विवेक युद्ध
७–नवरस पद्यावली	

इनमें नवरस पद्यावली के अतिरिक्त सभी रचनायें प्राप्त होती हैं।

१ नाममाला

बनारसीदास ने धनंजय कवि की सस्कृत नाममाला और अनेकार्थकोश के आधार पर इस ग्र थ की रचना की थी। यह पद्य बद्ध शब्द कोश १७५ दोहो में लिखा गया है। इसका रचनाकाल सवत् १६७० आश्विन शुक्ला दशमी है। नाम माला कवि की मौलिक रचना मानी जाती है।

२ नाटक समयसार

कवि की समस्त कृतियो मे नाटक समयसार अत्यधिक महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है। पाण्डे राजमल्ल ने समयसार कलशो पर बालाबोधिनी नामक हिन्दी टीका

लिखी थी। उसी टीका ग्रंथ के आधार पर बनारसीदास ने नाटक समयसार की रचना की थी जिसका रचनाकाल सवत् १६९३ आश्विन शुक्ला त्रयोदशी है। इस ग्रथ मे ३१० दोहा सोरठा, २४५ इकतीसाकवित्त ८६ चौपाई ३७ तईसा सवैया २० छप्पय १८ घनाक्षरी ७ अडिल और ४ कुडलिया इस प्रकार सब मिलाकर ७२७ पद्य हैं। नाटक समयसार मे अज्ञानी की विभिन्न अवस्थाए, ज्ञानी की अवस्थाए, ज्ञानी का हृदय, ससार और शरीर का स्वप्न दर्शन, आत्म जागृति, आत्मा की अनेकता मनकी विभिन्न दौड एव सप्त व्यसनो का सच्चा स्वरूप प्रतिपादित करने के साथ जीव, अजीव, आस्रव, बध, सवर, निर्जरा और मोक्ष इन सात तत्वो का काव्य रूप मे चित्रण किया गया है।

३ बनारसी विलास

इस ग्रथ मे महाकवि बनारसीदास की विभिन्न रचनाओ का सग्रह हैं। यह सग्रह आगरा निवासी जगजीवन द्वारा बनारसीदास के कुछ समय पश्चात् विक्रम सवत १७०१ चैत्र शुक्ला द्वितीया को किया गया था। बनारसीदास की अन्तिम कृति "कर्म प्रकृति विधान" र. का स १७०० चैत्र शुक्ला द्वितीया भी इस विलास में मिलती है। विलास मे सग्रहीत रचनाओ के नाम निम्न प्रकार है—

१ जिनसहस्रनाम, २ सूक्ति मुक्तावलि, ३ ज्ञान बावनी, ४ वेद निर्णय पचासिका, ५ शलाका पुरुषो की नामावली, ६ मार्गणा विचार, ७ कर्म प्रकृति विधान, ८ कल्याण मन्दिर स्तोत्र, ९ साधु वन्दना, १० मोक्ष पैंडी, ११ करम छत्तीसी, १२ ध्यान बत्तीसी, १३ अध्यात्म बत्तीसी, १४ ज्ञान पच्चीसी, १५ शिव पच्चीसी, १६ भवसिन्धु चतुर्दशी, १७ अध्यात्म फाग, १८ सोलह तिथि, १९ तेरह काठिया, २० अध्यात्म गीत, २१ पचपद विधान, २२ सुमति देवी का अष्टोतर शत नाम, २३ शारदाष्टक, २४ नवदुर्गा विधान, २५ नाम निर्णय विधान, २६ नवरत्न कवित्त, २७ अष्ट प्रकारी जिनपूजा, २८ दश दान विधान, २९ दश बोल ३० पहेली, ३१ प्रश्नोत्तर दोहा, ३२ प्रश्नोत्तर माला, ३३ अवस्थाष्टक, ३४ षटदर्शनाष्टक, ३५ चातुर्वर्ण, ३६ अजितनाथ के छद, ३७ शातिनाथ जिनस्तुति, ३८ नवसेना विधान, ३९ नाटक समयसार के कवित्त, ४० फुटकर कवित्त, ४१ गोरखनाथ के वचन, ४२ वैद्य आदि के भेद, ४३ परमार्थ वचनिका, ४४ उपादान निमित्त की चिट्ठी, ४५ निमित्त उपादान के दोहे, ४६ अध्यात्म पद, ४७ परमार्थ हिंडोलना, ४८ अष्टपदी मल्हार, ४९ चार नवीन पद।

उक्त समस्त रचनाओ मे हमे महाकवि बनारसीदास की बहुमुखी प्रतिभा काव्य कुशलता एव अगाध विद्वता के दर्शन होते है। विलास की अधिकाश रचनाए

किसी न किसी रूप मे अध्यात्म विषय से ओत प्रोत हैं। कवि आत्मा और परमात्मा के गुणगान मे इतने विभोर हो गये थे कि उनका प्रत्येक शब्द अध्यात्म की छाया लेकर निकलता था।

४. अर्द्धकथानक

यह कवि द्वारा लिखा हुआ स्वयं का जीवन चरित्र है। कवि ने इसमे अपने ५५ वर्ष की जीवन घटनाओ को सही रूप मे उपस्थित किया है। इसमे सवत् १६९८ तक की सभी घटनायें आ गई है। अर्द्धकथानक मे तत्कालीन शासन व्यवस्था एव सामाजिक स्थिति का भी अच्छा परिचय मिलता है। इसमे सब मिला कर ६७३ चौपई तथा दोहे हैं।

५ मोहविवेक युद्ध

यह एक रूपक काव्य है जिसका नायक विवेक एव प्रति नायक मोह है। दोनो मे विवाद होता है और दोनो ओर की सेवायें सजकर युद्ध करती हैं। अन्त में विवेक की जीत होती है। वर्णन करने की शैली एव नायक प्रतिनायक का सवाद सरल किन्तु गम्भीर अर्थ लिये हुए हैं।

६ मांझा

माझा कवि की ऐसी कृति है जिसका सग्रह बनारसी विलास में नही मिलता है। यह उपदेशात्मक कृति है जिसमें केवल १३ पद्य हैं। कवि ने अपने नाम का प्रथम, चतुर्थ एव तेरहवें पद्य मे उल्लेख किया है। रचना नवीन है इस लिये पाठको के रसास्वादन के लिये पूरी रचना ही दी जा रही है।

माया मोह के तु मतवाला तू विषया विषहारी
राग दोष पयो बान ठगो चार कषायन मारी
कुरम कुटुम्ब दीफा ही फायो मात तात सुत नारी
कहत दास बनारसी, अलप सुख कारने तो नर भव बाजी हारी ॥१॥
तू नर भो हार अकारज कीतो समझन रहील्यो पासा।
मानसे जनम अमोलिक हीरा, हार गवायो खासा।
दसं द्रष्टा ते मिलन दहेला, नर भव गत विचवासा ॥२॥

वासा मिलें न नरभव गति विच, अण र गत विंच जासी।
बाजीगर दे बांदरवा गण, में मैं कर विलवासी।

नही सुजोनि जनम कुल कोइ, जित वल ज्ञाती पासी,
जो जग लेप सोइ घर नचसी, नाव अनेक धरासी ।।३।।

झूठी माया क्या लपटाया ना कर झूठा माणा ।
कूचा कोटि मवासा कब लग, इक दिन परभव जाना ।
जो जम अखे पत्र र ले जावे, चलै न जोर धिगाणा ।
दाम वनारसी दुवे भारवे, जम वस अमर रग न राणा ।।४।।

राणा रक अमर चिर नाही, सब कोई चलन हारा ।
भरी साह परभोले खाली जो जग चलसी सारा ।
जो घरि आसो इक दिन भजसी, आयो अपनी वारा ।
तेनु सोच नही पर भवरा, पाय वैठो पसारा ।।५।।

पाय पसारी वैठ न जूठी, तू भी चलण भाइ ।
मात पिता सुत बन्धु तेरी अन्त न कोई सहाइ ।
सुख विच खावण देस वसेगी, दुख विच कोन धुराइ ।
भली बुरी सगति के लकती, जीतो झोती पाइ ।।६।।

झोली पाय चल्यो कछु करनी, छिनह तूफा जेहा ।
कचन छाँड के कचविडाजो, तू वियारी केहा ।
खोटा खरा परख न जानो लखे न लाहा देता ।
अगे खाली चलीयो ईवे, पिछे आहो जेहा ।।७।।

सुनहो वानी सुतगुरुवानी, तै वसत अमोलह पाइ ।
वीरज 'फोर' भयो वडभागी, कर परमाद न राइ ।
जव लग पथ न साधे, सिवदा, तेडी पुरी पर न काइ ।
चेतन चेत समाचेतन का, सद्गुरु यो समुझाइ ।।८।।

सद्गुरु समुझावे तेरे हित कारन, मूरख समझ कि माही ।
जिन राहे लोक लुटीदा, पवे तिना ही राही ।
राग दोष पयो वान ठगी, रा सीधा उघाही ।।
वहु चिरकाल लुटायो सेया, कुण मूरख समझ कि माही ।।९।।

कदी न समझो सो कित कारन, मोह चमारा लाया
झूठी झूठी मे मे करदा, अन्ध ले जनम गवायो ।
कामिन कनक दुहु सिर तेरे कोई मन्त्र भलेग पाया ।
चुण चुण कनक ते गलीया विच, कमला नाव धराया ।।१०।।

कमला होय केहा सान होया, सुरति नरहा काइ।
चौदह लाख चुरासी जोन विच, दर दर करे सगाइ।
हिक जोके हिक नवे सहेरे, मूरख दी मुरखाइ।
पाप पुण्य कर पोष कवीला, अन्त न कोई सहाइ ॥१३॥

अन्त न कोई सहाइ तेरे, तू क्या पच पच मरदा।
नरक निगोद दु.ख सिर पर, अहमक मूल न मरदा।
जनम जनम विच होय विकाना, हथ विषया देवरदा।
कोई अमर मरवेसी मोढू मेरी मेरी करदा ॥१२॥

गज सुकुमाल सुणी जिणवाणी, सकल विषय तिन त्यागी।
नमसकार कर नेमिनाथ को, भए मसान विरागी।
तन बुसरा आमन वच कामा, मिघा पर तव कागी।
कहत दास बनारसी अन्त गढ, केवली सुनत वुव के रागी ॥१३॥

२ ब्रह्म गुलाल

ब्रह्म गुलाल १७वीं शताब्दि के हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान थे। उनके गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था जो उस समय के विद्वान एव लोकप्रियता प्राप्त भट्टारक थे। ब्रह्म गुलाल को उन्ही की प्रेरणा से काव्य निर्माण मे रुचि जाग्रत हुई और उन्होने "कृपण जगावनहार" जैसी रचना लिखी।[1]

ब्रह्म गुलाल का जन्म रपरी और चन्दवार गाव के समीप टापू नामक गाव मे हुआ था। डा प्रेमसागर जैन ने इस गाव को वर्तमान मे आगरा जिले मे होना लिखा है।[2] इस गाव के तीन ओर नदी बहती है। उस समय वहा का राजा कीरतसिंह था। उसी के राज्य मे ब्रह्म गुलाल के घनिष्ट मित्र मथुरामल रहते थे जो अपने कुल के सिरमौर एव दान देने मे सुदर्शन के समान थे।

ब्रह्म गुलाल भेष बदल कर लोगो को प्रसन्न किया करते थे। एक बार जब उन्होंने सिंह का भेष धारण किया तो वे शेर की क्रिया करने लगे और एक राजकुमार को मार दिया। लेकिन जब राजकुमार के पिता को मुनि बन कर सम्बोधने

---

१ जगभूषण भट्टारक पाइ, करौ ध्यान-अन्तरगति आइ।
ताको सेवगु ब्रह्म गुलाल, कीजो कथा कृपन उर साल

२ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि

गये तो फिर सदा के लिये ही मुनि बन गये। इनकी अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी है।

१ त्रेपन क्रिया[1] (सं १६६५) २ कृपण जगावन हार
३ धर्म स्वरूप ४ समवसरण स्तोत्र[2]
५. जलगालन क्रिया ६ विवेक चौपई
७ कक्का बत्तीसी (१६९५) ८ गुलाल पच्चीसी
९ चौरासी जाति की जयमाल १० वर्धमान समोसरन वर्णन
११ फुटकर कवित्त

उक्त सभी रचनायें राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध होती है। डा प्रमसागर जैन ने इनकी केवल ६ रचनाओ के ही नाम गिनाये हैं।

१ वर्धमान समोसरण वर्णन[3]–यह इनकी प्रथम रचना मालूम देती है जिसको उन्होंने सवत् १६२८ मे हस्तिनापुर मे समाप्त की थी जैसा कि निम्न पाठ मे उल्लेख मिलता है—

सोलहसै अठवीस मे माघ दसै सुदी पेख।
गुलाल ब्रह्म भनि नीत इती जयौ नद को सीख।
कुस देश हथनापुरी राजा विक्रम साह
गुलाल ब्रह्म जिनधर्म जय उपमा दीजे काह

2 त्रेपन क्रिया—इसका दूसरा नाम त्रेपन क्रिया कोश भी मिलता है। इस काव्य मे जैनो की त्रेपन क्रियाओ का वर्णन मिलता है। इसकी रचना स्थान ग्वालियर एव रचना सवत् १६६५ कार्तिक वुदी ३ है। रचना सामान्यत अच्छी है। इसमे कवि ने अपने गुरु भट्टारक जगभूषण का भी उल्लेख किया है।[4]

---

१. ग्रन्थ सूची भाग २ पृष्ठ सख्या ७
२ वही पृष्ठ संख्या ९८
३ शास्त्र भण्डार दिगम्बर जैन मन्दिर वैर (राजस्थान)
४ ए त्रेपन विधि करहु क्रिया भवि पाप समूह चूरे हो
सोरहसै पैसठि सवच्छर कातिग तीज अधियारी हो।
भट्टारक जग भूषण चेला ब्रह्म गुलाल विचारी हो
ब्रह्म गुलाल विचारि वनाई गढ गोपाचल थानै
छत्रपती चहु चक्र विराजै साहि म्लेम मुगलाने॥
प्रशस्ति संग्रह पृष्ठ २२०

३ **कृपण जगावन हार**—इस लघु काव्य मे क्षयकरी एव लोभदत्त दो कृपणो की कथा है जिन्हें जिनेन्द्र -भक्ति के कारण अपने पूर्व भव में किये हुए दुष्कर्मों से छुटकारा प्राप्त हो गया था। इसकी एक प्रति अलीगज के शातिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है। कवि ने कहा है कि प्रतिमा पूजन पुण्य का निमित्त कारण बनता है उससे आत्मा ज्ञानरूप मे परिणमित होती है यही नहीं उसके दर्शनमात्र से ही क्रोध मान माया लोभ कषाय नष्ट हो जाती हैं।[1]

४ **चौरासी जाति जयमाला**—इसमे चौरासी जातियो का वर्णन दिया हुआ है। इसकी पाण्डुलिपि भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर के गुटका सख्या १०१ में सग्रहीत है। जयमाला का प्रारम्भिक भाग निम्न प्रकार है—

जैन धर्म त्रेपन क्रिया दया धर्म सयुक्त
इश्वाक के कुल वस मे तीन ज्ञान उतपन्न।
भया महोछव नेम को जूनागढ गिरनार
जात चौरासी जैनमत जुरे छोहनी चार॥

५ **कक्का बत्तीसी**—ककारादि बत्तीस पद्यो मे छन्दोवध्द प्रस्तुत रचना सवत् १६९७ मे समाप्त हुई थी। यह शास्त्र भण्डार दि जैन मन्दिर पाटोदियान जयपुर के एक गुटके मे ३०-३४ पृष्ठ पर सग्रहीत है।[2]

इस प्रकार कवि की अधिकाश रचनायें चारित्र धर्म पर जोर देने वाली है। कवि का विस्तृत अध्ययन आगामी किसी भाग मे किया जावेगा।

३ मनराम

मनराम अथवा मन्ना साह १७वी शताब्दी के प्रमुख हिन्दी कवि थे। वे कविवर बनारसीदासजी के समकालीन थे। मनराम विलास के एक पद्य मे उन्होने बनारसीदास का स्मरण भी किया है। उनकी रचनाओ के आधार से यह कहा जा सकता है कि मनराम एक उच्च अध्यात्म-प्रेमी कवि थे। उन्होने या तो अध्यात्म रसकी गगा बहाई या फिर जन साधारण के लिये उपदेशात्मक, अथवा नीति-

---

१ प्रतिमा कारण पुण्य निमित बिनु कारण कारज नहिं मित्त।
प्रतिमा रूप परिणवै आयु, दोषादिक नहीं व्यापै पापु।
क्रोध लोभ माया बिनु मान, प्रतिमा कारण परिणवै ज्ञान।
पूजा करत होई यह भाउ, दर्शन पाए गये कषाउ॥

२ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग–४–पृष्ठ ६७९

वाक्य लिखे हैं। कवि की अब तक अक्षरमाला, वडा कक्का, धर्म-सहेली, वत्तीसी, मनाराम-विलास एव अनेक फुटकर पद आदि रचनाए उपलब्ध हो चुकी है।

कवि हिन्दी के प्रौढ विद्वान थे इसीलिये इन की रचनाए शुद्ध खडी वोली मे मिलती हैं। जान पडता है कि कवि सस्कृत के भी अच्छे विद्वान थे, क्योकि इन रचनाओ मे सस्कृत शब्दो का भी प्रयोग मिलता है और वह भी वडे चातुर्य के साथ।

"मनराम विलास" कवि के स्फुट सवैयो एव छन्दो का सग्रहमात्र है जिनकी सख्या ९६ है। इनके सग्रह कर्त्ता विहारीदास थे। वे लिखते है कि विलास के छन्दो को उन्होने छाट करके तथा शुद्ध करके सगह किये हैं। जैसा कि विलास के निम्न छन्द से जाना जा सकता है—

यह मनराम किये अपनी मति अनुसारि।
वुधजन सुनि कीज्यों छिमा लीज्यो अवै सुधारि ॥९३॥

जुगति पुराणी ढूढ कर, किये कवित्त वनाय।
कछु न मेली गाठिकी, जानहु मन वच काय ॥९४॥

जो इक चित्त पढै परुष, सभा मध्य परवीन।
वुद्धि वढै सशय मिटै, सवै होवे आधीन ॥९५॥

मेरे चित्त मे ऊपजी, गुन मनराम प्रकास।
सोधि वीनए एकठे, किये विहारीदास ॥९६॥

अक्षरमाला

इसमे ४० पद्य है जो सभी उपदेशात्मक हैं। भाव, भाषा एव शैली की दृष्टि से रचना उत्तम कोटि की है। इसकी एक प्रति जयपुर मे ठोलियो के मन्दिर के शास्त्र भण्डार के गुटका सख्या १३१ मे सग्रहीत है। स्वय कवि ने प्रारम्भ में अपनी लघुता प्रकट करते हुए अक्षरमाला प्रारम्भ की है—

मन वच कर या जोडिकैरे वदो सारद माय रे।
गुण अछिर माला कहु सुणो चतुर सुख पाइ रे॥
भाई नर भव पायौ मिनखकौ रे

अन्त मे कवि विना भगवद् भक्ति के हीरा के समान मनुष्य जन्म को यो ही गवा देने पर दु ख प्रकट करता है तथा यह भी कहता है कि इस कृति मे उसने जो

कुछ लिखा है वह स्वय के लिये हैं किन्तु दूसरे भी चाहे तो उससे कुछ शिक्षा ले सकते हैं—

हा हा हासी जिन करै रे, करि करि हासी आनौ रे।
हीरो जनम निवारियो, विना भजन भगवानो रे ॥३७॥

पढै गुणै अर सरदहै रे, मन वच काय जो पी हारे।
नीति गहै अति सुख लहै दुःख न व्यापे ताही रे ॥३८॥
भाई नर भव पायो मिनख को ॥

निज कारण उपदेश मेरे, कीयौ बुधि अनुसार रे
कवियण कारण जिनधरो लीज्यौ भव सुधारी रे।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के आगामी किसी भाग मे दिया जावेगा।

४ पाण्डे रूपचन्द

पाण्डे रूपचन्द १७वी शताब्दि के प्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान थे। कविवर बनारसीदास ने अर्द्धकथानक मे रूपचन्द नाम के चार व्यक्तियो का उल्लेख किया है। एक रूपचन्द के साथ वे अध्यात्म विषय पर चर्चा किया करते थे। दूसरे रूपचन्द से इन्होने गोम्मटसार जीवकांड पढा था। तीसरे रूपचन्द ने सस्कृत मे समवसरण पाठ की रचना की थी तथा चौथे रूपचन्द ने नाटक समयसार की भाषा टीका लिखी थी। इन चारो मे से दूसरे रूपचन्द ही पाण्डे रूपचन्द हैं। कविवर बनारसीदास ने उन्हे अपना गुरु स्वीकार किया है तथा पाण्डे शब्द से अभिहित किया है। पाडे एक उपाधि है जो पडित शब्द का ही विगडा हुआ शब्द है। भट्टारको के शिष्य प्रशिष्य पाडे उपाधि से समाध्त होते थे।

रूपचन्द की अधिकाश रचनाए अध्यात्मपरक है। उनकी कृतियो मे परमार्थी दोहा शतक, गीत परमार्थी, मगलगीत, नेमिनाथरास, खटोलना गीत के नाम उल्लेखनीय है। कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के अगले किसी भाग मे दिया जावेगा।

हर्षकीर्ति

हर्षकीर्ति १७वी शताब्दि के चतुर्थ पाद के कवि थे। ये राजस्थानी सत थे तथा भट्टारको से प्रभावित थे। इन्होने अपनी अधिकाश रचनायें राजस्थानी भाषा

मे निवद्ध की है। चतुर्गतिवेलि इनकी अत्यधिक लोकप्रिय रचना है। इस कृति का दूसरा नाम पचमगीत वेलि भी मिलता है एक अन्य गुटके मे इसका नाम छहलेस्या वेलि भी दिया हुआ है। इसकी रचना सवत् १६८३ की है। नेमिराजुलगीत, नेमीश्वर गीत, मोरडा, कर्म हिन्डोलना, वीस तीर्थंकर जखडी, नेमिनाथ का बारहमासा, पार्श्वनाथ छन्द आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कवि के शास्त्र भडारो में सग्रहीत गुटको मे कितने ही पद भी मिलते हैं जिनका सग्रह कर प्रकाशन होना आवश्यक है। कवि की एक और रचना त्रेपनक्रिया रास मिली है जो इन्दरगढ (कोटा) के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। रास का रचना काल सवत् १६८४ दिया हुआ है।

हर्षकीर्ति का विशेष परिचय कही नही मिलता। लेकिन इनका चादनपुर महावीर जी के सवध मे एक पद मिलता है इसलिये सम्भावना है कि इनका सम्बन्ध आमेर गादी के भट्टारको मे था। "चहु गति वेलि" मे इन्होंने अपने आपको मुनि लिखा है। इनकी रचनायें भक्ति परक एव आध्यात्मिक दोनो ही तरह की है।

६ कल्याणकीर्ति

कल्याणकीर्ति १७वीं शताब्दी के प्रमुख जैन सत देवकीर्ति मुनि के शिष्य थे। कल्याणकीर्ति भीलोडा ग्राम के निवासी थे। वहा एक विशाल जैन मन्दिर था। जिसके बावन शिखर थे और इन पर स्वर्ण कलश सुशोभित थे। मन्दिर के प्रागण मे एक विशाल मानस्तम्भ था। इसी मन्दिर मे वैठकर कवि ने "चारुदत्त प्रवन्ध" की रचना की थी जो संवत् १६९२ आसोज शुक्ला पचमी को समाप्त हुई थी। कवि ने रचना का नाम "चारुदत्तरास" भी दिया है। इसकी एक प्रति जयपुर के दि० जैन मन्दिर पाटोदी के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। प्रति सवत् १७३३ की लिखी हुई है।

चारुदत्त राजानि पुन्यि भट्टारक सुखकर सुखकर सोभागि अति विचक्षण
वादिवारण केशरी भट्टारक श्री पद्मनदि चरण रज सेवि हारि ॥१०॥

ए सहु रे गछनायक प्रणमि करि, देवकीरति मुनि निज गुरु मन्य धरी।
धरि चित चरणे नमि "कल्याण कीरति" इमि भणि।
चारुदत कुमर प्रवन्ध रचना रचिमि आदर घणि ॥११॥

राय देश मध्यि रे भिलोडउ वसि, निज रचनासि रे हरिपुरिन हसी।

---

१ म्हारो रे मन मोरडा तू तो गिरनार्या उठि आय रे।
नेमिजी रस्यो यु कहिज्यो राजमती दुख ये सौसे ॥ म्हारो

हस अमर कुमारनि, तिहा धनपति विलिसए ।
प्राशाद प्रतिमा जिन नुति करि सुकृत सचए ॥१२॥

सुकृति सचिरे व्रत बहु आचरि, दान महोछव रे जिन पूजा करि ।
करि उछव गान गध्रव चद्र जिन प्रसादए ।
वावन सिखर सोहामणा ध्वज कनक कलश विसालए ॥१३॥

मडप मध्यि रे समवसरण सोहि, श्री जिनविंव रे मनोहर मन मोहि ।
मोहि जन मन अति उन्नत मानस्थम्भ विसालए ।
तिहा विजयभद्र विख्यात सुन्दर जिन सासन रक्ष पालए ॥१४॥

तिहा चोमासि के रचना करि सोलवाणगिरे ,१६६२ आसो अनुसरि ।
अनुसरि आसो शुक्ल पचमी श्री गुरुचरण हृदयधरि ।
कल्याणकीरति कहि सज्जन भणो सुणो आदर करि ॥१५॥

दूहा

आदर ब्रह्म सघजीतणि विनयसहित सुखकार ।
ते देखि चारुदत्तनो प्रवघ रच्यो मनोहर ॥१॥

कवि की एक और रचना "लघु वाहुवलि वेलि" तथा कुछ स्फुट पद भी मिले हैं। इसमें कवि ने अपने गुरु के रूप में शान्तिदास के नाम का उल्लेख किया है। यह रचना भी अच्छी है तथा इसमे त्रोटक छन्द का उपयोग हुआ है। रचना का अन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

भरतेश्वर आवीया नाम्यु निज वर शशि जी ।
स्तवन करी इम जपए, हू किकर तु ईस जी ।
ईश तुमनि छोडी राज मझनि आपींउ ।
इम कहीइ मदिर, गया सुन्दर ज्ञान भुवने व्यापीउ ।
श्री कल्याणकीरति सोममूरति चरण सेवक इम भणि ।
शातिदास स्वामी वाहुवलि मरण राखु मझ तह्म तणि ॥१॥

कवि की दूसरी बडी रचना श्रेणिक प्रवन्ध है जिसका रचना काल सवत १७०५ है। जैसा कि रचना का नाम दिया हुआ है यह एक प्रवन्ध काव्य है जिसमे महाराजा श्रेणिक का जीवन चरित्र निबद्ध है। इसकी पाण्डुलिपि शास्त्र भडार दि० जैन मन्दिर फतेहपुर (शेखावटी) मे सग्रहीत है। इसका रचना स्थान वागड देश का

कोट नगर था जहा भगवान आदिनाथ का दि० जैन मन्दिर था जिसमें बैठकर ही कवि ने इसका निर्माण किया था। प्रबन्ध का प्रारम्भिक अंश निम्न प्रकार है।

श्री मूल सघ उदयाचलि, प्रभाचद्र रविराय।
श्री सकलकीरति गुरु अनुक्रमि, नमश्री रामकीरति शुभकाय ॥४॥

तस पद कमल दीवाकर नमू, श्री पदमनदी सुखकार।
वादि वारण केशरि अकलक एह अवतार ॥५॥

नीज गुरु देवकीरति मुनि प्रणमू चित धर नेह।
मडलीक महा श्रेणीकनो प्रबन्ध रचु गुण गेह ॥६॥

+ + + + +

नमी देवकीरति गुरु पाय ॥
जिन देव रे भावि जिन पद्नाभ जाणज्यो।
कल्याण कीरति सूरीवर रच्यो रे ॥
ए श्रेणिक गुण मणिहार ॥
वागड विमल देश शोभतो रे। तिहा कोट नयर सुखकार ॥६॥
धनपति विमल वसे घणा रे। धनवत चतुर दयाल ॥
तिहो आदि जिन भवन सोहामणू रे तपिका तोरण विशाल ॥
उत्सव होयि गावि माननी रे वाजे ढोल मृदग कशाल ॥ जिन भावि ॥
आदर ब्रहमसिंध जी तणोरे। तहा प्रवध रच्यो गुणमाल
सवत सतर पन्तोतरि रे। आसा सुदि त्रीज रवि ॥
ए सांभलि गायि लिखि भावमु रे। ते तहि मगलाचार ॥
जिन देवेरे भावि जिन पद्मनाभ जाणज्यो ॥१३॥

इनके अतिरिक्त बाहुबलिगीत, नेमिराजुलसवाद, आदीश्वर बधावा तीर्थंकर विनती एव पार्श्वनाथ रासो है। पार्श्वनाथ रास का रचनाकाल सवत १६१७ है तथा इसकी पाण्डुलिपि जयपुर के पाण्डे लूणकरण जी के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत हैं।[1]

कवि का विस्तृत मूल्याकन किसी दूसरे भाग मे किया जावेगा।

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग–२–पृष्ठ–७४

७ ठाकुर कवि

साह ठाकुर राजस्थानी कवि थे। अब तक इनकी तीन रचनाए उपलब्ध हुई है जिनके नाम हैं "शातिनाथ चरित, महापुराण कलिका, सज्जन प्रकाश दोहा। इनमे शातिनाथ चरित अपभ्र श काव्य है जो पाच सधियो मे पूर्ण होता है। प्रस्तुत काव्य मे सोलहवें तीर्थ कर शातिनाथ का जीवन चरित वर्णित है। इसका रचना काल सवत् १६५२ भाद्रपद शुक्ला पचमी है। आमेर इसका रचना स्थान है। उस समय आमेर पर राजा मानसिंह एव देहली पर बादशाह अकबर का शासन था।

कवि के पितामह साहु सील्हा और पिता का नाम खेता था। जाति खण्डेलवाल एव गोत्र लुहाडिया था। वे "लुवाउणिपुर" लवाण के निवासी थे। वह नगर जन धन से सम्पन्न था। वहा चन्द्रप्रभस्वामी का मन्दिर था। कवि की धर्मपत्नी गुरुभक्त और गुणग्राहिणी थी। इनके धर्मदास एव गोविन्ददास दो पुत्र थे इनमे धर्मदास विद्याविनोदी एव सब विद्याओ का ज्ञाता था।

ग्रंथकर्ता ने प्रशस्ति में अपनी जो गुरु परम्परा दी है उसके अनुसार वे भट्टारक पद्मनन्दि की आम्नाय मे होने वाले भट्टारक विशालकीर्ति के शिष्य थे।

कवि की दूसरी रचना महापुराण कलिका है जिसमे २७ सधिया है तथा जिसमे ६३ शलाका पुरुष चरित्र वर्णित है। इसका रचना काल सवत् १६५० दिया हुआ है। "सज्जन प्रकाश दोहा" सुभाषित रचना है।

८ देवेन्द्र

यशोधर के जीवन पर सभी भाषाओ मे कितने ही काव्य लिखे गये हैं। राजस्थानी एव हिन्दी मे भी विभिन्न कवियो ने इस कथा को अपने काव्यो का आधार बनाया है। इन्ही काव्यो मे देवेन्द्र कृत यशोधर चरित भी है जिसकी पाण्डुलिपि डूगरपुर के शास्त्र भण्डार मे उपलब्ध हैं। काव्य वृहद् है। इसका रचना काल स १६८३ है। देवेन्द्र विक्रम के पुत्र थे जो स्वय भी सस्कृत एव हिन्दी के अच्छे कवि थे। कवि ने महुआ नगर में यशोधर की रचना समाप्त की थी।

सवत् १६ आाठ त्रीसि आसो सुदी बीज शुक्रवार तो।
रास रच्यो नवरस भर्यो महुआ नगर मझार तो॥

९ जैनन्द

सुदर्शन के जीवन पर महाकवि नयनन्दि ने अपभ्र श मे सवत् ११०० मे

महाकाव्य लिया था। उसी को देख कर जैनन्द ने सवत् १६६३ मे आगरा नगर में प्रस्तुत काव्य को पूर्ण किया था। जैनन्द ने भट्टारक यशकीर्ति क्षेमकीर्ति तथा त्रिभुवनकीर्ति का उल्लेख किया है। इसी तरह वादशाह अकवर एव जहागीर के शासन का भी वर्णन किया है काव्य यद्यपि अधिक वडा नहीं है किन्तु भाषा एव वर्णन की दृष्टि से काव्य अच्छा हैं।

काव्य की छन्द सख्या २०६ है। काव्य के प्रमुख छन्द दोहा, चौपई एव सोरठा है। कवि ने निम्न छन्द लिखकर अपनी लघुता प्रकट की है।

छद भेद पद हो, तो कछु जानें नाहि।
ताकौ कियो न खेद, कथा भई निज भक्ति वस ॥

१० वर्धमान कवि

कवि की रचना वर्धमान रास है जो भगवान महावीर पर प्राचीनतम रास कृति है जिसका रचना काल सवत् १६६५ है। काव्य की दृष्टि से यह अच्छी रचना है। वर्धमान कवि ब्रह्मचारी थे और भट्टारक वादिभूषण के शिष्य थे। रास की एक-मात्र पाण्डुलिपि उदयपुर के अग्रवाल दिगम्बर जैन मन्दिर में संग्रहीत है।

११ आचार्य जयकीर्ति

आचार्य जयकीर्ति हिन्दी के अच्छे कवि थे। इन्होंने भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा मे होने वाले भ रामकीर्ति के शिष्य ब्रह्म हरखा के आग्रह से "सीता शील पताका गुण वेलि" की रचना सवत् १६७४ ज्येष्ठ सुदी १३ बुधवार के दिन समाप्त की थी। स्वय कवि द्वारा लिखी हुई मूल पाण्डुलिपि दि० जैन अग्रवाल मन्दिर उदयपुर मे सग्रहीत है।[1] इसका रचना स्थान गुजरात प्रदेश का कोट नगर था। जहा के आदिनाथ चैत्यालय मे इन्होंने सीताशील पताका गुण वेलि की रचना समाप्त की थी। कवि की अन्य रचनाओ मे अकलकयति रास, अमरदत्तमित्रानन्द रासो, रविव्रत कथा, वसुदेव प्रवन्व, शील सुन्दरी प्रवन्ध, वंकचूलरास के नाम उल्लेखनीय है जयकीर्ति के कुछ पद भी मिलते हैं।

जयकीर्ति पहिले आचार्य थे लेकिन वाद मे काष्ठासघ की सोमकीर्ति की परम्परा मे रत्नभूपरण के वाद मे भट्टारक वन गये थे। वकचूलरास की रचना

---

१. सवत् १६७४ आषाढ सुदी ७ गुरौ श्री कोटनगरे स्वज्ञानावरणी कर्मक्षयाय आ श्री जयकीर्तिना लिखितेयं। ग्र थ सूची पचम भाग—पृष्ठ सख्या ६४५

उन्होने भट्टारक रहते हुए ही की थी। इसका रचनाकाल सवत् १६८५ है। इस सम्बन्ध मे ग्रथ की प्रशस्ति पठनीय है—

कथा सुणी बकचूलनी श्रेणिक धरी उल्लास।
वीरनि वादी भावसु पुहुत राजग्रह वास ॥१॥

सवत सोल पच्यासीइ गूर्ज्जर देस मझार।
कल्पवल्लीपुर सोभती इन्द्रपुरी अवतार ॥२॥

नरसिंघपुरा वाणिक वसि दया धर्म सुखकद।
चैत्यालि श्री वृषभवि आवि भवीयण वृन्द ॥३॥

काष्ठासघ विद्यागणे श्री सोमकीर्ति मही सोम।
विजयसेन विजयाकर यशकीर्ति यशस्तोम ॥४॥

उदयसेन महीमोदय त्रिभुवकीर्ति विख्यात।
रत्नभूषण गछपती हवा भुवनरयण जेह जात ॥५॥

तस पट्टि सूरीवर भलु जयकीर्ति जयकार।
जे भवियन भवि साभली ते पामी भवपार ॥६॥

रूपकुमर रलीया मणु वकचूल वीजु नाम।
तेह रास रच्यु रूवडु जयकीर्ति सुखधाम ॥७॥

नीम भात्र निर्मल हुई गुरूवचने निघार।
साभलता सपद् मलि ये भणि नरतिनार ॥८॥

यादुसायर नव महीचद सूर जिनभास।
जयकीर्ति कहिता रहु वकचूलनु रास ॥९॥
इति वकचूलरास समाप्त।

१२. प० भगवतीदास

प भगवतीदास १७वी शताब्दी के हिन्दी के कवि थे। उनका जन्म अम्बाला जिले के वुढिया नामक ग्राम मे हुआ था लेकिन वाद में आगरा एव देहली इनकी साहित्यिक गतिविधियो का प्रमुख केन्द्र वन गये थे। देहली मे मोती वाजार के पार्श्वनाथ मन्दिर के पास ही इनका निवास था। आगरा मे रहते हुए इन्होने "अर्गल-

पुर जिन वदना" निवध्द की थी। इसमे आगरा के सभी जैन मन्दिरो का परिचय दिया हुआ है। रचना इतिहास की दृष्टि से भी उल्लेखनीय है।

भगवतीदास अग्रवाल जाति के वसल गोत्रीय श्रावक थे। उनके पिता का नाम किशनदास था जिन्होंने वृद्धावस्था मे मुनिव्रतधारण कर लिया था। भगवतीदास भट्टारकीय पडित थे तथा भ. महेन्द्रसेन के शिष्य थे। महेन्द्र सेन दिल्ली गादी के काष्ठासघ माथुर गच्छीय भट्टारक गुणचन्द्र के प्रशिष्य एव सकलचन्द्र के शिष्य थे। कवि ने अपनी अधिकाश रचनाओ मे महेन्द्रसेन का स्मरण किया है।

कवि की अव तक २५ से भी अधिक कृतिया प्राप्त हो चुकी हैं। अजमेर के भट्टारकीय शास्त्र भडार मे एक गुटका है जिसमे कवि की अधिकाश रचनाओं का सग्रह मिलता है। इनमे सीतासतु, अर्गलपुर जिन वन्दना, मुगति रमणी चूनडी, लघुसीतासतु, मनकरहारास, जोगीरास, टडाणारास, मृगाकलेखाचरित, आदित्यव्रतरास, पखवाडारास, दशलक्षणरास, खिचडीरास आदि के नाम उल्लेखनीय है।

कवि का विस्तृत परिचय एव मूल्याकन अकादमी के किसी अगले भाग मे किया जावेगा।

१३ ब्रह्म कपूरचन्द

ब्रह्म कपूरचन्द मुनि गणचन्द्र के शिष्य थे। ये १७वी शताब्दी के अन्तिम चरण के विद्वान थे। अब तक इनके पार्श्वनाथरास एव कुछ हिन्दी पद उपलब्ध हुये हैं। इन्होंने रास के अन्त में जो परिचय दिया है, उसमे अपनी गुरु-परम्परा के अतिरिक्त आनन्दपुर नगर का उल्लेख किया है, जिसके राजा जसवन्तसिंह थे तथा जो राठौड जाति के शिरोमणि थे। नगर में 36 जातिया सुखपूर्वक निवास करती थी। उसी नगर मे ऊचे ऊचे जैन मन्दिर थे। उनमे एक पार्श्वनाथ का मन्दिर था। सम्भवत उसी मन्दिर मे बैठकर कवि ने अपने इस रास की रचना की थी।

पार्श्वनाथरास की हस्तलिखित प्रति मालपुरा, जिला टोक (राजस्थान) के चौधरियो के दि० जैन मन्दिर के शास्त्र भडार मे उपलब्ध हुई है। यह रचना एक गुटके मे लिखी हुई है, जो उसके पत्र १४ से ३२ तक पूर्ण होती है। रचना राजस्थानी-भाषा में निवद्ध है, जिसमें १६६ पद्य हैं। "रास" की प्रतिलिपि वाई रत्नाई की शिष्य श्राविका पारवती गगवाल ने सवत् १७२२ मिती जेठ वुदी ५ को समाप्त की थी।

श्रीमूल जी सघ वहु सरस्वती गछि।
भयो जी मुनिवर वहु चारित स्वछ॥

तहा श्री नेमचन्द गछपति भयो।
तास के पाट जिन सोभे जी भाण ॥
श्री जसकीरति मुनिपति भयो।
जाणो जी तर्क अति शास्त्र पुराण ॥श्री॥१५९॥

तास को शिष्य मुनि अधिक (प्रवीन)।
पच महाव्रतस्यो नित लीन ॥
तेरह विधि चारित धरै।
व्यजन कमल विकासन चन्द ॥
ज्ञान गो हम जिसो अवि .ले।
मुनिवर प्रगट सुमि श्री गुणचन्द ॥श्री॥१६०॥

तासु तणु सिपि पडित कपूर जी चन्द।
कीयो रास चिति धरिवि आनन्द ॥
जिनगुण कहु मुझ अल्प जी मति।
जसि विधि देख्या जी शास्त्र-पुराण ॥
बुधजन देखि को मति हसै।

तैसो जी विधि मे कीयो जी वखाण ॥श्री॥१६१॥
सोलासै सत्तावणवे मासि वैसाखि।
पचमी तिथि सुभ उजला पाखि ॥
नाम नक्षत्र आद्रा भलो।
वार वृहस्पति अविक प्रधान ॥
राम कीयो वामा सुत तणो।

स्वामीजी पारसनाथ के थान ॥श्री॥१६२॥
अहो देस को राजाजी जाति राठौड।
सकल जी छत्री याके सिरिमोड ॥
नाम जमवन्तसिंघ तसु तणो।
तास आनन्दपुर नगर प्रवान ॥
पोणि छत्तीस लीला करे।
सोमै जी तहा जीण उत्त ग।
मडप वेदी जी अधिक अमग ॥
जिण तणा विंव सोभै भला।
जो नर वदे मन वचकाई ॥

दुख कलेस न सचरे ।
तीस घरा नव निवि थिति पाइ ॥श्री॥१६४॥

रास सवत् १६९७, वैशाख सुदी ५ के दिन समाप्त हुआ था ।

रास मे पार्श्वनाथ के जीवन का पद्य-कथा के रूप मे वर्णन है। कमठ ने पार्श्वनाथ पर क्यों उपसर्ग किया था, इसका कारण बताने के लिये कवि ने कमठ के पूर्व-भव का भी वर्णन कर दिया है। कथा मे कोई चमत्कार नहीं है। कवि को उसे अति सक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत करना था सम्भवतः, इसीलिए उसने किसी घटना का विशेष वर्णन नहीं किया।

१४ मुनि राजचन्द्र

राजचन्द्र मुनि थे लेकिन ये किसी भट्टारक के शिष्य थे अथवा स्वतन्त्र रूप से विहार करते थे इसकी अभी कोई जानकारी प्राप्त नही हो सकी है। ये १७वी शताब्दी के विद्वान थे। इनकी अभी तक एक रचना "चम्पावती सील कल्याणक" ही उपलब्ध हुई है जो सवत् १६८४ मे समाप्त हुई थी। इस कृति की एक प्रति दि जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है। रचना मे १३० पद्य हैं।[1]

१५ पाण्डे जिनदास

पाण्डे जिनदास ब्र शान्तिदास के शिष्य थे। डा प्रेमसागर ने शान्तिदास को जिनदास का पिता भी लिखा है जिनका आधार- बडौत के सरस्वती भण्डार की जम्बूस्वामी चरित की पाडुलिपि है जिसमे शिष्य के स्थान पर सुत पाठ मिलता है। जिनदास आगरा के रहने वाले थे। बादशाह अकबर के प्रसिद्ध मन्त्री टोडरशाह इनके आश्रयदाता थे तथा टोडरशाह के पुत्र थे दीपाशाह जिनके पढने के लिये इन्होंने प्रस्तुत काव्य का निर्माण किया था। टोडरशाह के परिवार में रिखवदास, मोहनदास, रूपचन्द, लक्ष्मणदास, आदि और भी व्यक्ति थे जो सभी धार्मिक प्रवृत्ति वाले थे तथा कवि पर उनकी विशेष कृपा थी।

---

१. सुविचार घनी तप करि, ते ससार समुद्र उत्तरि।
नरनारी सामलि जे रास, ते सुख पामि स्वर्ग निवास ॥ १२९ ॥
संवत सोल चुरासीयि एह, करो प्रबन्ध श्रावण बदि तेह।
तेरस दिन आदित्य सुद्ध वेलावही, मुनि राजचन्द्रकहि हरख्ज लहि ॥ १३० ॥
इति चपावती सील कल्याणक समाप्त ॥

पांडे जिनदास के जम्बू स्वामी चरित काव्य के अतिरिक्त और भी कृतियाँ उपलब्ध होती हैं जिनमे नाम हैं चेतनगीत, जखडी, मालीरास, जोगीरास मुनीश्वरो की जयमाल, धर्मरासगीत, राजुलसज्झाय, सरस्वती जयमाल, आदित्यवार कथा, दोहा बावनी, प्रबोध बावनी, बारह भावना आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग में दिया जावेगा।

१६. पाण्डे राजमल्ल

पांडे राजमल्ल उपलब्ध राजस्थानी गद्य के सबसे प्राचीन दिगम्बर जैन लेखक हैं ये विराट नगर (बैराठ) के रहने वाले थे। इनकी शिक्षा दीक्षा कहा हुई इसकी तो अभी खोज होना शेष है लेकिन ये प्राकृत एवं सस्कृत के अच्छे विद्वान थे। इन्होंने आचार्य कुन्दकुन्द के समयसार की बालावबोध टीका लिखी थी। इसी टीका के आधार पर महाकवि बनारसीदास ने समयसार नाटक की रचना की थी।[1] इसी बालावबोध टीका का उल्लेख महाकवि बनारसीदास ने अपने अर्धकथानक मे किया है।[2]

श्री नाथूराम प्रेमी ने इनकी जम्बूस्वामी चरित, लाटी सहिता, अध्यात्म-कमलमार्तण्ड, छन्दोविधा एव पचाध्यायी रचनायें होना लिखा है।[3] (अर्धकथानक पृष्ठ सख्या ८५)

१७ छीतर ठोलिया

छीतर ठोलिया मौजमाबाद के निवासी थे। इनकी जाति खडेलवाल एव गोत्र ठोलिया था। इनकी एकमात्र रचना होली की कथा सवत् १६५० की कृति है जिसको उन्होंने अपने ही ग्राम मौजमाबाद मे निबद्ध की थी। उस समय नगर पर आमेर के राजा मानसिंह का शासन था।[4] होली की कथा सामान्य रचना है।

---

१ पाण्डे राजमल्ल जिनधरमी, समयसार नाटक के मरमी।
तिन गिरथ की टीका कीनी बालाबोध सुगम कर दीनी॥

२ वि सं १६८४ मे अध्यात्म चर्चा के प्रेमी अरथमल ढोर मिले और उन्होने समयसार नाटक की राजमल्ल कृत टीका का ओर कहा कि तुम इसे पढो इसमे सत्य क्या है सो तुम्हारी समझ मे आ जावेगा।

३ अर्ध कथानक—पृष्ठ संख्या ४७

४ शाकम्भरी के विकास में जैन धर्म का योगदान—डा कासलीवाल, पृष्ठ ४७

१८ भट्टारक वीरचन्द्र

वीरचद्र १७वी शताव्दी के प्रतिभा सम्पन्न विद्वान थे। व्याकरण एव न्यायशास्त्र के काण्ड वेत्ता थे। सस्कृत प्राकृत, गुजराती एव राजस्थानी पर इनका पूर्ण अधिकार था। ये भ० लक्ष्मीचद्र के शिष्य थे। अब तक इनकी आठ रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

(१) वीर विलास फाग, (२) सबोध सत्तायु (३) जम्बू स्वामी वेलि, (४) नेमिनाथ रास, (५) जिन आतरा (६) चित्तनिरोध कथा (४) सीमधर स्वामी गीत एव (८) बाहुबलि वेलि। वीर विलास फाग एक खन्ड काव्य है जिसमें २२वें तीर्थ कर नेनिनाथ की जीवन घटना का वर्णन किया गया है। फाग मे १३३ पद्य हैं। जम्बूस्वामी वेलि एक गुजराती मिश्रित राजस्थानी रचना है। जिन आतरा में २४ तीर्थ करो के समय आदि वर्णन किया किया है। सबोध सत्तारगु एक उपदेशात्मक गीत है जिसमे ५३ पद्य हैं। चित्तनिरोधक कथा १५ पद्यो की एक लघु कृति है इसमे भ० वीरचद्र को "लाड नीति शृ गार" लिखा है। नेमिकुमार रास की रचना स० १६३३ मे समाप्त हुई थी यह भी नेमिनाथ की वैवाहिक घटना पर आधारित एक लगु कृति है।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग मे दिया जावेगा।

१९ खेतसी

खेतसी का दूसरा नाम खेतसिह भी मिलता है। अभी तक इनकी तीन कृतिया प्राप्त हो चुकी है जिनके नाम हैं नेमिजिनद व्याहलो, नेमीश्वर का वारह मासा, एव नेमिश्वर राजुलकी लहुरि। राजस्थान के एव अन्य शास्त्र भडारो मे अभी कवि की और रचनायें मिलने की सम्भावना है। नेमिजिनद व्याहलो की एक प्रति दि० जंन मदिर फतेहपुर (शेखावाटी) के तथा दूसरी जयपुर के पाटोदी के मदिर के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। खेतमी की रचनाये भापा एव शैली की दृष्टि से उल्लेखनीय रचनायें हैं। ये सत्रहवी शताब्दी के अतिम चरण के कवि थे। नेमिजिनद व्याहलो इनकी सवत् १६९१ की रचना है।

२० ब्रह्म अजित

ब्रह्म अजित सस्कृत के अच्छे विद्वान थे। ये गोलशृ गार जाति के श्रावक थे। इनके पिता का नाम वीरसिह एव माता का नाम पीथा था। ब्रह्म अजित

भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति के प्रशिष्य एव भट्टारक विद्यानदि के शिष्य थे। ये ब्रह्मचारी थे और इसी अवस्था मे रहते हुये इन्होने भृगुकच्छपुर (भडोच) के नेमिनाथ चैत्यालय मे हनुमच्चरित की रचना समाप्ति की थी। इस चरित की प्राचीन प्रति आमेर शास्त्र भंडार जयपुर मे सग्रहीत है। हनुमच्चरित में १२ सर्ग हैं और यह अपने समय का काफी लोकप्रिय काव्य रहा है।

ब्रह्म अजित की एक हिन्दी रचना "हसा गीत" प्राप्त हुई है यह एक उपदेशात्मक एव शिक्षाप्रद कृति है जिसमे "हसा" (आत्मा) को सम्बोधित करते हुये ३७ पद्य हैं। गीत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

> रास हस तिलक एह, जो भावइ दिढ चित्त रे हसा।
> श्री विद्यानदि उपदेस, वोलि ब्रह्म अजित रे हसा ॥३७॥
> हसा तू करि सयम, जम न पडि ससार रे हसा ॥

ब्रह्म अजित १७वी शताब्दी के विद्वान सन्त थे।

२१ आचार्य नरेन्द्रकीर्ति

ये १७वी शताब्दी के सन्त थे। भ०वादिभूषण एव भ० सकलभूषण दोनो ही सन्तो के ये शिष्य थे और दोनो की ही इन पर विशेष कृपा थी। एक वार वादिभूषण" के प्रिय शिष्य ब्रह्म नेमिदास ने जव इनसे "सगरप्रवन्ध लिखने की प्रार्थना की तो इन्होने उनकी इच्छानुसार "सगर प्रवन्ध" कृति को निवद्ध किया। प्रवन्ध का रचनाकल स० १६४६ असोज सुदी दशमी है। यह कवि की एक अच्छी रचना है। आचार्य नरेन्द्रकीर्ति की ही दूसरी रचना "तीर्थ कर चौवीसना छप्पय" है। इसमे कवि ने अपने नामाल्लेख के अतिरिक्त अन्य कोई परिचय नही दिया है। दोनो ही कृतिया उदयपुर के शास्त्र भडारो मे सग्रहीत है।

२२ ब्रह्म रायमल्ल

१७वी शताब्दी के प्रथम पाद के महाकवि रायमल्ल के सम्वन्ध मे अकादमी की ओर से प्रथम भाग—महाकवि ब्रह्मरायमल्ल एव भ० त्रिभुवनकीर्ति प्रकाशित हो चुका है।

२३ जगजीवन

कविवर जगजीवन बनारसीदास के समकालीन ही नही किन्तु उनके कट्टर प्रशसक भी थे। ये आगरा के सम्पन्न घराने के थे लेकिन पूर्णत निरभिमानी भी थे।

उनके पिता का नाम अभयराज था। उनके कितनी ही स्त्रिया थी जिनमे मोहनदे सबसे अधिक प्रसिद्ध थी[1] और जगजीवन की माता भी वही थी। कवि अग्रवाल गर्ग गोत्रीय श्रावक थे। इनकी अच्छी शिक्षा दीक्षा हुई थी इसलिये थोडे ही दिनों में उनकी चारो ओर ख्याति फैल गई। जगजीवन ज्ञानियो की मडली के अगुवा बन गये।[2]

जगजीवन बनारसीदास के परम भक्त थे तथा उनकी रचनाओ से परिचित थे। बनारसीदास की मृत्यु के पश्चात जगजीवन ने सवत् १७०१ में उनकी सभी रचनाओ का एक ही स्थान पर सकलन करके उसका नाम बनारसी विलास रखा और साहित्यिक क्षेत्र मे अपना नाम अमर कर लिया। जगजीवनराम स्वय भी कवि थे। इसलिये उन्होंने एकीभाव स्तोत्र की एव भूपाल चौबीसी की भाषा टीका की थी। इनके कितने ही पद भी मिलते हैं। डा० प्रेमसागर ने भूपाल चौबीसी का उल्लेख नही किया है।

जगजीवनराम के समय आगरा साहित्यकारो एव साहित्यसेवियो का प्रमुख केन्द्र था। प० हीरानन्द ने समवसरण विधान की प्रशस्ति मे जगजीवनराम का अच्छा वर्णन किया है जो निम्न प्रकार है—

अब सुनि नगरराज आगरा, सकल लोक अनुपम सागरा।
साहजहाँ भूपति है जहाँ, राज करे नयमारग तहाँ ॥७५॥

ताको जाफरखा उमराउ, पचहजारी प्रगट कराउ।
ताको अगरवाल दीवान, गरगगोत सब विधि परधान ॥७९॥

सघही अभैराज जानिये, सुखी अधिक सब करि मानिये।
वनितागण नाना परकार, तिनमे लघु मोहनदे सार ॥८०॥

ताको पूत पूत-सिरमौर, जगजीवन जीवन की ठौर।
सुन्दर सुभवरूप अभिराम, परम पुनीत धरम-धन-धाम ॥८१॥

---

१ नगर आगरे मे अगरवाल गरगगोत नागर नवलसा।
संघ ही प्रसिद्ध अभिराज राज माननीक, पचवाल नलनी मे भयो है कवलसा।
ताके प्रसिद्ध लघु मोहनदे सघइनि, जाके जिनमारग विराजित धवलसा।
ताहि को सपूत जगजीवन सुदिढ जैन, बनारसी बैन जाके हिए मे सबलसा।

२ समै जोग पाइ जग जीवन विख्यात भयो,
ज्ञान की मडली मे जिसको विकास है।

काल-लबधि कारन रस पाइ, जग्यो जथारथ अनुभौ आइ।
अहनिसि ग्यानमडली चैन, परत और सब दीसै फैन ॥८२॥

इससे दो बातो पर प्रकाश पड़ता है—एक तो यह कि सवत् १७०१ मे आगरे मे ज्ञाताओ की एक मडली या आध्यात्मियो की सैली थी, जिसमें सघवी जगजीवनराम, प० हेमराज, रामचन्द, सघी मथुरादास, भवालदास, और भगवतीदास थे। भगवतीदास को "स्वपरप्रकाश" विशेषण दिया है। ये भगवतीदास वेही जान पडते हैं जिनका उल्लेख बनारसीदासजी ने नाटक समयसार मे निरन्तर परमार्थ चर्चा करने वाले पच पुरुषो मे किया है। हीरानन्दजी अपने दूसरे छन्दोवद्ध ग्रन्थ पचास्तिकाय (१७०१) में भी धनमल और मुरारि के साथ इन्ही का ज्ञातारूप मे उल्लेख किया है।

दूसरी बात यह है कि जफरखा बादशाह शाहजहाँ का पाचहजारी उमराव था जिसके कि जगजीवन दीवान थे और जगजीवन के पिता अभयराज सर्वाधिक सुखी सम्पन्न थे। उनके अनेक पत्नियाँ थी जिनमे से सबसे छोटी मोहनदे से जगजीवन का जन्म हुआ था।

२४ कुअरपाल

ये कविवर बनारसीदास के अभिन्न मित्र थे।[1] जिन पाच साथियो के साथ बैठकर बनारसीदास परमार्थ चर्चा किया करते थे उनमे कुअरपाल का नाम भी सम्मिलित है।[2] पाण्डे हेमराज ने उन्हे ज्ञाता अधिकारी के रूप मे स्मरण किया है। महोपाध्याय मेघविजय ने अपने "युक्ति प्रवोध" मे उनकी सर्वमान्यता स्वीकार की है। स्वय कवि कुअरपाल ने अपनी "समकित बत्तीसी" मे अपना यश चारो ओर नगरो मे फैलने के लिये लिखा है।[3]

---

१ कुवरपाल बनारसी मित्र जुगल इक चित्त।
तिनहि ग्रथ भाषा कियो बहु विधि छन्द कवित ॥२॥

१ रूपचद पडित प्रथम, दुतिय चतुर्भुज नाम।
तृतीय भगौतीदास नर, कौरपाल गुणधाम ॥
धरमदास ए पच जन, मिलि बैठे इक ठौर।
परमारथ चरचा करै, इन के कथा न और ॥

२ पुरि पुरि कंवरपाल जस प्रगट्यो, बहुविध ताप वंस वरणिज्जई।
धरमदास जसकवर सदा धनी, वडसाखा विसतर किम किज्जई।

बनारसीदास ने "सूक्ति मुक्तावली" मे कुंअरपाल का नाम अपने अभिन्न मित्र के रूप मे लिया है और दोनों ने मिलकर सूक्ति मुक्तावली भाग रचना की ऐसा उल्लेख किया है। कवि की अब तक कवरपाल वत्तीसी एव सम्यकत्व वत्तीसी रचनायें उपलब्ध हो चुकी है।

कुंअरपाल का जन्म ओसवाल वंश के चौरडिया गोत्र मे हुआ था। कुंअरपाल के पिता का नाम अमरसिंह था। नाथूराम प्रेमी ने अमरसिंह का जन्म स्थान जैसलमेर माना है। कुंअरपाल के हाथ का लिखा हुआ एक गुटका विक्रम सवत् १६८४-८५ का है जिसमे विभिन्न पाठो का सग्रह है। कुछ रचनायें स्वय कवि द्वारा निर्मित भी है। लेकिन उनका नामोल्लेख नही हुआ है। इसी तरह एक गुटका और मिला है जो स्वय कुंअरपाल के पढने के लिये लिखा हुआ गया था। जिनमे कुंअरपाल द्वारा लिखी हुई समकित वत्तीसी का विषय अध्यात्मरस से है। इसका अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

हुओ उछाह सुजस आतम सुनि, उत्तम जिके परम रस भिन्ने।
ज्यउ सुरही तिण चरहि दूध हुई, त्याता तेरह प्रन गुन गिन्ने ॥
निजबुधि सार विचारि अध्यातम, कवित वत्तीस भेट कवि किन्ने।
कवरपाल अमरेस 'तनू' भव, अतिहितचित आदर कर लिन्ने ॥

२५ सालिवाहन

सालिवाहन १७वी शताब्दी के अन्तिम चरण के कवि थे। इन्होंने सवत् १६९५ मे आगरा मे रहते हरिवंश पुराण भाषा (पद्य) की रचना की थी। इनके पिता का नाम खरगसेन एव गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था। कवि भदावर प्रान्त के कञ्चनपुर नगर के निवासी थे। हरिवंश पुराण की प्रशस्ति मे इन्होंने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

सवत् सोरहिसै तहाँ भये तापरि अधिक पचानवे गये।
माघ मास किसन पक्ष जानि, सोमवार सुभवार वखानि ॥
भट्टारक जगभूषण देव गनवर सादृम वादि जु एइ।
नगर आगिरो उत्तम थानु साहिजहाँ तपे दूजो भान ॥
वाहन करी चौपई वन्धु हीन बुधि मेरी मति अन्धु।

२६ सुन्दरदास

सुन्दरदास नाम के जैन कवि भी हुये हैं जो वागड प्रान्त के रहने वाले

थे। लेकिन यह वागड प्रदेश डूगरपुर वाला वागड प्रदेश नही है किन्तु देहली के आसपास के प्रदेश को वागड प्रदेश कहा जाता था ऐसा डा० प्रेमसागर जैन ने माना है। डा० जैन के अनुसार सुन्दरदास शाहजहाँ के कृपापात्र कवियो मे से थे। बादशाह ने इनको पहिले कविराय और फिर महाकविराय का पद प्रदान किया था। डा० जैन ने लिखा है कि सुन्दरदास राजस्थानी कवि थे तथा जयपुर से ५० किलोमीटर पूर्व की ओर स्थित दौसा उनका जन्म स्थान था। इनकी माता का नाम सती एव पिता का नाम चोखा था। सुन्दरदास आध्यात्मिक कवि थे। इनके अभी तक चार ग्रन्थ एव कुछ फुटकर रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं। ग्रन्थो के नाम हैं सुन्दरसतसई, सुन्दर विलास, सुन्दर शृगार एव पाखड पचासिका। जयपुर के ठोलियो के मन्दिर मे पद एव सहेलीगीत भी मिलता है। सहेलीगीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार हुआ है—

सहेल्लो हे यो ससार असार मोचित मे या अपनो जी सहेल्लो हे
ज्यो राचें तो गवार तन धन जोवन थिर नही।

सुन्दर शृगार—इसकी एक प्रति साहित्य शोध विभाग जयपुर के सग्रह मे है जिसमें ३५९ पद्य हैं। प्रारम्भ मे कवि ने अपना एवं बादशाह शाहजहाँ का परिचय निम्न प्रकार दिया है—

तीन पहरि लो रवि चले, जाके देसनि नाहि ।
जीत लई जगती इती, साहिजहा नर नाहि ॥८॥

कुल दरिया खाई कियो, कोटतीर के ठाव ।
आठो दिसि यो वसि करि, यो कीजें इक गाव ॥९॥

साहिजहा तिन गुननि को, दीने अगिनित दान ।
तिन मैं सुन्दर सुकवि को, कीयो वहुत सनमान ॥१०॥

नग भूपन मनि सवद ये, हय हाथी सिर पाइ ।
प्रथम दीयो कवि राय पद, वहुरि महाकवि राइ ॥११॥

विप्र ग्वारियर नगर को, वासी है कविराज ।
जासौं साहि मया करो, सदा गरीव निवाज ॥१२॥

जव कवि को मन यो वढ्यौ, तव यह कीयौ विचार ।
वरनि नाइका नायक विरच्यौ ग्रथ विस्तार ॥ १३ ॥

सुदर कृत सिंगार है, सकल रसनि को सारु ।
नाव धरयो या ग्रथ कौ, यह सुदर सिंगार ।। १४ ।।

जो सुदर सिंगार को, पढ़ै, गुनें सग्यानु ।
तिन मानौ समार मैं, करयौ सुधारम पान ।।१५।।

सवत् सोरह से वरष, वीते अठयासीत ।
कातिक सुदि षष्टि गुरौ, रच्यौ ग्रथ करि मीति ।।१६।।

सुन्दर श्रृंगार की प्रशस्ति से मालूम होता है कि कवि ग्वालियर के रहने वाले ब्राह्मण कवि थे जैन नही थे ।

२८ परिहानन्द (नन्दलाल)

परिहानन्द आगरा के पास गौसुना ग्राम के रहने वाले थे लेकिन बाद ने आगरा आकर रहने लगे थे । वे अग्रवाल जातीय गोयल गोत्र के श्रावक थे । उनकी माता का नाम चन्दा तथा पिता का नाम भैरू था । काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका हस्तलिखित ग्रथो की खोज २०वा त्रैवार्षिक विवरण मे माता का नाम चन्दन दिया हुआ है ।[2] कवि के समय मे आगरा पूर्ण वैभवशाली नगर था जहा सभी तरह का व्यापार था जिस कारण वहा कवि के शब्दो मे असख्य धनवान रहते थे । उस समय आगरा मथुरा मडल का उत्तम नगर माना जाता था ।[3]

परिहानन्द ने हिन्दी के अच्छे कवि थे उन्होने यशोधर चरित्र को सवत् १६७० श्रावण शुक्ला सप्तमी सोमवार को समाप्त किया था । डा प्रेमसागर जैन ने कवि का नाम परिहानन्द के स्थान पर नन्दलाल लिखा है । नन्द नाम से सवत

---

१ अग्रवाल वरवंस गोसना गांव को
गोयल गोत प्रसिद्ध चिहन ता ठाव को
माता चंदा नाम पिता भैरू भन्यौ
परिहानन्द कही मन मोद अंग न गुन नां गिन्यौं ।५९८।।

२ माताहि चन्दन नाम पिता भयरो भन्यो
नन्द कही मनमोद गुनी गन ना गन्यो ।

३ नगर आगरो वसै सुवासु, जिहपुर नाना भोग विलास ।
वसहि साहु वहु धनी असखि वनजहि वनज सापहहिनखि ।
गुणी लोग छत्ती सौ कुरी, मथुरा मंडल उत्तम पुरी ।

१६६३ वाली कृति "सुदर्शन सेठ कथा" को भी इन्ही कवि की रचना स्वीकार किया है। सुदर्शन सेठ कथा कि एक प्रति भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर मे सुरक्षित है।

कवि की तीसरी कृति 'गूढ विनोद' मे भी कवि ने अपना नाम नन्द ही दिया है। इसकी एक पाण्डुलिपि जयपुर के पडित लूणकरणजी के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है।

यशोधर चरित्र ५९८ पद्यों का प्रवन्ध काव्य है। रचना भाषा एव शैली की दृष्टि से यह एक उत्तम कृति हैं। यह काव्य अभी तक अप्रकाशित हैं।

२८ **परिमल्ल**

परिमल्ल कवि हिन्दी के १७वी शताव्दी द्वितीय चरण के कवि थे। ये प्रथम कवि हैं जिन्होने काव्य प्रारम्भ करने की तिथि दी है नही तो सभी कवि रचना समाप्ति की तिथि देते हैं। परिमल्ल का श्रीपाल चरित एक मात्र काव्य है जिसकी अभी तक उपलब्धि हुई है। कवि ने इसे सवत १६५१ आष'ढ शुक्ला अष्टमी अष्टाह्लिका पर्व के प्रथम दिन प्रारम्भ किया था।

सवत् सोलह से उच्चरयो सावण इक्यावन आगरा।
मास अषाढ पहुतो आइ वरषा रिति को कहे वढाइ।
पक्ष उजाली आठै जाणि, सुक्रवार वार परवाणि।
कवि परिमल्ल सुद्ध करि चित्त, आरम्भ्यो श्रीपाल चरित।

उस समय देश पर बादशाह अकवर का शासन था। चारो ओर सुख शान्ति थी कवि ने अकवर को दूसरा भानु लिखा है

वव्वर पातिसाह हवै गयौ, ता सुत साहि हमाऊ भयौ।
जा सुत अकवर साहि समाण, सो तप तप्यौ दूसरौ भाण ॥३२॥

ताकै राज न होइ अनीति, वसुधा वहुत करि वसि जीति।
कितेक देस तास की आन, दूजो और न ताहि समान ॥३३॥

वश परिचय—परिमल्ल कवि अत्यधिक सम्मानित वश से सवधित थे इनकी जाति विरहिया जैन थी। कवि के प्रपितामह चदन चौधरी थे जो ग्वालियर के राजा मानसिंह द्वारा सम्मानित थे। उनकी कीर्ति चारो ओर फैली हुई थी। वे स्वय प्रतापी थे तथा अपने कुल को प्रसन्न रखने वाले थे। कवि के पितामह रामदास एव पिता आसकरन थे। ये आसकरण के पुत्र थे। परिमल्ल आगरा में आकर रहने लगे

थे। और वहीं पर रहते हुए उन्होंने श्रीपाल चरित को चौपई बन्ध छन्द में पूर्ण किया था।[1]

कवि की एक मात्र कृति श्रीपाल चरित की राजस्थान के ग्रंथ भण्डारों में कितनी ही पाडुलिपियां उपलब्ध होती हैं। पूरा काव्य ७३०० चौपई छन्दों में निबद्ध है। यद्यपि श्रीपाल का जीवन कथा लोकप्रिय कथा है लेकिन कवि की वर्णन शैली बहुत ही अच्छी है जिससे काव्य में चमत्कार आ गया है।

काव्य की एक प्रति आमेर शास्त्र भण्डार में संख्या १०६० ५२ उपलब्ध है जिसमें १२५ पत्र है तथा जिसे संवत् १७९४ में पाटन में जैकिशन जोशी द्वारा लिपिबद्ध किया गया था।

२९. वादिचन्द्र

वादिचन्द्र विद्यानन्दि की परम्परा में होने वाले भ. ज्ञानभूषण के प्रशिष्य एवं भ. प्रभाचन्द्र के शिष्य थे। इन्हें साहित्य निर्माण की रुचि गुरु परम्परा से प्राप्त हुई थी। सस्कृत एव हिन्दी गुजराती पर इनका अच्छा अधिकार था इसलिये इन्होंने सस्कृत एव हिन्दी दोनों में अपनी कलम चलायी। वे एक समर्थ साहित्यकार थे। सवत् १६४० मे इन्होंने सस्कृत मे वाल्हीक नगर में पार्श्वपुराण की रचना करके अपने कर्तृत्व शक्ति का परिचय दिया।[2] ज्ञानसूर्योदय नाटक को सवत् १६४८[3] एव यशोधर चरित्र को सवत् १६५७ में पूर्ण किया था।[4] "पवनदूत" कालीदास के मेघदूत के आधार पर रचा गया काव्य है।[5]

---

१ गोत्रि गोरी ठाढो उत्तिम थान, सूरवीर यह रामान।
ता आगै चदन चौधरी, कीरति सव जग मे विस्तरी ॥ ६६ ॥
जाति विरहिया गुरणह गभीर अति प्रताप कुल रजन धीर।
ता सुत रामदास परवान, ता सुत अस्ति महा सुर ग्यान ॥ ६७ ॥
तसु कुल मडल है परिमल्ल, सबै आगरा में अरिसल्ल।
तासु महि न बुद्धि नहि आन, कीयौ चौपई बंध प्रवांन ॥ ६८ ॥

२ शून्याब्दौ रसाब्जाके वर्षे पक्षे समुज्वले।
कार्तिक मास पचम्या वाल्हीके नगरे सुदा ॥ पार्श्वपुराण

३ प्रशस्ति सग्रह—सम्पादक—डा कस्तूरचन्द कासलीवाल पृष्ठ १६

४ अ कलेश्वर-सुग्रामे श्री चिन्तामणि मन्दिरे।
सप्तपच रसाब्जाके वर्षे कारि सुशास्त्रकम् ॥

५ प उदयपाल कासलीवाल द्वारा सम्पादित-जैन साहित्य प्रसारक कार्यालय बम्बई द्वारा सन १९१४ मे प्रकाशित

इसके अतिरिक्त सुलोचना चरित्र की एक पाण्डुलिपि ईडर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है ।

वादिचन्द्र की हिन्दी में भी कितनी ही कृतिया मिलती है जो राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध होती हैं । अब तक उपलब्ध कुछ कृतियो के नाम निम्न प्रकार है —

१–पार्श्वनाथ वीनती
२–श्रीपाल सोभागी आख्यान
३–वाहुवलिनो छद
४–नेमिनाथ समवसरण
५–द्वादश भावना
६–आराधना गीत
७–अम्बिका कथा
८–पाण्डवपुराण

पार्श्वनाथ विनती की एक प्रति दि जैन मन्दिर कोटडियो का, डूगरपुर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत हैं । इसका रचनाकाल सवत् १६४८ दिया हुआ है ।[1] श्रीपाल सोभागी आख्यान की उदयपुर एव कोटा के शास्त्र भण्डारो मे प्रतिया सुरक्षित हैं ।[2] इसका रचना काल संवत् १६५१ है । प. नाथूराम प्रेमी ने आख्यान के विषय में लिखा है कि यह एक गीति काव्य है और इसकी भाषा गुजराती मिश्रित हिन्दी है । इसकी रचना सघपति धनजी सवा के आग्रह से हुई थी । आख्यान मे सभी रसो का प्रयोग हुआ है तथा भाषा एव शैली मे सरलता एव प्रवाह है ।[3] यह एक भक्ति प्रधान काव्य है । काव्य का एक उदाहरण देखिये—

दान दीजे जिन पूजा कीजे, समकित मनें राखिजे जी
सूत्रज भरिणए णवकार गरिणए, असत्य न विभाषिजे जी
लोभ तजी जे ब्रह्म धरीजे, साभल्यातु फल एह जी
ए गीत जे नर नारी सुरणसे अनेक मगल तह गेह जी

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची पचम भाग–पृ स ११६१
२ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्र थ सूची पचम भाग–पृ स ४६१
३ सघपति धनजी सवा वचनें कीधो ए प्रबन्ध जो ।
केवली श्रीपाल पुत्र सहित तुम्ह नित्य करो जयकार जी ।

वाहुवलि नो छन्द–इसकी एक पाण्डुलिपि दि. जैन मन्दिर कोटडिया डूंगरपुर के एक गुटके मे सग्रहीत है । डा प्रेमसागर जैन ने इसका नाम भरत वाहुवलि छन्द नाम दिया हुआ है ।[1] इस कृति मे वादिचन्द्र ने अपने गुरु का नाम निम्न प्रकार किया है—

तस पाय लागे प्रभासचन्द्र, वाणि वोल्ये वादिचन्द्र ।

४–नेमिनाथ नो समवसरण, ५–गौतमस्वामी स्तोत्र एव ६–द्वादश भावना की पाण्डुलिपिया दिगम्बर जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार के एक गुटके मे सग्रहीत हैं । इस गुटके मे वादिचन्द्र के गुरु भ ज्ञानभूषण एव भ वीरचन्द्र आदि की कृतियां भी सग्रहीत हैं । डा प्रेमसागर जैन ने आराधना गीत, अम्बिका कथा एव पाण्डवपुराण इन कृतियो का और उल्लेख किया है ।[2]

३० कनककीर्त्ति

कनककीर्ति नामक दो विद्वान हो गये हैं । एक कनककीर्ति खरतर गच्छीय शाखा के प्रसिद्ध जिनचन्द्रसूरी की शिष्य परम्परा मे नयकमल के प्रशिष्य एव जयमन्दिर के शिष्य थे । जैन गुर्जर कविओ भाग एक मे इनकी दो रचनायें नेमिनाथरास एव दीपद्रीरास का उल्लेख हुआ है । इनका निर्माण क्रमश बीकानेर एव जैसलमेर मे हुआ था इसलिये सभवत. कवि उसी क्षेत्र के होंगे ।

दूसरे कनककीर्ति दिगम्बर विद्वान थे और वे भी १७वी शताब्दी के ही थे । इन्होंने अपने आपको माणिक का शिष्य होना वतलाया है । इन कनककीर्ति की दिगम्बर भण्डारो मे पर्याप्त सख्या में कृतिया मिलती हैं । तत्वार्थ सूत्र की श्रुतसागरी टीका पर हिन्दी गद्य मे जो टीका लिखी है वह दिगम्बर समाज मे वहुत लोकप्रिय टीका है । इसकी भाषा ढूंढारी है इसलिये लगता है कि ये कनककीर्ति ढूंढाहड प्रदेश के किसी ग्राम अथवा नगर के रहने वाले थे । उन्होने अपनी किसी भी रचना मे खरतरगच्छ अथवा नयकमल के नाम का उल्लेख नही किया है इसलिये डा प्रेमसागर जैन का दोनो विद्वानो को एक मानना सही प्रतीत नही लगता ।[3]

दिगम्बर कनककीर्ति की अब तक निम्न रचनाओ की खोज की जा चुकी हैं ।

---

१ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ संख्या १३८
२ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ संख्या १३९
३ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ सख्या १७८

१–तत्वार्थ सूत्र भापा टीका
२–वारहखडी
३–मेघकुमार गीत
४–श्रीपाल स्तुति
५–कर्म घटवाली
६–पार्श्वनाथ की आरती

उक्त रचनाओ के अतिरिक्त कनककीर्ति के पद, स्तवन, विनती आदि कितनी ही लघु कृतियाँ मिलती हैं। इन सभी कृतियो से कवि के दिगम्बर मतानुयायी होने का ही उल्लेख मिलता है।

३१. विष्णु कवि

विष्णु कवि उज्जैन के रहने वाले थे। सवत् १६६६ मे इन्होने भविष्यदत्त कथा को उज्जैन मे समाप्त किया था। इसी कथा की एक मात्र अपूर्ण पाण्डुलिपि श्री दिगम्बर जैन सरस्वती भवन पचायती मन्दिर मस्जिद खजर देहली मे सग्रहीत है। पूरा काव्य ४०१ चौपई छन्दो मे निबद्ध हैं। भापा बहुत सरल किन्तु सरस है। कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया वैं—

सवतु सोरहसै ह्वै गई, अधिका तापर छासठि भई ।
पुरी उज्जैनी कविनि को दासु, विष्णु तहा करि रहयो निवासु ।
मन वच क्रम सुनौ सवु कोई, वञन्या सुनै पुत्र फल होइ ।
वहिरे सुनं ति पावे कान, मूरिख हौहि ते चतुर सुजान ।
निर्धन सुनै एकु चित्त लाइ, ता घर रिधि चढै सुभ भाइ ।
जो लवधारे चित्त मझारि, रण रावण नहि आवे हारि ।
अचला होइ रुप गुन रासि, जन्म न परै कर्म की पासि ।
और वहुत गुन कह लगि गनौ, धर्म कथा यहु मनु दे सुनौ
जन्म त होइ ताहि अवसान, निश्चल पदु पावै निर्वानि ॥

श्वेताम्बर जैन कवि

३२ हरि कलश

हीर कलश खरतर गच्छ के साधु थे। ये जिन चन्द्रसूरि की शिष्य परम्परा मे होने वाले हर्षप्रभ के शिष्य थे। उनका साहित्यिक काल सवत् १६१५ से १६५७ तक का माना जाता है। इन्होंने बीकानेर एव नागौर में सर्वाधिक विहार किया।

ये राजस्थानी भाषा के कवि कहलाते हैं। अब तक उनकी दस रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

१ सम्यकत्वकौमुदी (१६२४) २ सिंहासन बत्तीसी (१६३६)
३ कुमति विध्वंसन चौपई (१६१७) ४ आराधना चौपाई (१६१३)
५ अठारह नाता (१६१६) ६. रतनचूड चौपई
७ मोती कपासिया सवाद ८ हरियाली
९ मुनिपति चरित्र चौपई (१६१८) १० सोलह स्वप्न सज्झाय (१६२२)

३३ समयसुन्दर

समयसुन्दर का जन्म साचोर मे हुआ था। इनका जन्म सवत् १६१० के लगभग माना जाता है। डा० माहेश्वरी ने इसे स० १६२० का माना है। इनकी माता का नाम लीलादे था। युवावस्था में उन्होने दीक्षा ग्रहण करली और फिर काव्य, चरित, पुराण, व्याकरण छन्द, ज्योतिष आदि विषयक साहित्य का पहिले अध्ययन किया और फिर विविध विषयो पर रचनायें लिखी। सवत् १६४१ से आपने लिखना आरम्भ किया और सवत् १७०० तक लिखते ही रहे। इस दीर्घकाल में इन्होंने छोटी-बडी सैकडो ही कृतियाँ लिखी थी। समयसुन्दर राजस्थानी साहित्य के अभूतपूर्व विद्वान् थे, जिनकी की कहावतो मे भी प्रशसा वर्णित है।

"राजा ना ददते सौख्यम्" इन आठ अक्षरो के वाक्य के आपने १० लाख से भी अधिक अर्थ करके सम्राट अकबर और समस्त सभा को आश्चर्य चकित कर दिया था। "सीताराम चौपाई" नामक राजस्थानी भाषा मे निबद्ध एक सुन्दर काव्य है। समयसुन्दर कुसुमाजलि मे आपकी ५६३ रचनायें प्रकाशित हो चुकी हैं। सम्बप्रद्युमन चौपाई, मृगावती रास (१६६८), प्रियमेलक रास (१६७२), शत्रुंजय रास, स्थूलिभद्र रास आदि रचनाओ के नाम उल्लेखनीय है।

३४ जिनराजसूरि

ये युग प्रधान जिनचन्द्रसूरि के प्रशिष्य थे। ये भी राजस्थानी भाषा मे लिखने वाले कवि थे। इनकी शालिभद्र चौपई बहुत ही लोकप्रिय कृति है। "जिन राजसूरी कृति सग्रह" मे इनकी सभी रचनायें प्रकाश में आ चुकी हैं। नैषधकाव्य पर इन्होंने ३३००० श्लोक प्रमाण सस्कृत टीका की थी। जिनराजसूरि ने सवत् १६८६ में आगरा में बादशाह शाहजहाँ से भेंट की थी।

३५ दामो

ये वाचक उदयसागर के शिष्य थे। इनका पूरा नाम दयासागर था। स० १६७१ मे इन्होने जालौर में "मदन नारिंद चौपई" की रचना ममाप्त की थी। यह हिन्दी भापा का एक सुन्दर प्रेम काव्य है। इस रचना के मध्य में रति सुन्दरी ने जो गुप्त लेख अपने प्रियतमा को भेजा था वह विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसका एक पद्य निम्न प्रकार है—

विरह आगि उपजी अधिक अहनिस दहैं सरीर।
साहिव देहु पसाऊ करि, दरसन रूपी नीर॥

३६ कुशललाभ

कुशललाभ राजस्थानी भापा के उल्लेखनीय कवि थे। "ढोलामारू चौपई" आपकी वहुत ही प्रसिद्ध कृति मानी जाती है। इन्होने "ढोलामारू का दूहा" के वीच-वीच मे अपनी चौपाइया मिलाकर प्रवन्धात्मकता उत्पन्न करने का प्रयास किया था। कुशललाभ की चौपाइयो मे विरह रस मे कोई व्याघात नही पहुचा है अपितु कथा के एक सूत्र मे वध जाने मे प्रवन्ध काव्य का आनद आया है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी कुशललाभ की रचना कौशल की प्रशसा की है।

कुशललाभ मे कवित्व शक्ति गजव की थी। तीनो ही रसो मे उन्होने सकल काव्यो का निर्माण किया और साहित्य जगत मे गहरी लोकप्रियता प्राप्त की। माधवानल चौपाई इनकी शृगाररस प्रधान रचना है। श्री पूज्यवाहण गीत, स्थूलिभद्र, छत्तीसी, तेजसार रास, स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन, गौडी पार्श्वनाथ स्तवन और नवकारछद इनकी भक्ति परक रचनायें हैं। स्थूलिभद्र छत्तीसी का प्रथम पद्य देखिये—

सारद शरदचन्द्र कर निर्मल, ताके चरण कमल चित लाइकि
सुणत सतोष होई श्रवण कु, नागर चतुर सुनइ चित भाइकि
कुशललाभ मुनि आनद भरि, सुगुरुप्रसाद परम सुख पाइकि
करिह थूलभद्र छत्तीसी, अति सुन्दर पइवध वनाइकि

३७ मानसिंह मान

ये खरतरगच्छ के उपाध्याय शिव निधान के शिष्य और सुकवि। इनके रचनायें सवत् १६७० से १६९३ तक प्राप्त होती है। इन्होने राजस्थानी एव हिन्दी दोनो मे काव्य रचनायें की थी। योग वावनी, उत्पत्ति-नाम एव भापा

कविरम मजरी के नाम विशेप रूप से उल्लेखनीय हैं। अन्तिम रचना शृ गार रस प्रधान है नायक नायिका वर्णन सम्वन्धी १०६ इसमे पद्य हैं। इसके आदि और अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है–

मकल कला निधि वादि गज, पचानन परधान।
श्री शिव विधान पाठक चरण, प्रणमी वदे मुनि भान ॥१॥

नव अकुर जोवन भई, लाल मनोहर होइ।
कोपि सरल भूपण ग्रहै, चेष्टा मुग्धा होइ ॥२॥

अन्तिम– नारि नारि सव को कहे, किऊ नाइकासु होइ।
निज गुण मनि मति रीति धरी, मान ग्रथ अव लोइ।

३८ उदयराज

उदयराज खरतगच्छीय माधु थे। मिश्रवन्धु विनोद मे इनके आश्रयदाता का नाम महाराजा रायसिंह लिखा है[1] लेकिन भजन छत्तीसी मे आश्रयदाता जोधपुर के महाराजा उदयसिंह थे ऐसा स्पप्ट होता है। श्री अगरचन्द नाहटा ने भी इसी मत को माना है।[2]

भजन छत्तीसी में कवि ने लिखा है कि उन्होंने इसे सवत् १६६७ मे पूर्ण किया था जव वे ३६ वर्प के थे।[3] इनके पिता का नाम भद्रसार, माता का नाम हरण, भ्राता का नाम सूरचन्द्र, पत्नि का नाम पुरवणि, पुत्र का नाम सूदन और मित्र का नाम रत्नाकर था।[4]

---

१ मिश्रवन्धु विनोद प्रथम भाग पृष्ठ ३६४

२ राजस्थान मे हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज–भाग–२ परिशिष्ट। पृष्ठ १४२–४३

३ सोलहसे सतसठे कीघ जन भजन छत्तीसी
मोनु वरस छत्तीस हुव भनि आवइ ईसी

४ समपिता भद्रसार जनम समये हरषा उर।
समपि भ्रात सुरचन्द्र मित्र समये रयणायर॥
समपि कलभि पूरवणि, समपि पुत्र सुदन दिवायर
रूप अने अवतार ओ मो समये आपज रहण
उदैराज दूह लधौ रतौ, भव भव समये मह महण

भजन छत्तीसी पद्य ३२

इनकी कृतियो मे गुणबावनी, भजन छत्तीसी, चौबीस जिन सवैय्या, मन प्रशसा दोहा, एव वैद्य विरहिणी प्रबन्ध के नाम उल्लेखनीय है। इनकी कविताओ में सरसता एव सरलता है तथा पाठक को आकर्षण करने की शक्ति है। भजन छत्तीसी का एक पद्य देखिये—

प्रीति आय परजले प्रीति अवरा पर जालै
प्रीति गोत्र गालवे प्रीति सुध वश विटाले।
प्रीति काज घर नारि छेद दे छौरु छोडे।
प्रीति लाज परिहरै प्रीति पर खडे पाडे।
धन धरै देत दुखे अग मे, अभाव भर लै अजरो जरै
उदेराज कहै सुणि आतमा, इसी प्रीति जिणऊ करै।

३९ श्रीसार

श्रीसार खतरगच्छीय क्षेमकीर्ति शाखा के श्री रत्नहर्ष के शिष्य थे। ये हिन्दी के अच्छे कवि एव सफल गद्य लेखक थे। इनका समय १७वी शताब्दी का अन्तिम चरण है। अब तक आपकी तीस से भी अधिक कृतिया प्राप्त हो चुकी हैं। कवि की और भी रचनाओ की खोज आवश्यक है।

४० गणि महानन्द

गणि महानन्द के गुरु का नाम विद्याहर्ष था जो तपागच्छ शाखा के हीरविजयसूरी की परम्परा से सम्बन्धित थे। इनकी एकमात्र रचना अजना सुन्दरी रास प्राप्त हुई है जिसे कवि ने सवत् १६६१ मे रायपुर नगर में समाप्त की थी। इसकी एक पाण्डुलिपि जैन सिद्धान्त भवन आरा मे सग्रहित है। एक वर्णन देखिये जिसमे अजना सखियो के साथ खेलने का वर्णन किया गया है—

फूलिय वनह वनमालीय वालीय करइ रे टकोल।
करि कुकुम रग रोलीय घोलिय झकमझोल॥
खेलइ खल खडो थ्लई, मोकली महीयर सात।
अजना सुन्दरी सुन्दरी मजरी गुही करी ठान॥५४॥

४१ सहजकीर्ति

सहजकीर्ति राजस्थानी भाषा के कवि थे। उनका सागानेर निवास स्थान था तथा खरतरगच्छ की क्षेम शाखा के साधु थे। आचार्य हेमनन्दन के शिष्य थे। इनकी गुरु परम्परा मे जिनसागर, रत्नसागर, रत्नहर्ष एव हेमनन्दन के नाम

उल्लेखनीय है। राजस्थान इनका प्रमुख कार्यक्षेत्र माना जाता है। इनके द्वारा निबद्ध रचनाओ मे प्रीति छत्तीसी, शत्रुंजय, महात्म्यरास, सुदर्शन श्रेष्ठिरास, जिनराज सूरि गीत, जैसलमेर चैत्य प्रवाडी, कलावती रास (१६६७), व्यसन छत्तीसी (१६६८), देवराज वच्छराज चौपई (१६७२), अनेक शास्त्र समुच्चय, पार्श्वनाथ महात्म्य काव्य, वैराग्य शतक आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

सहजकीर्ति की कितनी ही रचनायें दिगम्बर शास्त्र भंडारो मे भी उपलब्ध होती है जिनमे चउवीस जिनगणधर वर्णन, पार्श्वभजन वीस तीर्थ कर स्तुति आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। सहजकीर्ति का निश्चित समय तो मालूम नही हो सका लेकिन इनकी अधिकाश रचनायें १७वीं शताब्दी के तृतीय चरण की प्राप्त होती हैं। कवि की भाषा का एक उदाहरण निम्न प्रकार है—

केवल कमलाकर सुर, कोमल वचन विलास।
कवियण कमल दिवाकर, पणमिय फलविधि पास।
सुर नर किन्नर वर भमर, सुन चरण कज जास।
सरल वचन वर सरसती, नमीयइ सोहाग वास।
जासु पसायइ कवि लहइ, कविजन मई जस वास।
हस गमणि सा भारती, देउ प्रभू वचन विलास॥

—सुदर्शन श्रेष्ठिरास

४२ हीरानन्द मुकीम

हीरानन्द मुकीम आगरा के धनाढ्य श्रावक थे। शाहजादा सलीम से उनका विशेष सम्बन्ध था। ये जौहरी थे। यात्रा सघ निकालने मे इन्हे विशेष रुचि थी। कविवर बनारसीदास ने भी अपने अर्द्ध कथानक मे इनके सम्मेदशिखर यात्रा सघ का उल्लेख किया है। श्री अगरचन्द नाहटा के अनुसार 'वीर विजय सम्मेद शिखर चैत्य परिपाटी" मे यात्रा सघो का वर्णन दिया हुआ है। जिसमे साह हीरानन्द के सघ का भी वर्णन आया है। सघ मे हाथी, घोडे, रथ, पैदल और तुमकदार भी थे। सघ का स्थान स्थान पर स्वागत होता था।

हीरानन्द स्वय कवि भी थे। इनके द्वारा लिखी हुई अध्यात्म बावनी" हिन्दी की एक अच्छी कृति मानी जाती है। बावनी की रचना सवत् १६६८ आषाढ सुदी ५ है बावनी का प्रथम एव अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ऊकार सरु पुरुष ईह अलप अगोचर
अतरज्ञान विचारि पार पावई नहि को नर

ध्यान मूल मनि जाणि आणि अतरि हहरावउ।
आतम तत्तु अनूप रूप तसु ततषिण पावउ॥
इम कहइ हीरानन्द सघपति अमल अटल इहु ध्यान थिरि।
सुह् सुरत्ति सहित मन मइ घरउ भुगति मुगति दायक पवर॥१॥

अंतिम पद्य—

मगल करउ जिन पास आस पूरण कलि सुरतर।
मगल करउ जिन पास दास जाके सब सुर नर।
मगल करउ जिन पास जास पय सेवई सुरपति
मंगल करउ जिन पास तास पय पूजइ दिनपति
मुनिराज कहई मगल करउ, जिन सपरिवार श्री कान्ह सुख
वावन्न वरन वहु फल करहु सघपति हीरानद तुव॥५७॥

४३ हेम विजय

हेमविजय आचार्य हीरविजयसूरि के प्रशिष्य एव विजयसेनसूरि के शिष्य थे। सवत् १६३९ मे हीरविजयसूरी अकबर द्वारा आमन्त्रित किये गये थे। इसी तरह विजयसेनसूरि भी सम्राट अकबर द्वारा आमत्रित थे। इस तरह हेमविजय को अच्छी गुरु परम्परा मिली थी। हेमविजयसूरि हिन्दी के भी अच्छे विद्वान थे। इनके द्वारा निर्मित कितने ही पद मिलते हैं इनमे भी नेमिनाथ के पद उल्लेखनीय है एक पद देखिये—

कहि राजमती सुमती सखियान कूं एक खिनेक खरी रहुरे।
सखिरी सगिरि अ गुरी मुही वाहि करति वहुत इसे निहुरे।
अवही तवही कबही जवही यदुराय कू जाय इसी कहुरे।
मुनि हेम के साहिव नेमजी हो, अव तोरन तें तुम्ह क्यू वहुरे।

४४ पदमराज

"अभयकुमार प्रवन्ध" पदमराज कृत हिन्दी काव्य है जिसमे अभयकुमार के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। पदमराज खरतरगच्छ के आचार्य जिनहस के प्रशिष्य एव पुण्यसागर के शिष्य थे। जैसलमेर नगर मे इसकी रचना समाप्त हुई थी। प्रवन्ध का रचना काल सवत १६५० है। प्रवन्ध का अन्तिम पद्य देखिये—

सवत सोलहसइ पंचामि जैसलमेरु नगर उलासि।
खरतरगच्छ नायक जिन हस तस्य सीस गुणवत सस।
श्री पुण्यसागर पाठक सीस, पदमराज पभणइ सुजगीस।
जुग प्रधान जिणचन्द मुणिद विजयमान निरुपम आनन्द।
भणइ गुणइ जे चरित महत, रिद्धि सिद्धि सुख ते पामन्ति।

भट्टारक रत्नकीर्ति

[४६ [

भट्टारक रत्नकीर्ति धर्म गुरु थे। उपदेश देना, विधि विधान कराना एव सघ का सचालन करना जैसे उनके प्रमुख कार्य थे [1]। लेकिन सबसे अधिक विशेपता उनकी काव्य शक्ति थी। वे गुजरात प्रदेश के रहने वाले थे। गुजराती उनकी मातृभाषा थी। लेकिन हिन्दी मे उन्होंने भक्ति परक गीत लिखे और तत्कालीन समाज मे जिन भक्ति के प्रति आकर्षण पैदा किया। रत्नकीर्ति का जन्म गुजरात प्रान्त मे घोघा नगर मे हुआ था। उनके पिता हूवड जातीय श्रेष्ठी देवीदास थे [2]। माता का नाम सहजलदे था। इनके जन्म के समय के सम्बन्ध मे कोई जानकारी नही मिलती लेकिन इतना अवश्य है कि माता ने ऐसे उत्तम पुत्र को पाकर अपने आप को धन्य माना था। पुत्र जन्म पर घर मे ही नही पूरे नगर मे उत्सव आयोजित किये गये थे और माता-पिता भविष्य के सुनहले स्वप्न देखने लगे थे। वालक वडा होनहार था। इसलिए उसको पढ़ने लिखने मे देर नही लगी और थोडे ही समय मे उसने प्राकृत एवं सस्कृत का अध्ययन कर लिया। गुजराती उनकी मातृभापा थी और हिन्दी उसने सहज रूप मे सीख ली थी। थोडे ही समय मे वह अपनी वुद्धि चातुर्य एव विनयशीलता के कारण सवका प्रिय वन गया।

सवत् १६३० में अभयनन्दि भट्टारक गादी पर विराजमान थे। अभयनन्दि आचार्य कुन्दकुन्द की परम्परा मे होने वाली मूलसघ, सरस्वति समाज एव वलात्कारगण शाखा में होने वाले भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र के प्रशिष्य एव अभयनन्दि के शिष्य थे। अभयनन्दि का उस समय काफी प्रभाव था और वे दिगम्बर गच्छ के शिरोमणि थे। गुणो के सागर एव विद्या के केन्द्र थे। भट्टारक अभयनन्दि को जब वालक रत्नकीर्ति की वुद्धि के सम्वन्ध में जानकारी मिली तो वे उसको अपना शिष्य वनाने के लिए आतुर हो गये। एक दिन अकस्मात ही जव अभयनन्दि का घोघा नगर मे विहार हुआ तो वे वालक को देखते ही वडे प्रसन्न हुए और उसकी वुद्धि एव वाक्चातुर्य से प्रभावित होकर उसे अपना शिष्य वना लिया।

---

१ राजस्थान के जैन सन्त-व्यक्तित्व एवं कृतित्व—पृष्ठ संख्या १२७ से १३४

२ हुंवड वशे विवुध विख्यात रे, मात सेहजलदे देवीदास तात रे।
कुवर कलानिधि कोमल काय रे, पद पूजे जेम पातक पलाय रे॥

यद्यपि रत्नकीर्ति ने पहले शास्त्रो का अध्ययन कर रखा था लेकिन भट्टारक अभयनन्दि इससे सतुष्ट नही हुए और पुन उसे अपने पास रखकर सिद्धान्त, काव्य व्याकरण, ज्योतिष एव आयुर्वेद विषयो के ग्रथो का अध्ययन करवाया। बालक व्युत्पन्नमति था इसलिये शीघ्र ही उसने ग्रथो पर अधिकार पा लिया। अध्ययन समाप्त होने के पश्चात् अभयनन्दि ने उसे अपना पट्ट शिष्य घोषित कर दिया। बत्तीस लक्षणो एव बहत्तर कलाओ से सम्पन्न विद्वान युवक को कौन अपना शिष्य बनाना नही चाहेगा।

सवत १६३० के दक्षिण प्रान्त के जालणा नगर मे एक विशेष समारोह आयोजित किया गया। समारोह के आयोजक थे सघपति पाक साह तथा सघवणि रपाई तथा उनके पुत्र सघवी आसवा एव सघवी रामाजी जो जाति से बघेरवाल थे। समारोह मे भ अभयनन्दि ने सवत् १६३० वैशाख सुदि ३ के शुभ दिन भट्टारक पद पर रत्नकीर्ति का पट्टाभिषेक कर दि।। उसका नाम रत्नकीर्ति रखा गया। इस पद पर वे सवत १६५६ तक रहे। भट्टारक पट्टाभिषेक के समय वे सिद्धान्त ग्रथो के परम वक्ता थे तथा आगम काव्य, पुराण, तर्क शास्त्र न्याय शास्त्र, छद शास्त्र, नाटक आदि ग्रथो पर वे अच्छा प्रवचन करते थे।

आकर्षक व्यक्तित्व

सत रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे अनेक पद मिलते हैं जिनमे उनकी सुन्दरता, उनकी विबुधता एव स्वभाव के विस्तृत वर्णन किये गये हैं। इन पदो के रचयिता हैं गणेश जो उनके शिष्यो मे से एक थे। ये पद उस समय लिखे गये थे जब वे विहार करते थे। रत्नकीति की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि गणेश लिखते हैं उनकी आखें कमल के समान थी, उनका शरीर फूल के समान कोमल था जिसमे से करुणा टपकती थी। वे पापो के नाशक थे। वे सकल शास्त्रो के ज्ञाता थे और अपने प्रवचनो को इतना अधिक सरस बना देते थे कि जिसको सुनकर सभी श्रोता गद्-गद् हो जाते थे। कवि ने उन्हे गोतम गणधर की उपमा दी है। इसी तरह एक दूसरे पद में उनकी सुन्दरता का व्याख्यान करते हुए गणेश कवि लिखते हैं कि उनकी काति चन्द्रमा के समान थी। उन की दत पक्ति दाडम के समान थी। उनकी वाणी से मधुर रस टपकता था। उनके अधरोष्ठ बिम्ब फल के समान थे। उनके हाथ अत्यधिक कोमल थे तथा हृदय विशाल था। वे पाचो महाव्रतो के धारी, पाच समिति एव तीन गुप्ति के पालक थे। उनका उदय पृथ्वी पर अभयकुमार के रूप मे हुआ था वे दिगम्बर

आगम काव्य पुराण सुलक्षण, तर्क न्याय गुरु जाणे जी।
छद नाटिका पिंगल सिद्धान्त, पृथक पृथक वखाणे जी॥
गीत/रजि० सं० १/पृष्ठ ६६-६७

धर्म के शृंगार स्वरूप थे। उन्होंने कामदेव पर बालकपने से ही विजय प्राप्त कर ली थी। वे अत्यधिक विनयी, विवेकी, मानव थे और दान देने मे उन्होंने देवताओ को भी पीछे छोड दिया था। विद्वत्ता मे वे अकलक निष्कलक एव गोवर्धन के समान थे। कवि ने लिखा है ऐसे महान सत को पाकर कौन समाज गौरवान्वित नही होगा। एक अन्य पद मे कवि गणेश ने लिखा है कि वे गोमटसार के महान ज्ञाता थे और अभयकुमार के समान व्युत्पन्न मति थे। उनके दर्शन मात्र से ही विपतिया स्वयमेव दूर भाग जाया करती थी।

विहार

रत्नकीर्ति २७ वर्ष तक भट्टारक रहे। इस अवधि मे उन्होने सारे देश मे विहार करके जैन धर्म एव सस्कृति तथा साहित्य का खूब प्रचार प्रसार किया। उनका मुख्य कार्यक्षेत्र गुजरात एव राजस्थान का वागड प्रदेश था। बारडोली मे उनकी भट्टारक गादी थी इसलिये उन्हे बारडोली का सत भी कहा जाता है। उनकी गादी की लोकप्रियता आसमान को छूने लगी थी इसलिये उन्हे स्थान-स्थान से सादर निमन्त्रण मिलते थे। वे भी उन स्थानो पर विहार करके अपने भक्तो की बात रखते थे। वे जहा भी जाते सारा समाज उनका पलक पावडे बिछाकर स्वागत करता और उनके मुख से धर्म प्रवचन सुनकर कृत कृत्य हो जाता। उनके विहार के सबध मे लिखे हुए कितने ही गीत मिलते है जिनमे उनके स्वागत के लिये जन भावनाओ को उभारा गया है। यहा ऐसा एक पद दिया जा रहा हैं—

सखी री श्रीरत्नकीरति जयकारी
अभयनद पाट उदयो दिनकर, पच महाव्रत धारी।
सास्त्रसिधात पुराण ए जो सो तर्क वितर्क विचारी।
गोमटसार सगीत सिरोमणी, जाणी गोयम अवतारी।
साहा देवदास केरो सुत सुखकर सेजलदे उर अवतारी।
गणेश कहे तुम्हे वदो रे भवियण कुमति कुसग निवारी॥

इसी तरह के एक दूसरे पद मे और भी सुन्दर ढग से रत्नकीर्ति के व्यक्तित्व को उभारा गया है जिसके अनुसार ७२ कलाओ से युक्त, चन्द्रमा के समान मुख वाले गच्छ नायक, रत्नकीर्ति विशाल पाडित्य के धनी हैं। जिन्होने मिथ्यात्वियो के मन का मदन किया है तथा वाद विवाद मे अपने आपको सिंह के समान सिद्ध किया है। सरस्वती जिनके मुख मे विराजती है। वह मान सरोवर के हस के समान, नभ मडल में चन्द्रमा के समान सम्यक चरित्र के धारी, तथा जैनधर्म के मर्मज्ञ, जालणापुर मे प्रसिद्धि प्राप्त, मेघावी, सघवी तोला, आसवा, मली के आराध्य ऐसे भट्टारक

रत्नकीर्ति का जोरदार स्वागत के लिये कवि गणेश जन सामान्य को प्रेरित करता हैं।[1]

एक अन्य पद में भट्टारक रत्नकीर्ति खान मलिक द्वारा सम्मानित हुए थे ऐसा भी उल्लेख मिलता है।[2] रत्नकीर्ति पोरवन्दर गये। घोघा नगर मे तो वे जाते ही रहते थे। वारडोली उनका केन्द्र था। वागड प्रदेश के सागवाडा गलियाकोट एव वासवाडा ग्रादि मे भी वरावर जाते रहते थे।

f
प्रतिष्ठा वधान

रत्नकीर्ति ने कितने ही विधान एव प्रतिष्ठाए सम्पन्न करवायी थी। पचकल्याणको मे वे स्वय प्रतिष्ठाचार्य वनते ग्रौर प्रतिष्ठाग्रो का सचालन करते थे। उनके द्वारा सम्पन्न तीन प्रतिष्ठाग्रो का वर्णन मिलता है जिनके माध्यम से वे तत्कालीन समाज मे धार्मिक भावनायें जाग्रत किया करते थे। सबसे पहिले उन्होंने दादूनगर में सवत १६३६ मे पचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न करवायी।[3]

सवत १६४३ मे वारडोली नगर मे ही बिम्ब प्रतिष्ठा का ग्रायोजन सम्पन्न करवाया। नगर मेचारो प्रकार के सघ का मिलन हुग्रा। भट्टारक रत्नकीर्ति के परामर्शानुसार ककोली। (निमन्त्रण पत्र) लिखे गये जिन्हें गावो मे एव नगरो मे भेजा गया। विशाल मडप वनाया गया तथा प्रतिष्ठा महोत्सव में ग्र कुरारोपण, जलयात्रा ग्रादि विविध क्रियाए सम्पन्न हुई। पच कल्याणक प्रतिष्ठा समाप्ति पर प्रतिष्ठाकारको के रत्नकीर्ति ने तिलक किया उनके साथ तेजवाई, जैमल, मेघाई,

---

१ कला वहोतरी फोडामणो रे, कमल वदन करुणाल रे।
गछ नायक गुण ग्रागलो रे, रत्नकीरति विवुध विशाल रे॥
ग्रावो रे भामिनी गजगामिनी रे, स्वामि जी वाणि विख्यात रे।
ग्रभयनद पद कज दिनकर रे, धन एहना मात ने तात रे॥

२ लक्षण वत्तीस सकल अ गि वहोतरि, खान मलिक दिये मानजे।
गोरगीत पृष्ठ सख्या १९५।

३ मागसीर सुदी पचमी दिने, कुकम चित्रि लखाय।
देस देस पठावे पडत, आवे सज्ज वृद।
बिव प्रतिष्ठा जोव जइये पुण्य तस वर कद॥

भानेज गोपाल, वेजलदे, मानवाई वहिन आदि सभी थे। यह प्रतिष्ठा संवत १६४३ वैशाख वुदी पञ्चमी गुरुवार के शुभ दिन समाप्त हुई थी।[४]

वलसाड नगर में फिर उन्होंने पच कल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई। यह प्रतिष्ठा हूवड वशीय मल्लिदास ने कराई थी। उसकी पत्नी का नाम राजवाई था। उसके जव पुत्र जन्म हुआ तव मल्लिदास ने दान आदि मे खुव पैसा लगाया तथा एक पच कल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन किया। मगसिर सुदी पचमी के दिन कुंकुम पत्रिका लिखी गई।

चारो ओर गावो मे पडितो को भेजा गया। पत्रिका मे लिखा गया कि जो भी पच कल्याणक प्रतिष्ठा को देखेगा उसे महान पुण्य को प्राप्ति होगी।[१] पन्च कल्याणक प्रतिष्ठा की पूरी विधि सम्पन्न की गयी। अ कुरारोपण, वस्तु विधान नादी मडल, होम, जलयात्रा आदि विधान कराये गये। मडल मे भट्टारक रत्नकीर्ति सिंहासन पर विराजमान रहते थे। विविध वाद्य यत्र वजाये गये थे। सघपति मल्लिदास, सघवेण मोहनदे, राजवाई आदि की प्रसन्नता की सीमा नही रही। अन्त मे कलशाभिषेक सम्पन्न हुए तव प्रतिष्ठा समारोह को समाप्ति की घोपणा की गयी।[२]

इसके पश्चात माघ सुदी एकदशी के शुभ दिन भट्टारक रत्नकीर्ति ने ब्रहम

---

१ एणी परे सज्जन आवयाए श्रीजिन मंडप व्दार के
उत्सव सोभताए याग मडल विध सोभतिए।
संघपूज सुखकार के, उत्सव अति घणाए
जिन उपार कुंभ ढालायाए, जय जयकार सुयायके॥
पच कल्याणक विध हवाए, श्री रत्नकीर्ति गुरुराय के॥

२ अरे सघ मेल्या विविध देशना, सोल छतीस ए।
वैशाख वुदि एकदसी सोमवार, प्रतिष्ठा तिलक असीस ए।
गीत पृष्ठ सख्या 65

३ श्री रत्नकीर्ति भट्टारक वचने, कंकोलि लखाई जे।
गाँम गाँमनाँ सघ सेजवाला मे मे पाला आवे॥
मडल रचना अति घणी उपमा, अकोरारोपण उदार जे।
जल यात्रा सातिक सघ पूजा, अन्न दान अपार जी॥
संवत सोल छेहतालि, वेशाख वदि पचमी ने गुरुवार जी।
रत्नकीर्ति गोर तिलक करे, धन्य श्री सघ जय जयकार॥

जयसागर को आचार्य पद पर दीक्षित किया। सर्व प्रथम प्रासुक जल से स्नान कराया गया। भट्टारक रत्नकीर्ति ने उसके माथे पर तिलक किया तथा पाच महाव्रतो की अगीकार कराया गया।[६]

इस प्रकार भट्टारक रत्नकीर्ति जीवन पर्यन्त देश के विभिन्न भागो में विहार करते रहे। वास्तव मे भट्टारक रत्नकीर्ति का युग भट्टारको का स्वर्ण युग था जब सारे देश मे उनके त्याग एव तपस्या की इतनी अधिक प्रभावना थी कि समाज का अधिकाश भाग उन पर समर्पित था। उनके आदेश को शिरोधार्य करने मे ही जीवन की उपलब्धि मान जाता था। भट्टारक सस्था भी अपने आपको साधु समाज का एक प्रतिनिधि वनने का पूरा प्रयास करती रही। समय समय पर उसने अपने को योग्य प्रमाणित किया और समाज एव सस्कृति के विकास मे पूर्ण जागरुक रहा। रत्नकीर्ति का विशाल व्यक्तित्व समाज की आशाओ का केन्द्र था।

शिष्य परिवार

रत्नकीर्ति वैसे तो अनेको शिष्यो के आचार्य थे, जीवन निर्माता थे और उनके मार्गदर्शक भी, थे लेकिन उनमे से कुमुदचन्द, ब्रह्म जयसागर, गणेश, राधव एव दामोदर के नाम विशेपत उल्लेखनीय है। इन सभी ने रत्नकीर्ति के सम्वन्ध मे पद एव गीत लिखे हैं। कुमुदचन्द्र तो रत्नकीर्ति के पश्चात भट्टारक गादी पर ही वैठे थे। वे योग्य गुरु के योग्य शिष्य थे। लेकिन गनेश ने रत्नकीर्ति के सबध मे सबसे अधिक पद एव गीत लिखे हैं। इन सबके सम्वन्ध मे आगे विस्तृत प्रकाश डाला जावेगा। ऐसा लगता है कि रत्नकीर्ति के साथ उनका शिष्य परिवार भी चलता था और वह उनके प्रति अपनी भक्ति भाव प्रगट करता रहता था। रत्नकीर्ति की परम्परा के भट्टारको को छोडकर अन्य भट्टारको के सम्वन्व मे इस प्रकार के गीत एव पद प्राय नही मिलते हैं।

कृतित्व

रत्नकीर्ति भक्त कवि थे। नेमिराजुल के जीवन ने उन्हे सबसे अधिक

---

३ माघ सुदी एकादसीए ए सोभन सुक्रवार के।
श्री रत्नकीर्ति सुरीवर हसा तिलक हवा जयकार के
ब्रह्म जयसागर जाणसि ए आचारज पद सार के।
जल यात्रा जन देखताए, श्री रत्नकीर्ति यतिराय के।
पच महाव्रत आपया ए सघ सानीध्य गुरुराय के।
मल्लिदासनी वेल

प्रभावित किया था। यही कारण है कि उनकी अधिकाश कृतियो मे ये दोनो ही आराध्य रहे हैं। नेमिराजुल का इस प्रकार का वर्णन अन्य किसी कवि द्वारा लिखा हुआ नही मिलता है। अब तक जितनी खोज हो सकी है उसके अनुसार कवि के ३८ पद प्राप्त हो चुके हैं तथा ५ अन्य लघु रचनाये हैं। यद्यपि ये सभी लघु कृतियाँ हैं लेकिन भाव एव विषय की दृष्टि से सभी उच्च कोटि की कृतियाँ हैं। रत्नकीर्ति सन्त थे लेकिन अपने पदो मे उन्होने विरह एव शृगार दोनो ही का अच्छा वर्णन किया है। वे राजुल के सौन्दर्य एव उसकी तडफन से वडे प्रभावित ` , यही कारण है उनकी प्रत्येक कृति मे दोनो ही भावो की कमी नही है।

सावन का महिना विरही युवतियो के लिये असह्य माना जाता है। जब आकाश मे काले काले वादलो की घटा छा जाती है। कभी वह गरजती है तो कभी वरसती है। ऐसी प्राकृतिक वातावरण मे राजुल भी अकेली कैसे रह सकती थी। इसलिये वह भी अपने विरह को अपनी सखियो के समक्ष वहुत ही करुणामय शब्दो में निम्न प्रकार व्यक्त करती है—

सखी री सावनी घटाई सतावे
रिमझिम बून्द वदरिया वरसत, नेमि नेरे नही आवे।
कूजत कीर कोकिला वोलत, पपीया वचन न लावे।
दादूर मोर घोर घन गरजत, इन्द्र धनुष डरावे॥सखी॥
लेख लखू री गुपति वचन को, जदुपति कू जु सुनावे
रतनकीरित प्रभु निठोर भयो, अपनो वचन विसरावे॥

रतनकीर्ति ने उक्त पद मे राजुल की विरही अवला का वहुत ही सही चित्रण किया है। इसमे राजुल की आत्मा वोल रही है और वह नेमि पिया के मिलन के लिये व्याकुल हो चली है। कभी कभी पति त्याग के कारण को लेकर राजुल के मन मे अन्तर्द्वन्द्व होने लगता है। पशुओ की पुकार का वहाना उसके समझ मे नही आता और वह कहती है कि सम्भवत मुक्ति रूपी स्त्री के वरण के लिये नेमि ने राजुल को छोडी है। पशुओ की पुकार तो एक वहाना है। इसलिये वह कह उठती है कि "रत्नकीर्ति प्रभु छोडी राजुल मुगति वधु विरमाने।"

कभी कभी राजुल नेमि के घर आने का स्वप्न लेने लगती है और मन मे प्रफुल्लित हो उठती है। एक ओर नेमि हरी है तथा दूसरी ओर वह स्वय हरिवदनी है। हरि के सदृश ही उसकी दो आखे हैं तथा अधरोष्ठ भी हरिलता के रग वाले हैं। इस तरह वह अपने शरीर के सभी अगो को हरि के अगो के समान मान वैठती है और मन में प्रसन्न हो उठती हैं।

लेकिन जब उसे वास्तविक स्थिति का बोध होता है तो वह नेमि के विरह मे तडपने लगती है और एक रात्रि के सहवास के लिये ही उनसे प्रार्थना करने लगती है। वह कहती है कि प्रात. होने पर चाहे वे दीक्षा स्वीकार करलें लेकिन एक रात्रि को कम से कम उनके साथ व्यतीत करने पर वह अपने जीवन को धन्य समझ लेगी।

नेम तुम आवा धरिय धरे
एक रयनि रही प्रात पियारे बोहोरी चारित धरे ।।नेम।।

और जब नेमि राजुल को बार बार पुकार पर भी नही आते हैं तो राजुल भी रुठने का बहाना करती है क्योंकि पता नही रुठने से ही नेमि आ जावे इसलिये वह नेमि के पास अपना सन्देश भेजती है कि न वह हाथ मे मेहन्दी माडेगी और न आखो मे काजल डालेगी। वह सिर का अलकार नही करेगी और न मोतियो से अपनी माग को भरेगी। उसे किसी से भी बोलना अच्छा नही लगता। वह तो नेमि के विरह मे ही तडपती रहेगी और उनकी दासी बनकर रहना चाहेगी।

न हाथे मडन करू कजरा नेन भरू
होउ रे वेरागन नेम की चेरी।
सीस न मागन देउ माग मोती न लेउ।
अब पोर हू तेरे गुनकी चेरी।

नेमि के विरह मे राजुल पागल हो जाती है इसीलिये कभी वह अपनी सजनी से पूछती है तो कभी चन्द्रमा से बात करने लगती है। कभी वह कामदेव को उल्हाना देती है तो कभी वह जलधर से गर्जना नही करने की प्राथना करती है। बडा दर्द भरा है कवि के गीत मे। राजुल के हृदयगत भावो को उभारने मे कवि पूर्णत सफल हुआ है।

सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनी रे।
पीयु घर आवे तो जीव सुख पावे रे।।
सुनि रे विधाता चन्द सतापी रे
विरहनी बन्ध के सफेद हुआ पापी रे।
सुन रे मनमथ वत्तिया एक मुझ रे।

नेमि राजुल के अतिरिक्त भट्टारक रत्नकीर्ति ने भगवान राम के स्तवन के रूप में पद्य लिखे हैं। कवि ने राम की जिस रूप मे स्तुति की है उसमे उसने

महाकवि तुलसीदास जैसी शैली को अपनाया है। ऐसा मालूम होता है कि महाकवि तुलसी एव सूरदास ने राम एव कृष्ण भक्ति की जो गगा बहायी थी उसमे रत्नकीर्ति अपने आपको नही बचा पाये और वे भी राम भक्ति मे समा गये और 'वदेह जनता शरण" तथा कमल वदन करुणा निलय जैसे कुछ सुन्दर भक्ति पूर्ण पद लिखकर जन मानस को राम भक्ति मे डुबो दिया। कवि का एक पद देखिये—

वदेह जनता शरण
दशरथ नदन दुर्गति निकंदन, राम नाम शिव करन ॥१॥

अमल अनत अनादि अविकल, रहित जनम जरा मरन।
अलख निरजन वुध मन रजन, सेवक जग अघव्रत हरन ॥२॥

काम रूप करुणा रस फरिस, सुर नरनायक नुत चरण।
रतनकीरति कहे सेवो सुन्दर भवउदधि तारन तरन ॥३॥

रतनकीर्ति के अब तक निम्न पद एव कृतिया प्राप्त हो चुकी हैं।

१ सारँग ऊपर सारग सोहे सारगत्यासार जी
२ सुण रे नेमि सामलीया साहेब क्यो वन छोरी जाय
३ सारग सजी सारग पर आवे
४ वृषभ जिन सेवो वहु प्रकार
५ सखी री सावन घटाई सतावे
६ नेम तुम कैसे चले गिरिनार
७ कारण कोउ पीया को न जाणे
८. राजुल गेहे नेमी जाय
९ राम सतावे रे मोही रावन
१० अब गिरि वरज्यो न माने मोरो
११ नेमि तुम आवो घरिय घरे
१२ राम कहे अवर जया मोही भारी
१३ दशानन वीनती कहत होइ दास
१४ वरज्यो न माने नयन निठोर
१५ झीलने कहा करयो यदुनाथ
१६ सरद की रयनि सुन्दर सोहात
१७ सुन्दरी सकल सिंगार करे गोरी
१८ कहा थे मडन करु कजरा नैन भरु
१९ सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनी रे

२० रथडो नीहालती रे पूछति सहे सावन नी वाट
२१ सखी को मिलावो नेम नरिंदा
२२ सखी री नेम न जानी पीर
२३ वदेह जनता शरण
२४ श्रीराग गावत सुर किन्नरी
२५ श्रीराग गावत सारगधरी
२६ आजू आली आये नेम नो साउरी
२७ वली वधो का न वरज्यो अपनो
२८ आजो रे सखि सामलियो वहालो रथि परि रुडि आवे रे
२९ गोखि चडी जुए राजुल राणी नेमिकुवर वर जावे रे
३० आवो सोहामणीसुन्दरी वृन्द रे पूजिये प्रथम जिणद रे
३१ ललना समुद्रविजय सुत साम रे यदुपति नेमकुमार हो
३२ सुणि सखि राजुन कहे हैडे हरप न माय लाल से
३३ सशधर वदन सोहामणि रे, गजगामिनी गुणमाल रे
३४ वणारसी नगरी नो राजा अश्वसेन का गुणधार
३५ श्रीजिन सनमति अवतरया ना रगी रे
३६ नेम जी दयालुडारे तू तो यादव कुल सिणगार
३७ कमल वदन करुणा निलय
३८ सुदर्शन नाम के मैं वारि

अन्य कृतिया

३९ महावीर गीत
४० नेमिनाथ फागु
४१ नेमिनाथ का वाहरमासा
४२ सिद्ध धूल
४३, वलिभद्रनी वीनती
४४ नेमिनाथ वीनती

उक्त नामाकित पदो के अतिरिक्त रत्नकीर्ति को सवते वडी रचना "नेमिनाथ फागु" है। इस फागु मे भगवान नेमिनाथ एव राजुल का जीवन वर्णित हैं। 'फागु" नामाकित इस कृति मे कवि शृ गार रस मे अधिक बहे हैं और प्रत्येक वर्णन को शृ गार प्रधान वना दिया है। राजुल की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि ने उसे एक से एक सुन्दर उपमा मे प्रस्तुत किया हैं। ऐसी ही चार पक्तिया पाठको के अवलोकनार्थ प्रस्तुत की जा रही है।

चद्र वदनी मृग लोचनी मोचनी खजन मीन ।
वासग जीत्यो वेणिह, श्रेणिय मधुकर दीन
युगल गल दीये सशि, उपमा नाशा कीर
अवर विद्रुम सम उपता, दतनू निर्मलनीर ॥

फाग मे ५८ पद्य है जिनमे राजुल नेमि का जन्म से लेकर निर्वाण तक की घटना का वर्णन किया गया है। फाग मे भी राजुल की विरह वेदना को सशक्त शब्दो मे व्यक्त करने का कवि का ध्येय रहा है। और उसमे कवि पूर्णत सफल भी रहे हैं।

फाग का रचना स्थान हासोट नगर रहा था जो गुजरात का प्रमुख सास्कृतिक नगर था। फाग की राग केदार है।[1]

वाहरमासा भट्टारक रत्नकीर्ति की यह कृति भी वडी रचनाओ मे से हैं। इसमे नेमि के वियोग मे राजुल के वारह महिने कैसे व्यतीत होते हैं इसका सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि का वारहमासा जेठ मास से प्रारम्भ होता है तथा प्रत्येक महिने का वह विस्तृत वर्णन करता हैं वह राजुल के विरही जीवन के प्रत्येक मनोगत भावो को उभारना चाहता है जिसमे वह पर्याप्त रूप से सफल हुआ है।

आषाढ मास आते ही पति का विरह और भी सताने लगता हैं। दादुर क्या वोलते हैं मानो प्राण ही निकलते हैं। घनी वर्षा होती हैं। अधेरी रात्रिया होती हैं तो पिय की वाट जोहते-जोहते आखो मे आसू आ जाते हैं। पपीहा पिउ पिउ वोलने लगता है तो राजुल कैसे धैर्य धारण कर सकती है। वृक्ष भी आपस मे हवा के झोको के साथ जव हिलते हैं तो वे परस्पर मे वात करते हुए लगते हैं। और जव मयूर अपने पखो को फैलाकर मयूरी के मन को प्रसन्न करता है तो मन अधीर हो जाता है। जव आकाश मे विजली झवक-झवक कर भभकने लगती है तो उसकी कोमल काया उसे कैसे सहन कर सकती है। विना पिया के वह अकेली कैसे रह सकती है।

तिम तिम नाहनो नेह माले आपाढि अगाल ।
दादुर वोले प्राण तोले वरसाते विशाल ।

---

१ नेमि विलास उल्हास स्यु, जो गासे नर नारि
रत्नकीरति सूरीवर कहे, ते लहे सौख्य अपार ॥ १ ॥
हासोट माहि रचना रची, फाग राग केदार
श्री जिन जुग धन जाणये, सारदा वर दातार ॥ २ ॥

दिवस अधारी रातडी वलि वाट घाटे नीर
वापीयडो पिउ पिउ वोले किम धरु मन धीर
तरु तणी साखा करे भाषा सावजा सोहेत।
रितुकाल मोर कला करी मयूरी मन मोहेत।
आज सखी अगाल आव्यो उन्हई ने मेह।
झवक झवके विजली किम सेह कोमल देह
आयो पणा पीउने पासे करे कामिनी लाड
किम रहु हू एकली रे आवयो आषाढ।

भाषा—वारहमासा की भाषा पर गुजराती का अधिक प्रभाव है क्योंकि इसकी रचना भी घोघा नगर के जिनचैत्यालय मे की गई थी। घोघा नगर १६वी शताब्दी मे भट्टारको के विहार का प्रमुख केन्द्र था। वहा श्रावको की अच्छी वस्ती थी। जिन मन्दिर था। वह सागर के किनारे पर बसा हुआ था।

शेष रचनाए—कवि की अन्य सभी रचनाए गीत रूप मे हैं जिनमे नेमि राजुल प्रकरण ही प्रमुख रूप से प्रस्तुत किया गया है। उसके गीतो की आत्मा नेमि राजुल इसी तरह है जिस तरह मीरा के कृष्ण रहे थे। अन्तर इतना सा है कि एक ओर नेमिनाथ विरागी जीवन अपनाते हैं। अपनी तपस्या मे लीन हो जाते हैं और राजुल उनके लिये तडफती = अपने विरह की व्यथा सुनाती है, रोती है और अन्त मे जव नेमि तपस्वी जीवन पर ही बने रहते हैं तो वह स्वय भी तपस्विनी बन जाती है तथा भोगो से विरक्त होकर जगत के समक्ष एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत करती है। नेमि राजुल के प्रसग मे भट्टारक रत्नकीर्ति अपने गीतो के माध्यम से राजुल के मनोगत भावो का, उसकी विरही जीवन का सजीव चित्र उपस्थित करता है जबकि मीरा स्वय ही राजुल बनकर कृष्ण के दर्शनो के लिये लालायित रहती है स्वय गाती है, नाचती है और अपने आराध्य की भक्ति मे पूर्णत समर्पित हो जाती है।

भट्टारक रत्नकीर्ति अपने समय के प्रमुख सन्त थे। उनका पूर्णत विरागी जीवन था। साथ ही मे वे लेखनी के भी धनी थे। अपने भक्तो, अनुयायियो एव प्रशसको के अतिरिक्त समस्त समाज को नेमि राजुल के प्रसग से जिन भक्ति मे समर्पित करना चाहते थे। लेकिन जिन भक्ति का उद्देश्य भोगो की प्राप्ति न होकर कर्मों की निर्जरा करना था। इसलिये ये गीत १७वी सदी मे बहुत लोकप्रिय रहे और समस्त देश मे गाये जाते रहे।

वे अपने समय के प्रथम सन्त थे जिन्होने नेमि राजुल के प्रसग को अपने

पदो की विषय वस्तु बनाया। उनके समय मे मीरा एव सूरदास के राधा कृष्ण से सम्वन्वित पद लोकप्रिय वन चुके थे और भक्ति रस से ओतप्रोत भक्त को उनके अतिरिक्त कुछ नही दिख रहा था भट्टारक रत्नकीर्ति ने समय की गति को पहिचाना और अपने अनुयायियो एव समाज का ध्यान आकृष्ट करने के लिये नेमि राजुल कथानक को इतना उछाला कि उसमे उन्हे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। राजुल के मनोगत भावो को व्यक्त करते समय वे कभी स्वाभाविकता से दूर नहीं हटे और जो कुछ भाव तोरण द्वार से लौटने पर अपने पति के प्रति किसी नवोढा के होने चाहिये उन्ही भावो को अपने पदो मे उतारने मे उन्हे आशातीत सफलता मिली।

भट्टारक कुमुदचन्द्र

[४७]

कुमुदचन्द्र भट्टारक रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्य थे। वे भट्टारक गादी पर रत्नकीर्ति के द्वारा अभिषिक्त किये गये और बागड एव गुजरात प्रदेश के धर्माधिकारी बन गये। भ रत्नकर्ति ने अपनी गादी की यशोगाथा को चारो और फैला दिया था इसलिए कुमुदचन्द्र के भट्टारक बनते ही उनकी भी कीर्ति चारो और फैलने लगी। जब वे भट्टारक बने तो युवा थे। सौन्दर्य उनके चरणो को चूमता था। सरस्वती की उन पर पहिले से ही कृपा थी। उनकी वाणी मे आकर्षण था इसलिये वे जन-जन के विशेष प्रिय बन गये और समाज पर उनका पूर्ण वर्चस्व स्थापित हो गया।

कुमुदचन्द्र का जन्म गोपुर ग्राम मे हुआ था। पिता का नाम सदाफल एव माता का नाम पदमाबाई था। वे मोढवश के सच्चे सपूत थे।[1] उनका जन्म का नाम क्या था इसका कही उल्लेख नही मिलता लेकिन वे जन्म से ही होनहार थे युवावस्था के पूर्व ही उन्होने सयम धारण कर लिया था। उन्होने इन्द्रियो के नगर की उजाड कर कामदेव रूपी नाग को सहज के ही जीत लिया।[2] अध्ययन की ओर उनकी प्रारम्भ से ही रुचि थी इसलिए वे रात दिन व्याकरण, नाटक, न्याय, आगम-शास्त्र, छद शास्त्र एव अलकारो का अध्ययन किया करते थे।[3] गोम्मटसार जैसे ग्रन्थो का उन्होने विशेष अध्ययन किया था। गुर्वावली गीतो मे कुमुदचन्द्र का निम्न प्रकार गुणगान गाया गया है—

---

१ मोढ वश शृगार शिरोमणि साह सदाफल तात रे
जायो जतिवर जुग जयवन्तो पदमाबाई सोहात रे।

२ बालपणे जिणे सयम लिधो, घरीयो वेराग रे।
इन्द्रिय ग्राम उजारया हेला, जीत्यो मद नाग रे।

३ अहर्निश छन्द व्याकरण नाटिक भणे
न्याय आगम अलकार।
वादीगज केशरी विरूद्ध वास रे
सरस्वती गच्छ सिणगार रे। गीत धर्म सागर कृत

तस पद कुमुद कुमुदचन्द्र, क्षमावत गुरु गत तद्र ।
मुनीन्द्र चद्र समो यश उजलोए
\+ + + + + +
कुमुदचन्द्र जेहनो चादलो, रत्नकीरति पाटे गोरह भलो ।
मोढवश उदयाचल रवि, जेहना वचन वखार्णे कवि ।

एक गीत मे कुमुदचन्द्र की सभी दृष्टियो से प्रशसा की गई हैं। गीत के अनुसार पचाचार, पाँच समिति एव तीन गुप्ति के वे पालनकर्ता थे। क्रोध कपाय पर उन्होंने प्रारम्भ से ही विजय प्राप्त करली थी। कामदेव पर भी उनकी विजय अदभुत थी इसलिये वे शीलश्रृ गार कहलाते थे। गीत मे उनकी जन्मभूमि, माता पिता एव वश सभी का गुणानुवाद किया है—यही नही उनकी शारीरिक विशेपताओ को भी गिनाया गया हैं।

समिति गुपति आदि ए पाले चरित्र तेर प्रकार।
क्रोव कपाय तजी रे वेगे जीत्यो रति भरतार।
शील शृगार सोहे रे वुद्धि उदयो अभयकुमार।।
\+ + + + + +
आखडी कज पाखडी रे अधर रग रह्यो परवाल
राणी माभली रे लाजीगई कोमल वन अतराल।
शरीर सोहामणू रे गमने जीत्यो गज गुणगान।
को कहे गुरु अवतारे देउ दान मान मोती माल।।

सवत् १६५६ वैशाख मास में वारडोली नगर मे रत्नकीर्ति ने स्वय अपने शिष्य कुमुदचन्द्र को अपने ही हाथो से भट्टारक पद पर प्रतिष्ठापित कर दिया।[1] यह था भट्टारक रत्नकीर्ति का त्याग। वे उसी समय से मूलसघ सरस्वती गच्छ के श्रृ गार कहलाने लगे। शास्त्रार्थ करने में वे अत्यधिक चतुर थे।[2]

विहार

कुमुदचन्द्र ने भट्टारक बनते ही गुजरात एव राजस्थान मे विहार किया और

---

१ सवत् सोल छपन्ने वैशाखे प्रगट पट्टीधर थाप्या रे।
रत्नकीरति गोर वारडोली वर सूर मंत्र शुभ आप्या रे।।
२ मूल सघ मगट मणि माहत सरसति गच्छ सोहावे रे।
कुमुदचद्र भट्टारक आगलि वादि को वादे न आवे रे।।

अपने ओजस्वी, मधुर तथा आकर्षक वाणी से सबका हृदय जीत लिया। वे जहाँ भी जाते अभूतपूर्व स्वागत होता तथा समाज उनके लिये पलक पावडे बिछा देता। कु कम छिडका जाता तथा चौक पूर करके बधावा गाये जाते। चारो ओर श्रद्धा भक्ति एव गुणानुवाद का वातावरण बन जाता। उनके दर्शनमात्र से समाज अपने आपको धन्य मान लेता।[1]

कुमुदचन्द्र के एक शिष्य सयमसागर ने तो समस्त समाज से उनके स्वागत करने के लिये निम्न पद लिखा हैं —

आवो साहेलडी रे सहू मिलि सगे
वादो गुरु कुमुदचन्द्र ने मनि रगे।
छद आगम अलकार नो जाण
चारु चितामणी प्रमुख प्रमाण।
तेर प्रकार ए चारित्र सोहे
दीठडे भवियण जन मन मोहे।
साह सदाफल जेहनो तात
धन जनम्यो पदमावाई मात।
सरस्वती गच्छ तणो सिणगार
वेगस्यु जीतियो दुर्द्धरमार।
महीयले मोढवशो सु विख्यात
हाथ जोडाविया वादी सघात।
जे नरनार ए गोर गुण गावे
सयमसागर कहे ने सुखी थाय॥

गनेश कवि ने भी एक कुमुदचन्द्रनी हमची लिखी है जिसमे उसने कुमुदचन्द्र के गुणों का विस्तृत वर्णन किया है। वारडोली नगर में भट्टारक गादी स्थापित करने एव उस पर कुमुदचन्द्र को पट्टस्थ करने मे सघपति कहानजी,स सहस्रकरण जी मल्लिदास एव गोपाल जी का सबसे वडा योगदान था। हमची में कुमुदचन्द्र के पाडित्य एव विद्वत्ता की निम्न शब्दो में प्रशसा की है

पडित पणे प्रसिद्ध प्राक्रमी वागवादिनी वर एहने
सेवो सुरतरु चिन्त्यो चितामणि उपमा नही कहे ने रे

---

1 सुन्दरि रे सहु आवो, तम्हे कु कमु छडो देवडावो
वास मोतिये चौक पूरावो, रुडा सह गुरु कुमुदचन्द्र ने वधावे॥

भट्टारक पद स्थापन के पश्चात् वारडोली नगर साहित्यिक, धार्मिक एव आध्यात्मिक गतिविधियो का केन्द्र वन गया। कुमुदचन्द्र की वाणी सुनने के लिये वहा धर्म प्रेमी समाज का जमघट रहता था। कभी तीर्थ यात्रा करने वालो का सघ उनका आशीर्वाद लेने आता तो कभी कभी विभिन्न नगरो का समाज उन्हें सादर निमन्त्रण देने आता। कभी वे स्वय ही सघ का नेतृत्व करते तथा तीर्थों की यात्रा कराने में सहयोग देते। सवत १६८२ मे कुमुदचन्द्र सघ सहित घोघा नगर आये जो उनके गुरु रत्नकीर्ति का जन्म स्थान था। वारडोली वापिस लौटने पर श्रवको ने उनका अभूतपूर्व स्वागत किया। इसी वर्ष उन्होंने गिरनार जाने वाले एक सघ का नेतृत्व किया था और उसमें अभूतपूर्व सफलता पाई थी।[1]

साहित्य सेवा

कुमुदचन्द्र वडे भारी साहित्यिक भट्टारक थे। साहित्य सर्जना में वे अधिक विश्वास करते थे। इसलिये भट्टारक पद के कर्त्तव्य से अवकाश पाते ही वे काव्य रचना में लग जाते। इसलिये एक गीत मेउन के लिये "अहनिशि छद व्याकर्ण नाटिक भणे न्याय आगम अलकार" लिखा गया है। कुमुदचन्द्र की अब तक जितनी रचनायें मिली हैं वे सव राजस्थानी भाषा की ही हैं। उनकी अब तक २८ छोटी वडी कृतिया एव ३० से भी अधिक पद मिल चुके हैं। लेकिन शास्त्र भण्डारो की खोज पोने पर और भी रचनायें मिलने की आशा है। उनकी प्रमुख रचनाओ के नाम निम्न प्रकार है —

१ भरत वाहुवलि छंद
२ अंपन क्रिया विनती
३. ऋषभ विवाहलो
४ नेमिनाथ का द्वादशमासा
५ नेमिश्वर हमची
६. त्रण्यरतिगीत
७. हिन्दोलना गीत
८. दशलक्षरिण धर्म व्रत गीत
९ अढाई गीत
१०. व्यसन सातनूं गीत
११ भरतेश्वरगीत

---

१. संवत सोल व्यासीये संवच्छर गिरनारि यात्रा कीधा।
श्री कुमुदचंद्र- गुरु - नामि संघपति तिलक कहवा॥
गीत धर्मसागर कृत

१२. पार्श्वनाथगीत
१३ गौतम स्वामी चौपाई
१४. सकटहर पार्श्वनाथनी विनती
१५ लोडणपार्श्वनाथनी विनती
१६ जिनवर विनती
१७. गुरुगीत
१८ आरतीगीत
१९ जन्म कल्याणक गीत
२० अधोलडी गीत
२१ शीलगीत
२२ चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत
२३. दीवाली गीत
२४ चौवीस तीर्थंकर देह प्रमाण चौपाई
२५ वलभद्रनी विनती
२६ नेमिजिन गीत
२७ वणजारागीत
२८. गीत
२९ विभिन्न राग रागनियो मे निर्मित पद

इस प्रकार कुमुदचन्द्र की जो कृतिया राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध हुई हैं उनका नामोल्लेख किया जा सका है। कवि की सभी रचनायें राजस्थानी भाषा मे हैं जिन पर गुजराती का पूर्ण प्रभाव है। वास्तव में १७वी शताब्दि मे गुजराती एव राजस्थानी भिन्न-भिन्न नही हो सकी थी। इसलिये कवि ने अपनी कृतियो में दोनो ही भाषाओ का प्रयोग किया है। इनकी रचनाओ में गीत अधिक हैं जिन्हें ये अपने प्रवचन के समय श्रोताओ के साथ गाते थे। नेमिनाथ के तोरण द्वार पर आकर वैराग्य धारण करने की अद्भुत घटना से ये अपने गुरु रत्नकीर्ति के समान बहुत प्रभावित थे इसलिये इन्होने भी नेमि राजुल पर कितनी ही रचनाए एव पद लिखे हैं उनमें नेमिनाथ वारहमासा, नेमिश्वरगीत, नेमिजिनगीत आदि के नाम उल्लेखनीय है। कवि की कुछ प्रमुख रचनाओ का परिचय निम्न प्रकार है —

१ भरत बाहुबली छंद

भरत वाहुवलि एक खण्ड काव्य है, जिसमें मुख्यत भरत और वाहुवलि के युद्ध का वर्णन किया गया है। भरत चक्रवर्ति को सारा भूमण्डल विजय करने के

पश्चात मालूम होता है कि अभी उनके छोटे भाई वाहुवलि ने उनकी अधीनता स्वीकार नही की है तो सम्राट भरत वाहुवलि को समझाने को दूत भेजते हैं। दूत और वहुवलि का उत्तर-प्रत्युत्तर वहुत सुन्दर हुआ है।

अन्त मे दोनो भाइयो मे युद्ध होता है, जिसमे विजय वाहुवलि की होती हैं। लेकिन विजय श्री मिलने पर भी बाहुवलि जगत से उदासीन हो जाते हैं और वैराग्य धारण कर लेते हैं। घोर तपश्चर्या करने पर भी "मैं भरत की भूमि पर खडा हुआ है" यह शल्य उनके मन से नही हटती। लेकिन जव स्वय सम्राट भरत उनके चरणो मे आकर गिरते हैं और वास्तविक स्थिति को प्रगट करते हैं तो उन्हे तत्काल केवल ज्ञान प्राप्त हो जाता है। पूरा का पूरा खण्ड काव्य मनोहर शब्दो में ग्रथित है। रचना के प्रारम्भ मे कवि ने जो अपनी गुरु परम्परा दी है वह निम्न प्रकार है—

पणिविवि पद आदीश्वर केरा, जेह नामे छूटे भव-फेरा।
ब्रह्म सुता समरु मतिदाता, गुण गण मडित जग विख्याता॥

नदवि गुरु विद्यानदि सूरी, जेहनी कीर्ति रही भर पूरी।
तस पट्ट कमल दिवाकर जाणु, मल्लिभूषण गुरु गुण वखाणु॥

तस पट्टोघर पडित, लक्ष्मीचन्द महाजस मडित।
अभयचन्द गुरु शीतल वायक, सेहेर वश मडन सुखदायक॥

अभयनदि समरु मन माहि, भव भूला वल गाडे वाहि।
तेह तणि पट्टे गुणभूषण, वदवि रत्नकीरति गत दूषण॥
भरत महिपति कृत मही रक्षण, वाहुवलि वलगत विचक्षण।

वाहुवलि पोदनपुर के राजा थे। पोदनपुर धन धन्य, वाग वगीचा तथा झीलो का नगर था। भरत का दूत जव पोदनपुर पहुचता है तो उसे चारो ओर विविध प्रकार के सरोवर, वृक्ष, लताये दिखलाई देती है। नगर के पास ही गगा के समान निर्मल जल वाली नदी वहती है। सात-सात मजिल वाले सुन्दर महल नगर की शोभा बढा रहे हैं। कुमुदचद्र ने नगर की सुन्दरता का जिस रूप मे वर्णन किया है उसे पढिये—

चाल्यो दूत पयार्णे रे हे तो, थोडे दिन पोयणपुरी पोहोतो।
दीठी सीम सघन कण साजित, वापी कूप तडाग विराजित॥

कलकार जो नल जल कुडी, निर्मल नीर नदी अति ऊडी।
विकसित कमल अमल दलपती, कोमल कुमुद समुज्जल कती॥

वन वाडी आराम सुरगा, अब कदव उदवर तु गा ।
करण केतकी कमरख केली, नव नारगी नागर वेली ॥

अगर तगर तरु तिदुक ताला, सरल सोपारी तरल तमाला ।
वदरी वकुल मदाड बीजोरी, जाई जुई जबु जभीरी ॥
चदन चपक चारउली, वर वासती वटवर सोली ।
रायणरा जबु सुविशाला, दाडिम दमणो द्राख रसाला ॥

फूला सुगुल्ल अमूल्ल गुलावा, नीपनी वाली निबुक निबा ।
कणयर कोमल लता सुरगी, नालीयरी दीशे अति चगी ॥
पाडल पनश पलाश महाधन, लवली लीन लवग लताधन ।

बाहुवलि के द्वारा अधीनता स्वीकार न किए जाने पर दोनो ओर की विशाल सेनाये एक दूसरे के सामने आ डटी। लेकिन देवो और राजाओ ने दोनो भाइयो को ही चरम शरीरी जानकर वह निश्चय किया कि दोनो ओर की सेनाओ मे युद्ध न होकर दोनो भाइयो मे ही जलयुद्ध नेत्रयुद्ध एव मल्लयुद्ध हो जावे और उसमे जो जीत जावे उसे ही चक्रवर्ती मान लिया जाये। इस वर्णन को कवि के शब्दों में पढिये—

अण्य युद्ध त्यारे सहु वेढा, नीर नेत्र मल्लाह व परढया ।
जो जीते ले राजा कहिये, तेहनी आण विनयसु वहिए ।
एह विचार करीनें नरवर, चल्या सहु साथे मछर भर ।
भुजा दड मन सु ड समाना, ताडगा नवारे नाना ।
हो हो कार करि ते धाया, वच्छो वच्छ ते पडया राया ।
हक्कारे पच्चारे पाडे, वलगा वलग करी ते आडे ।
पग पडधा पोहोवीतल वाजे, कडकडता तरुवर से भाजे ।
नाठा वनचर आठा कायर, छूटा मयगल फूटा सायर ॥
गड गडता गिरिवर ते पडीआ, फूल फरता फणिपति डरीआ ।
गढ गडगडीआ मन्दिर पडीआ, दिग दतीव मक्या चल चकीया ।
जन खलभली आवालक छलीया, भव-भीरु अवला कल मलीआ ।
तोपण से धरणी धवढूके, थलड डता पडता नवि चूकें ।

---

१ चाल्गा मल्ल अखाडे बलीआ, सुर नर किन्नर जोवा मलीआ ।
काछ्या काछ कसी कड ताणी, बोंगड बोलो बोले वाणी ॥

(२) त्रेपन क्रिया विनती

इसमें त्रेपन क्रियाओ के पालने पर प्रकाश डाला गया है। त्रेपन क्रियाओ मे ८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, ११ प्रतिमा, ४ प्रकार के दान तथा ६ आवश्यको के नाम गिनाये गये है। विनती की अन्तिम दो पक्तिया निम्न प्रकार है—

जे नर नारी गावसी ए विनती सुचग।
ते मन वाछित पामसे नित नित मगल रग।

(३) आदिनाथ विवाहलो

इसका दूसरा नाम ऋषभजिन विवाहलो भी है। कवि की "विवाहलो" बडी कृतियो में गिना जाता है जो ११ ढालो मे पूर्ण होता है। विवाहलो नाभिराजा की नगरी-कोशल नगरी वर्णन मे प्रारम्भ होता है। नाभिराजा के मरुदेवी रानी थी जो मधुर वाणी युक्त, रूप की खान एव रूप की ही कली थी। रानी १६ स्वप्न देखती है। स्वप्न का फल पूछती है और यह जानकर प्रसन्नता से भर जाती है कि वह तीर्थ कर की माता बनने वाली है। आदिनाथ का जन्म होता है। इन्द्रो द्वारा जन्म कल्याणक मनाया जाता है। आदिनाथ बडे होते हैं और उनका विवाह होता है। इसी विवाह का कवि ने विस्तृत वर्णन किया है। कच्छ महाकच्छ की कन्याओ की सुन्दरता, देवताओं द्वारा विवाह की तैयारी, विवाह मे बनने वाले विविध व्यञ्जन, बारात की तैयारी, ऋषभ का घोडी पर चढना, वाद्ययन्त्रो का बजना, अनेक उत्सवो का आयोजन आदि का सुन्दर वर्णन किया गया है। अन्त मे भरत बाहुबलि आदि पुत्रो की उत्पत्ति, राज्य शासन, वैराग्य आदि का भी वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत रचना तत्कालीन सामाजिक रीति रिवाजो की प्रतीक है। कवि ने प्रत्येक रीति रिवाज का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। विवाह मे बनने वाले व्यञ्जनो का वर्णन देखिये—

दूध पाक चखासा करीया, सारा सकरपारा कर करीया।
मोटा मोती अमोदक लावे दलिया कसमसीआ भावे।
अति सरवर सेवइया सुन्दर, आरोगे भोग पुरन्दर
औसे पापड मोटा तलीया, मोरआला अति उजलीया
मीठे सरसी ये राई दोधी, मेल्हे केरो अवाणे कीधी
आथ्या केर काकड स्वाद लागे, लिबू जमता जीभे रस जाणे।

विवाहलो सवत् १६७८ अषाढ शुक्ला २ सोमवार को समाप्त हुआ था। इस समय कुमुदचन्द्र घोघा नगर मे थे।

सवत सोल अठ्योतारए, मासा अषाढ घनसार।
उजली बीज रलीया मणिए, अति भलो ते शशिवार
लक्ष्मीचन्द्र पाटे निरमलाए, अभयचन्द्र मुनिराय।
तस पटे अभयनन्दि गुरुए, रत्नकीरति सुभ काय
कुमुदचन्द्र मन उजलेए, घोघा नगर मझारि।

विवाहलो की पाण्डुलिपियाँ राजस्थान के विभिन्न भण्डारो में उपलब्ध होती है।

(४) नेमिनाथ का द्वादशमासा

इसमे नेमिनाथ के विरह मे राजुल की तडपन का सुन्दर वर्णन मिलता है। बाहरमासा कवि की लघु कृति है जो १४ पद्यो मे पूर्ण होती है।

(५) नेमीश्वर हमची

भट्टारक रत्नकीर्ति के समान ही कुमुदचन्द्र भी नेमि राजुल की भक्ति मे समर्पित थे इसलिये उन्होंने भी नेमि राजुल के जीवन पर विभिन्न कृतिया एव पद लिखे है। हमची भी ऐसी ही रचना है जिसमे ८७ छन्दो में नेमिनाथ के जीवन की मुख्य घटनाओं का वर्णन किया गया है। रचना की भाषा राजस्थानी है लेकिन उस पर महाराष्ट्री का प्रभाव है। पूरी रचना अलकारो से युक्त है। हमची मे राजुल की सुन्दरता, वगत की सजधज, विविध वाघ यन्त्रो का प्रयोग, तोरण द्वार से लोटने पर राजुल का विलाप आदि घटनाओ का वहुत ही मार्मिक वर्णन मिलता है।

नेमिनाथ तोरण द्वार से लौट गये। राजुल विलाप करने लगी तथा मूर्च्छित होकर गिर पडी। माता पिता ने वहुत समझाया लेकिन राजुल ने किसी की भी नही सुनी। आखिर पति ही तो स्त्री के जीवन मे सब कुछ हैं इसी का एक वर्णन देखिये—

वाडि विना जिम वेलि न सोहे, अर्थ विना जिम वाणी।
पडित जिम सभा न सोहे, कमल विना जिम पाणी रे॥ ८२॥
राजा बिन जिम भूमि न सोहे, चन्द्र विना जिम रजनी।
पीउड विना अवला न सोहे, साभलि मेरी सजनी॥ ८३॥

हमची की पाण्डुलिपि ऋषभदेव के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार के एक गुटके मे सग्रहीत है।

(६) अण्यर्रात गीत

यह भी विरहात्मक गीत है और राजुल की तीनो ऋतुओ मे पति वियोग से होने वाली दशा का वर्णन किया गया है। इसमे मुख्यतः प्रकृति वर्णन अधिक हुआ है। लेकिन ऋतु वर्णन का आलवन राजुल ही है। शीत ऋतु आने पर राजुल कहती हैं कि वह विना पिया के कैसे रहेगी—

वाजे ते शीतल वायरा, वाझे ते वाहिर हार।
धूजे ते वनना पखिया, किम रहेस्ये रे वनि पिय सुकुमार के ॥ ८ ॥

इसी तरह हिम ऋतु मे निम्न सात प्रकार के सावन सुख का मूल माना गये है—

तैल तापन तुला तरुणी ताम्रपट तवोल।
तप्ततोय ते सातमू सुखिया मेरे हिम रिति सुख मूल के।

इस प्रकार गीत छोटा होने पर भी गागर मे सागर के समान है।

(७) हिन्वोला गीत

यह गीत भी राजुल का सन्देश गीत है जिसमे वह नेमि के विरह से पीडित होकर विभिन्न सन्देश वाहको से नेमि के पास अपना सन्देश भेजती रहती है। गीत मे कवि ने राजुल की आत्मा को निकाल कर रख दिया है राजुल कहती है—

घर वन जाल सग सहू, विरह दवानल झील।
हू हिरणी तिहा एकली, केसरि काम कराल ॥ १४ ॥
वह फिर सदेश भेजती है
भोजन तो भावे नही, भूषण करे रे सताप
जो हू मरिस्य विलखि थई, तो तह्म लागस्ये पाप ॥ १९ ॥
पशु देखी पाछा वल्या, मनस्सु थया रे दयाल
मझ उपरि माया नही, ते तम्हेस्या रे कृपाल ॥ २० ॥
तम्हे सयम लेवा सचरया, जाण्यो पम्वो हवं मर्म।
एकस्यु रुसी एकस्यु तुसी अवलो तुम्हारी घर्म ॥ २१ ॥

गीत मे ३१ पद्य है। अन्त मे कवि ने अपने नाम का उल्लेख किया है—

ए भणता सुख पामीइ, विघन जाये सहु दुरि।
रतनकीरति पर मडणो, वोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ३१ ॥

(८) दशलक्षरिग धर्म व्रत गीत

इस गीत मे दश लक्षण धर्मों पर सुन्दर प्रकाश डाला गया है। कवि ने गीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार किया है—

धर्म करो ते चित उजले रे जे दस लक्षण ।
स्वर्गतणा ते सुख पामीइ जिम तरीय ससार ॥१॥

(९) अठाई गीत

वर्ष मे तीन बार अष्टाह्निका पर्व आता है जो कार्तिक, फागुन एव अषाढ मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक आठ दिन तक मनाया जाता है। प्रस्तुत गीत मे अष्टाह्निका व्रत करने की विधि एव कितने उपवास करने पर कितना फल मिलता है उसका वर्णन किया गया है। पूरा गीत १४ पद्यो का है जिसका अन्तिम भाग निम्न प्रकार है—

जे नर नारी व्रत करीये तेहने घरि आणद जी
रत्नकीरति गौर पाट-पटोधर, कुमुदचन्द्र सुरिंद जी।

(१०) व्यसन सातनूं गीत

कवि ने प्रस्तुत गीत मे मानव को सप्त व्यसनो के त्याग की सलाह दी है क्योकि जो भी प्राणी इन व्यसनो के चक्कर मे पडा है उसी का जीवन नष्ट हुआ है। सात व्यसन है—जुआ खेलना, मास खाना, मदिरा पान करना, वेश्या सेवन करना, शिकार खेलना, चोरी करना, पर स्त्री सेवन करना। कवि ने पहिले ८ पद्यो में व्यसनो की बुराई बतलाई है और फिर आगे के चार पद्यो मे उदाहरण देकर इन व्यसनो मे नही पडने की सलाह दी है।

परनारी सगम—म करिस्य मूरख व्यसन सातमे परनारी री सग।
हाव भाव करस्ये ते खोटी, जे हवो रग पतग।
जीव मू के व्यसन असार, जीव छूटे तु ससार ॥

उदाहरण—चारुदत्त दुख अति घरणु पाम्यो, राज्यो वेश्या रूप।
ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप।
जीव मू के व्यसन असार, जीव छूटे तु ससार ॥

(११) भरतेश्वर गीत

कवि ने भरतेश्वर गीत का दूसरा नाम 'अष्ट प्रातिहार्य गीत' भी लिखा है। इसमे आदिनाथ के समवसरण की रचना एव भगवान के अष्ट प्रातिहार्यों का वर्णन दिया हुआ है। गीत सरल एव मधुर भाषा मे निबद्ध है। इसमे सात छन्द हैं अन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

भव्य जीवनने जे सबोधे, चोत्रीस अतिशयवत।
युगला धर्म निवारण स्वामी सही मडल विचरत।
शेष कर्मने जीते जिनवर थया मुक्ति श्रीवत।
कुमुदचन्द्र कहे श्रीजिन गाता लहिये सुख अनंत ॥७॥

(१२) पार्श्वनाथ गीत

इस गीत मे कवि ने हासोट नगर के जिन मन्दिर मे विराजमान पार्श्वनाथ स्वामी के पच कल्याणकों का वर्णन किया है। गीत में १० पद्य हैं हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

श्री रत्नकीरति गुरुने नमी, कीधा पावन पंच कल्याण।
सुरी कुमुदचन्द्र कहे जे भणे, ते पामे अमर विमान ॥१०॥

(१३) गौतम स्वामी गीत

गौतम स्वामी के नाम स्मरण के महात्म्य का वर्णन करना ही गीत रचना का प्रमुख उद्देश्य रहा है। पूरे गीत मे ८ पद्य हैं।

(१४) लोडण पार्श्वनाथ विनती

लाड देश के डभाई नगर मे पार्श्वनाथ स्वामी का प्रख्यात मन्दिर है। वहां की पार्श्वनाथ की जिन प्रतिमा लोडण पार्श्वनाथ के नाम से जानी जाती है। भट्टारक कुमुदचन्द्र ने एक वार अपने सघ सहित वहा की यात्रा की थी। पार्श्वनाथ स्वामी की सातिशय पतिमा है जिसके नाम स्मरण से ही विघ्न बाधाए स्वत ही दूर हो जाती है। विनती मे ३० पद्य हैं—अन्तिम तीन पद्य निम्न प्रकार हैं—

जेह ने नामे नासे शोक, सकट सघला थाये फोक।
लक्ष्मी रहे नित सगे ॥२८॥

नाम जपता न रहे पाप, जनम मरण टाले सताप ।
आये मुगति निवास ।।२९।।
जे नर समरे लोडण नाम, ते पामे मन वछित काम ।
कुमुदचन्द्र कहे भासा ।।३०।।

(१५) आरती गीत

भगवान की आरतो करने से अशुभ कर्मों का नाश होता है पुण्य की प्राप्ति होती है और अन्त मे मोक्ष की उपलब्धि होती है। इन्ही भावो को लेकर यह आरती गीत निबद्ध किया गया है। इसमे ७ पद्य हैं।

सुगध सारग दहे, पाप ते नवि रहे।
मनह वाँछित लहे, कुमुदचन्द्र करो जिन आरती।

(१६) जन्म कल्याणक गीत

तीर्थंकर का जन्म होने पर देवताओ द्वारा उनका जन्माभिषेक उत्सव मनाया जाता है उसी का इसमे वर्णन किया गया है। एक पक्ति मे सिद्धार्थनन्दन के नाम का उल्लेख करने से यह भगवान महावीर के जन्म कल्याणक का गीत लगताहै। गीत में ८ पद्य हैं। प्रत्येक पद्य चार-चार पक्तियो का है।

(१७) अन्घोलडी गीत

प्रस्तुत गीत मे वालक ऋषभदेव की प्रात कालीन जीवन चर्या का वर्णन किया गया है। ऋषभदेव के प्रात उठते ही अन्घोलडी की जाती है अर्थात् उनके अगो मे तेल, उवटन, केशर, चन्दन लगाया जाता है। तेल चुपडा जाता है फिर निर्मल एव स्वच्छ जल से स्नान कराया जाता है। स्नान के पश्चात् शरीर को अगोछा से पोछा जाता है फिर पीत वस्त्र पहनाये जाते हैं आखो मे कज्जल लगाया जाता है। उसके पश्चात् नाश्ता में दाख, वादाम, अखरोट, पिस्ता, चारोली, घेवर, फीणी, जलेवी, लड्डू आदि दिये जाते हैं।

ऋषभदेव ने नाश्ता के पश्चात् वहुत वारीक वस्त्र पहिन लिये साथ ही मे कान मे कुण्डल, पाव मे घु घरडी, गले मे हार तथा हाथो मे वाजूबन्द पहिन लिये और वे सबके मन को लुभाने लगे।

गीत में १३ पद्य हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

वाजूबन्द सोहामणी राखडली मनोहार।
रूपे रतिपति जीतियो, जाये कुमुदचन्द्र वलिहार।।

(१८) शील गीत

इस गीत मे कवि ने चारित्र प्रधानता पर जोर दिया है। यदि मानव असंयमी है काम वासना के अधीन होकर अनैतिक आचरण करता है तो उसके अच्छी गति कभी प्राप्त नही हो सकती। दूसरी स्त्रियो के साथ जीवन बिगाडने के लिये कवि कहता है—

जेह वो खोटो रे रग पतगनो।
तेहवो चटको रे परत्रिय सगनो
परत्रिया केरो प्रेम प्रिउडा रखे को जाणो खरो।
दिन चार रग सुरग रुग्रडो, पछे मरहे निरघरे।
जो घणा साथे नेह माडे छाडि ते हस्यु वातडी
इम जाणी मन करि नाहुला, परनारी साथे प्रीतडा।।

गीत मे १० ढाल एव १० त्रोटक छन्द है।

(१९) चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत

प्रस्तुत गीत मे चिन्तामणि पार्श्वनाथ की अष्ट द्रव्य से पूजा करने के महात्म्य का वर्णन किया गया है। अष्ट द्रव्यो मे प्रत्येक द्रव्य से पूजा करने के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है।

जल चन्दन अक्षत वर कुसुमे, चरु दीवडलो धूपे रे।
फल रचना सू अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूप रे

गीत मे १३ पद्य हैं। गीत के अन्त मे कवि ने अपने एव अपने गुरु दोनो के नामों का उल्लेख किया है। चिन्तामणि पार्श्वनाथ पर कवि का एक गीत और भी मिलता है।

(२०) दीवाली गीत

इस गीत मे दीपावली के अवसर पर भगवान महावीर के मोक्ष कल्याणक उत्सव मनाने के लिये प्रेरणा दी गयी है। उसी समय गोतम गणधर को कैवल्य हुआ और अपने ज्ञान के आलोक से लोकालोक को प्रकाशित किया। देवताओ ने नृत्य करके निर्वाण कल्याणक मनाया तथा मानव समाज ने घर घर मे दीपक जलाकर निवाण कल्याणक के रूप में दीपावली मनायी।

(२१) चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण गीत

प्रस्तुत गीत में चौवीस तीर्थंकरो के देह प्रमाण पर चार चरणो का एक एक पद्य निवद्ध किया गया है। रचना साधारण श्रेणी की है। जो २७ पद्यो मे पूरी होती है। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ए चौवेसे जिनवर नमो,
जिम ससार विषे नवि भमो।
पामो अविचल सुखनी खानि
कुमुदचन्द्र कहे मीठी वाणी ॥२७॥

(२२) बणजारा गीत

इस गीत मे जगत की नश्वरता का वर्णन किया गया हैं। गीत की प्रत्येक पक्ति "वणजारा रे एह ससार विदेस, भमीय भमी तु उसनो" से समाप्त होती है। यह मनुष्य वणजारे के रूप मे यो ही ससार मे भटकता रहता है। वह दिन रात पाप कमाता है इसलिये ससार वन्धन से कभी नही छूटने पाता।

पाप कर्या ते अनत, जीव दया पालो नही।
साची न बोलियो वोल, मरम मो सावहु वोलिया ॥

गीत मे विविध उपाय भी सुझाये गये हैं। गीत मे 41 पद्य हैं।

पद साहित्य

छोटी बडी रचनाओ के अतिरिक्त कुमुदचन्द्र ने पद भी पर्याप्त सख्या मे निवद्ध किये हैं। उस समय पद रचना करना भी कविगत विशेषता मानी जाती थी। कबीर, मीरावाई, सूरदास एव तुलसीदास सभी ने अपने अपने पदो के माध्यम से भक्तिरस की जो गगा वहाई थी वैसी ही अथवा उसी के अनुरूप कुमुदचन्द्र ने भी अपने पदो में अर्हंद भक्ति की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया। वे भगवान पार्श्वनाथ के वडे भक्त थे। इसलिये अपने पदो मे भी पार्श्वनाथ भक्ति की गगा वहाई। वे कहते हैं कि उन्होने आज भगवान पार्श्व के दर्शन किये हैं। उनका शरीर सावला है, सुन्दर मूर्तिमान है तथा सिर पर सर्प सुशोभित है। वे कमठ के मद को तोडने वाले हैं तथा चकोर रूपी ससार के लिये वे चन्द्रमा के समान हैं। पाप रूपी अन्धकार को नष्ट कर प्रकाश करने वाले हैं तथा सूर्य के समान उदित होने वाले हैं। इन्हीं भावो को कवि के शब्दो मे देखिये—

आजु मैं देखे पास जिनेंदा
सावरे गात सोहमनि मूरति, शोभित शीस फणेंदा ।।आजु।।
कमठ महामद भजन रजन, भविक चकोर सुचदा
पाप तमोपह भुवन प्रकाशक उदित अनूप दिनेंदा ।।आजु।।
भुविज-दिविज पति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरविन्दा
कहत कुमुदचन्द्र होत सबे सुख देखत वामानदा ।।आजु।।

कुमुदचन्द्र लोडण पार्श्वनाथ के बडे भक्त थे। उन्होंने लोडण पार्श्वनाथ की विनती लिखने के अतिरिक्त दो पद भी लिखे हैं जिनमे लोडण पार्श्वनाथ की भक्ति करने में अपने आपको सौभाग्यशाली माना है एक पद में "वे आज सबनि में हू बड भागी" कहते हैं और दूसरे पद में लोडण पार्श्वनाथ के दर्शनमात्र से अपने जन्म को सफल मान लेते हैं इसलिये वे कहते हैं "जनम सफल भयो, भयो सु काजरे, तनकी तपत मेरी सब मेटी, देखत लोडण पास आज रे।'

भक्ति के रग में रग कर वे भगवान से कहते हैं कि यदि वे दीनदयाल कहते हैं तो उन जैसे दीन को क्यो नही उबारते हैं। कवि का "जो तुम दीनदयाल कहावत" वाला पद अत्यधिक लोकप्रिय रहा तथा जन सामान्य उसे गाकर प्रभु भक्ति मे अपने आपको समर्पित करता रहा।

जब भक्तिरस में ओतप्रोत होने पर भी विघ्नो का नाश नही होने लगा तथा न मनोगत इच्छाए पूरी होने लगी तो भगवान को भी उलाहना देने मे वे पीछे नही रहे और उनसे स्पष्ट शब्दो मे निम्न प्रार्थना करने लगे—

प्रभु मेरे तुम कु ऐसी न चाहिये
सघन विघन घेरत सेवक कू मौन धरी किउ रहिये ।।प्रभु।।
विघन-हरन सुख-करन सबनिकु, चित चिन्तामनि कहिए
अशरण शरण अबन्धु बन्धु कृपासिन्धु को विरद निवहिये ।।प्रभु।।

जो मनुष्य भव मे आकर न तो प्रभु की भक्ति करते हैं और न व्रत उपवास पूजा पाठ करते हैं तथा कोई न पुण्य का काम करते हैं लेकिन जब वे मृत्यु को प्राप्त हाने लगते हैं तो हृदय मे बडा भारी पछतावा होता है और उनके मुख से निम्न शब्द निकल पडते हैं—

मैं तो नर भव वांधि गमायो
न कियो तप जप व्रत विधि सुन्दर, काम भलो न कमायो ।।मैं तो।।

विकट लोभ तैं कपट कूर करी, निपट विषै लपटायो
विटल कुटिल शठ सगति बैठो, साधु निकट विघटायो ।।मैं तो।।

इसी पद में कवि आगे कहते हैं कि हे मानव तू दिन प्रतिदिन गाठ जोडता रहा और दान देने का नाम भी नहीं लिया और जब यौवन को प्राप्त हुआ तो दूसरी स्त्रियो के चक्कर में फसकर अपना समस्त जीवन ही गवा दिया । जब ससार से विदा होने लगा तो किसी ने साथ नही दिया और पापो की गठरिया लेकर ही जाना पडा तब पश्चाताप के अतिरिक्त शेप कुछ नही रहा । इन्ही भावो को कवि के शब्दो मे देखिए—

कृपण भयो कुछु दान न दीनो दिन दिन दाम मिलायो ।
जब जोवन जजाल पडयो तब परत्रिया तनु चित लायो ।।मैं तो।।
अत समैं कोउ सग न आवत, झूठहि पाप लगायो ।
कुमुदचन्द्र कहे चूक परी मोही, प्रभु पद जस नही गायो ।।मैं तो।।

अर्हंद भक्ति एव पार्श्व भक्ति के अतिरिक्त भट्टारक कुमुदचन्द्र ने अपने गुरु भट्टारक रत्नकीर्ति के समान राजुल नेमि पर भी कितने ही पद निबद्ध करके राजुल की विरह भावना के व्यक्त करने में वे आगे रहे हैं । राजुल की विरह भावना को व्यक्त करते हुए वे "सखी री अब तो रह्यो नहि जात", जैसे सुन्दर पद की रचना कर डालते हैं और उसमें राजुल के मनोगत भावो का पूरा चित्र प्रस्तुत कर देते हैं । राजुल को न भूख लगती है और न प्यास सताती है तथा वह दिन प्रतिदिन मुरझाती रहती है । रात्रि को नींद नही आती है और नेमि की याद करते करते प्रात हो जाता है । विरहावस्था में न तो चन्द्रमा अच्छा लगता है और न कमल पुष्प । यही नही मद मद चलने वाली हवा भी काटने दौडती हैं इन्ही भावो को कवि के शब्दो में देखिये—

नहि न भूख नही तिसु लागत, घरहि घरहि मुरझात ।
मन तो उरझी रह्यो मोहन सु सेवन ही सुरझात ।।सखी।।
नाहिते नीद परती निसि वासर, होत विसुरत प्रात ।
चन्दन चन्द्र सजल नलिनी दल, मन्द मरुत न सुहात ।।

अब तक कवि के २८ पद उपलब्ध हो चुके हैं लेकिन वागड प्रदेश के शास्त्र भण्डारो में सग्रहीत गुटको में उनका और भी पद साहित्य मिलने की संभावना है । कुमुदचन्द्र के पदो के अध्ययन से उनकी गहन साहित्य सेवा का पता चलता है । वे भट्टारक जैसे सम्मानीय एव व्यस्त पद पर रहते हुए भी दिन रात साहित्याराधना

मे लगे रहते थे और अपनी छोटी बडी कृतियो के माध्यम से समाज मे पवित्र वातावरण बनाने मे लगे रहते थे। वास्तव मे उनका समस्त जीवन ही जिनवाणी की सेवा मे समर्पित रहता था। उनका पद साहित्य एव अन्य कृतिया उनके हृदय का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे दिन रात तीर्थ कर भक्ति मे स्वय डूबे रहते थे और अपने भक्तो को डुबोया रखते थे। वह समय ही ऐसा था। चारो ओर भक्ति ही भक्ति का वातावरण था। ऐसे समय मे कुमुदचन्द्र ने जनता की माग को देखते हुए साहित्य सर्जना मे अपने आपको समर्पित रखा। उनका साहित्य पढने से उनके हृदय की चुभन का पता लगता है। उनको मारे समाज को विभिन्न प्रकार की बुराइयो एव दूषित वातावरण से दूर रखते हुए जीवन का विकास करना था और इसके लिये साहित्य सर्जन को ही अपना एक मात्र साधन माना। वे अपने गुरु रत्नकीर्ति से भी दो कदम आगे रहे और अनेको कृतियो की रचना करके उस समय के भट्टारको साधु सन्तो के समक्ष एक नया आदर्श उपस्थित किया।

शिष्य परिवार

वैसे तो भट्टारको के अनेक शिष्य होते थे। उनके सम्पर्क मे रहने मे ही लोग गौरव का अनुभव करते थे। लेकिन कुमुदचन्द्र ने अपने सभी शिष्यो को साहित्य सेवा का व्रत दिया और अपने समान ही साहित्य सर्जन मे लगे रहने की प्रेरणा दी। यही कारण है कि उनके शिष्यो की भी अनेक रचनाए मिलती है। कुमुदचन्द्र के प्रमुख शिष्यो मे—अभयचन्द्र, ब्रह्मसागर, धर्मसागर, सयमसागर, जयसागर एव गणेशसागर के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सबने कुमुदचन्द्र के सम्बन्ध मे भी कितने ही पद लिखे हैं जिससे उनके विशाल व्यक्तित्व एव अपने गुरु के प्रति समर्पित जीवन का पता लगता है। इनके सम्बन्ध में आगे विस्तृत रूप से प्रकाश डाला जावेगा।

विहार

गुजरात का बारडोली नगर इनका प्रमुख केन्द्र था। इसलिये इन्हे बारडोली का सन्त भी कहा जाता है। यही पर रहते हुए वे सारे देश मे अपने जीवन, त्याग एव साधना के आधार पर लोगो को पावन सन्देश सुनाते रहते थे। वे प्रतिष्ठाओ मे भी जाते थे और वहा जाकर धर्म प्रचार किया करते थे।

भट्टारक काल

कुमुदचन्द्र भट्टारक गादी पर सवत् १६५६ से १६८५ तक रहे। इन २६–३० वर्षो मे उन्होने समाज को जाग्रत रखा और सदैव साहित्य एव धर्म प्रचार की ओर

अपना लक्ष्य रखा। वे सघ के साथ विहार करते और जन जन का हृदय सहज ही जीत लेते। वे प्रतिष्ठा—महोत्सवो, व्रत विधानो आदि मे भाग लेते और तत्कालीन समाज से ऐसे आयोजनो को करते रहने की प्रेरणा देते।

भाषा

कुमुदचन्द्र की कृतियो की भाषा राजस्थानी के अधिक निकट है। लेकिन गुजरात एव बागड प्रदेश उनका मुख्य विहार स्थल होने के कारण उसमे गुजराती का पुट भी आ गया है। मराठी भाषा मे भी वे लिखते थे। 'नेमीश्वर हमची' मराठी भाषा की सुन्दर रचना है। कृतियो से उनके पदो की भाषा अधिक परिस्कृत हे और कितने ही पद तो खडी बोली में लिखे गये जैसे लगते हैं और उन्हे तुलसी, सूर और मीरा द्वारा रचित पदो के समकक्ष रखे जा सकता हैं। भाषा के साथ साथ भाव एव शैली की दृष्टि से भी कवि का पद साहित्य उल्लेखनीय है। रचनाओ में थारी, म्हारी, पाछे, वल्यो, जैसे शब्दो का प्रयोग बहुत हुआ है। इसी तरह आव्यू, जाव्यू, हरख्या, सूक्या जैसे क्रिया पदो की बहुलता है। कभी-कभी कवि शुद्ध राजस्थानी शब्दो का प्रयोग करता है जिसे निम्न पद्य में देखा जा सकता है—

कातिय दिन दिवालिना सखि घरि घरि लील विलास जी
किम करु कत न आवियो, हवेस्यु करिये घरि घरि वासि जी।

नेमिनाथ बारहमासा

इसी तरह राजस्थानी भाषा का एक और पद्य देखिये—

वचन माहरु मानिये, परिनारी थी रहो वेगला।
अपवाद माथे चढे मोटा रक थइये दोहिला।

शील गीत

छन्दों का प्रयोग

कुमुदचन्द्र की विविध रचनाओ से ज्ञात होता है कि वे छन्द शास्त्र के अच्छे वेत्ता थे इसलिये उन्होने अपनी कृतियो को विभिन्न छन्दो में निवद्ध की है। कवि को सबसे अधिक त्रोटक, ढाल एव विभिन्न राग रागनियो में काव्य रचना करना प्रिय रहा। गीत लिखना उन्हें रुचिकर लगता था इसलिये इन्होने अधिकांश कृतिया गीतात्मकता शैली मे लिखी हैं। वे अपनी प्रवचन सभाओ में इन गीतो को सुनाकर अपने भक्तो की भाव विभोर कर देते थे।

सवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पञ्चमी के दिन लिखित एक प्रशस्ति मे भट्टारक कुमुदचन्द्र की पूर्ववर्ती एव उत्तरवर्ती भट्टारक परम्परा निम्न प्रकार दी है—

मूल सघ, सरस्वती गच्छ एव वलात्कारगण

आचार्य कुन्दकुन्द
|
भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र
|
भट्टारक अभयचन्द्र
|
अभयनन्दि
|
रत्नकीर्ति [१६३०–१६५६]
|
कुमुदचन्द्र [१६५६–१६८५]
|
अभयचन्द्र (द्वितीय)
|
शुभचन्द्र (१७२१)
|
रत्नचन्द्र [म० १७४५]

इस प्रकार भट्टारक कुमुदचन्द्र के पश्चात सवत् १७०० के पूर्व तक भट्टारक अभयचन्द्र एव भ शुभचन्द्र और हुए। इन दोनो भट्टारको का परिचय निम्न प्रकार है—

४६ भट्टारक अभयचन्द्र

अभयचन्द्र सवत् १६८५ मे भट्टारक गादी पर विराजमान हुए। वे भट्टारक वनते समय पूर्णयुवा थे। उन्होने कामदेव के मद को चकनाचूर कर दिया था। वे विद्वता मे गौतम गणधर के समान थे। अपूर्व क्षमाशील, गभीर एव गुणो की खान थे। विद्या के वे कोप थे तथा वाद विवाद मे वे सदैव अपराजित रहते थे। प श्रीपाल ने उनके सम्बन्ध में अपने एक पद मे निम्न प्रकार परिचय दिया है—

चन्द्रवदनी मृग लोचनी नारि
अभयचन्द्र गछ नायक वादो, सकल सघ जयकारि।

मदन महामद मोडेए मुनिवर, गोयम सम गुणधारी
क्षमावतवि गभीर विचक्षण, गुरुयो गुण भडारी ।।

अभयचन्द्र अपने गुरु भट्टारक कुमुदचन्द्र के योग्यतम शिष्य थे । उन्होने भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र का समय देखा था और देखी थी उनकी साहित्यिक साधना इसलिये जव वे स्वय भट्टारक वने तो उन्होने भी उसी परम्परा को जीवित रखा। वारडोली नगर मे इनका पट्टाभिषेक हुआ था। उस दिन फाल्गुण सुदी ११ सोमवार सवत् १६८५ था। पाट महोत्सव मे समाज के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे । इनमे सघवी नागजी, हेमजी, मेघवी, रूपजी, मालजी, भीमजी आदि के नाम उल्लेखनीय है। कविवर दामोदर ने पाट महोत्सव का निम्न शब्दो मे वर्णन किया है—

वारडोली नयरि उछव कीधो, महोछव अन्त अवारी ।
सघवी नाग जी अति आणद्या, हेमजी हरप अपार ।
सघवी कुवर जी कुलमडल, मेघजी महिमावत
रुपजी मालजी मनोहारु, सहु सज्जन मन मोहंत ।
सघवं भीमजी गावस्यु, सुन जीवा मने उल्हास
सघवई जीवराज उलट घणो, पहोती छे मन तणी आस ।
सवत मोल पच्यासीये, फागुण सुदि एकादशी मोमवार
नेमिचन्द्र सुर मत्रज, आप्पा वरतयो जयकार ।।

अभयचन्द्र का जन्म सवत् १६४० के लगभग हूवड वश मे हुआ था । इनके पिता का नाम श्रीपाल एव माता का नाम कोडमदे था । वचपन मे ही वालक अभयचन्द्र को साधुओ की मडली में रहने का सुअवसर मिल गया था । हेमजी कुवर जी इनके भाई थे । ये सम्पन्न घराने के थे । युवावस्था के पूर्व ही उन्होने पाच महाव्रतो का पालन प्रारम्भ कर दिया था ।

हूवड वशे श्रीपाल साह तात, जनम्यो रुडी रतनदे कोडमदे मात ।
लघु पणें लीधो महाव्रत भार, मनवश करी जीत्यो दुर्धर भार ।

इसी के साथ इन्होने सस्कृत प्राकृत के ग्रथो का उच्च अध्ययन किया । न्याय शास्त्र मे पारगता प्राप्त की तथा अलकार शास्त्र एव नाटकों का तलस्पर्शी अध्ययन किया। इसके साथ ही अष्टसहस्री, त्रिलोकसार, गोम्मटसार जैसे ग्रन्थो का गहरा ज्ञान प्राप्त किया ।

व्याकर्ण छन्द अलकार रे अष्ट सहस्त्री उदार रे
त्रिलोक गोम्मटसार के भाव हृदय धरे ॥

जब उन्होने युवावस्था मे पदार्पण किया तो त्याग एव तपस्या के प्रभाव से उनकी मुखाकृति स्वयमेव आकर्षक बन गयी और भक्तो के लिये वे आध्यात्मिक जादूगर बन गये । इनके पचासो शिष्य बन गये उनमें गणेश, दामोदर, धर्मसागर, देवजी, रामदेवजी के नाम विशेषत. उल्लेखनीय हैं । इन शिष्यों ने भट्टारक अभयचन्द्र की अपने गीतो मे भारी प्रशसा की है । लगता है उस समय चारो ओर अभयचन्द्र का यशोगाथा फैल गयी थी । जब वे विहार करते तो उनके शिष्य जन-साधारण को एव विशेषत महिला समाज को निम्न शब्दो मे आह्वान करते थे—

आवो रे भामिनी गज वर गमनी
वादवा अभयचन्द्र मिली मृग नयनी ।
मुगताफलनी लाल भरी जे
गच्छनायक अभयचन्द्र वधावीजे ।
कुंकुम चन्दन भरीय कचोली
मेमे पद पूजो गोग्ना रहृ भली ॥ ३ ॥

अभयचन्द्र के सम्बन्ध मे उनके शिष्य प्रशिष्यो द्वारा कितने ही प्रशसात्मक गीत मिलते है जिनसे कितने ही नवीन तथ्यो की जानकारी मिलती है । इन्ही के शिष्य धर्मसागर ने एक गीत में उनके यश की प्रशसा करते हुए लिखा हैं कि देहली के सिंहासन तक उकको प्रशसा पहुच गयी थी और वहा भी उनका सम्मान था । चारो ओर उनका यश फैल गया था ।

दिल्ली रे सिहासन केरो राजियो रे
गाजियो यश त्रिभुवन मन्दिरे ॥

इसी तरह उनके एक शिष्य दामोदर ने अपने एक गीत मे भक्तो से निम्न प्रकार का आग्रह किया है—

वादो वादो सखी री श्री अभयचन्द्र गोर वादो ।
मूलसघ मंडल दुरित निकदन कुमुदचन्द पाटि वादो ॥ १ ॥
शास्त्र सिद्धान्त पूरए ए जाण, प्रतिबोध्ये भवियण अनेक
सकल कला करी विश्व मे रजे भजे वादि अनेक ॥ २ ॥
हूवड वशे विख्यात वसुधा, श्रीपाल सावन तात ।
जायो जननी यती यशवतो कोडमदे धन मात ॥ ३ ॥

रतनचन्द्र पाटि कुमुदचन्द्र यति प्रेमे पूजो पाय ।
तास पाटि श्री अभयचन्द्र गोर दामोदर नित्य गुण गाय ।। ४ ।।

भट्टारको की वेश भूषा लाल चद्दर वाली होती थी। चद्दर को राजस्थानी मे पछेवडी कहते हैं। इसलिये जब भट्टारक अभयचन्द्र अपनी भट्टारकीय वेश भूषा मे सभा मे बैठते थे दो वे कितने सुन्दर एव लुभावने लगते थे इसी को धर्म सागर ने एक गीत मे छन्दो वद्ध किया है—

लाल पिछोडी अभयचन्द्र सोहे
निरखतां भवियकना मन माहे ।
आखडली कज पाखडीरे, मुखडू ते पूनिमचन्द
शुक चाची सम नासिका रे, अधर प्रवालना वृंद रे
कठे कवू हराविया रे, हैडले सरस्वती वाल्ही
वादि सकोमल एहजीरे पिछि, हाथि रढियो ली रे

सवत् १७०६ मे भट्टारक अभयचन्द्र का सूरत नगर मे विहार हुआ। उस समय उनका वहा अभूतपूर्व स्वागत हुआ। घर घर में उत्सव आयोजित किये गये। मगल गीत गाये गये। चारो ओर आनन्द ही आनन्द छा गया। जय जय कार होने लगी। इसी एक दृश्य का "देवजी" ने एक पद में निम्न प्रकार छन्दो वद्ध किया है—

आज आणद मन अति घणो ए, काई वरतयो जय जय कार ।
अभयचन्द्र मुनि आवयाए काई सूरत नगर मझार रे ।।
घरे घरे उछव अति घणाए, काई माननी मगल गाय रे ।
अग पूजा ने उवारणाए, काई कुकुम छडादे वडाय रे ।
श्लोक वखाणो गोर प्रसोभता रे, वाणी मीठी अपार साल तो ।
धर्मकथा ये माणी ने प्रतिवोध ए, कोई कुमति नो करे परिहार जी ।
सवत सतर छलोतरे काई हरिजी प्रेमजीनी पूगी आस रे ।
रामजीने श्रीपाल हरषी पाए, काई वेलजी कुअरजी मोहनदास रे ।
गौतम सम गोर सोभनो ए, काई वूधे जयो अभयकुमार रे ।
सकल कला गुण मडणो ए, काई देवजी कहे उदसो उदार रे ।।

इस तरह के और भी वीसो गीत भट्टारक अभयचन्द्र के सम्वन्ध मे उनके ईन शिष्यो द्वारा लिखे हुये मिलते हैं जिनमे उनकी भूरि भूरि प्रशसा की गई है। अभयचन्द्र का इतना अच्छा वर्णन उनके असाधारण व्यक्तित्व की ओर स्पष्ट

सकेत हैं। वे 36 वर्ष तक भट्टारक पद पर रहे और सारे प्रदेश मे अपने हजारों प्रशंसको एव भक्तो का समूह इकट्ठा कर लिया।

अभयचन्द्र के अब तक निम्न रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं—

(१) वासपूज्यनी धमाल	(२) गीत
(३) चन्दा गीत	(४) सूखडी
(५) पद्मावती गीत	(६) शान्तिनाथजी विनती
(७) आदीश्वरजी विनती	(८) पञ्चकल्याणक गीत
(९) वलभद्र गीत	(१०) लाछन गीत
(११) विभिन्न पद।	

भट्टारक अभयचन्द्र की विद्वता एव शास्त्रो के ज्ञान को देखते हुए उक्त कृतिया बहुत कम है इसलिये अभी उनकी किसी वडी कृति के मिलने की अधिक सभावना है लेकिन इसके लिये वागड प्रदेश एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो में खोज की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त यह भी सभव है कि अभयचन्द्र ने साहित्य निर्माण के स्थान पर वैसे ही प्रचार प्रचार पर अधिक जोर दिया हो।

अभयचन्द्र की उक्त सभी रचनाए लघु कृतिया हैं। यद्यपि काव्यत्व भाषा एव शैली की दृष्टि से ये उच्च स्तरीय रचनाए नही है लेकिन तत्कालीन समाज की माग पर ये रचनाए लिखी गयी थी इसलिये इनमे कवि का काव्य वैभव एव सौष्ठव प्रदर्शन होने के स्थान पर प्रचार-प्रसार का अधिक लक्ष्य रहा था। कुछ प्रमुख रचनायें का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

१—वासपूज्यनीधमाल

१० पद्यो मे २०वें तीर्थ कर वासुपूज्य स्वामी के कल्याणको का वर्णन दिया गया है। धमाल मे सूरत नगर का उल्लेख है जो समवत वहा के मन्दिर मे वासुपूज्य स्वामी की प्रतिमा स्तवन के कारण होगा।

सूरत नगर मानु जगईस, सकल सुरासर नामे शीस।
मूलसघ मण्डन मनोहर कुमुदचन्द्र करुणा भण्डार ॥९॥
तेह पाटे उदयो वर हश, अभयचन्द्र धन हूवड वश।
ते गोर गाये एह सुभास, भणता सुणता स्वर्ग निवास ॥१०॥

२—चन्दागीत

इस गीत मे कालीदास के मेघदूत के विरही यक्ष की भाति स्वय राजुल

अपना सन्देश चन्द्रमा के माध्यम से नेमिनाथ के पास भेजती हैं। सर्वप्रथम चन्द्रमा से अपने उद्देश्य के बारे मे निम्न शब्दो मे वर्णन करती है—

विनय करी राजुल कहे, चन्दा वीनतडी अव धारो रे।
उज्ज्वल गिरि जई वीनवे, चन्दा जिहा छे प्राण आधार रे॥
गगने गमन ताहरु रुवडू, चन्दा अमिव वरखे अन्नन्त रे।
पर उपगारी तू भनो, चन्दा वलि वलि वीनवू सत रे॥

राजुल ने इसके पश्चात् भी चन्द्रमा के सामने अपनी यौवनावस्था की दुहाई दी तथा विरहाग्नि का उसके सामने वर्णन किया।

विरह तणा दुख दोहिता, चदा ते किम मे सहे वाय रे।
जल विना जेम मछली, चदा ते दुख में वाय रे॥

राजुल अपने सन्देश वाहक से कहती है कि यदि कदाचित नेमिकुमार वापिस चले आवें तो वह उनके आगमन पर वह पूर्ण शृंगार करेगी। इस वर्णन में कवि ने विभिन्न अगो मे पहिने जाने वाले आभूषणो का अच्छा वर्णन किया है।

३ सूखडी

यह ३७ पदो की लघु रचना हैं, जिसमे विविध व्यजनो का उल्लेख किया किया गया है कवि को पाकशास्त्र का अच्छा ज्ञान था। "सूखडी" से तत्कालीन प्रचलित मिठाइयो एव नमकीन खाद्य सामग्री का अच्छी तरह परिचय मिलता है। शान्तिनाथ के जन्मावसर पर कितने प्रकार की मिठाइया आदि बनाई गई थी—इसी प्रसग को वतलाने के लिए इन व्यजनो का नामोल्लेख किया गया है। एक वर्णन देखिये—

जलेवी खाजला पूरी, पतासा फीणी सजूरी।
दहीपरा फीणी माहि, साकर भरी ॥६॥
+ + +
सकरपारा सुहाली, तल पयडी सावली।
थापडास्यू घीणु घीय, आलू जीत्रली ॥५॥
मरकीने चादखानि, दोठ ने दही वडा सोनी।
वावर घेवर घीसो, अनेक वानी ॥९॥

4 आदीश्वरणी विनति

इसमें आदिनाथ भगवान का स्तवन तथा पाचो कल्याणको का वर्णन किया गया है। रचना सामान्य है।

इसमे आदिनाथ के पन्चकल्याणकों का वर्णन किया गया है पद्य सख्या २१ है। रचना सामान्य है।

आदीश्वरनु मन्त्र कल्याणक गीत

इस प्रकार भट्टारक अभयचन्द्र ने अपनी लघु रचनाओ के माध्यम से जो महती सेवा की थी वह सदैव अभिनन्दनीय रहेगी।

५० भट्टारक शुभचन्द्र

भट्टारक अभयचन्द्र के पश्चात शुभचन्द्र भट्टारक गद्दी पर बैठे। सवत् १७२१ की ज्येष्ठ वुदि प्रतिपदा के दिन पोरबन्दर मे एक विशेष उत्सव किया गया और उसमें शुभचन्द्र को पूर्ण विधि के साथ भट्टारक गद्दी पर अभिषिक्त किया गया।[1] प श्रीपाल ने शुभचन्द्र हमची लिखी है उसमे शुभचन्द्र अभिषिक्त के भट्टारक पद पर अभिषेक होने से पूर्व तक का पूरा वृतान्त दिया हुआ है।

शुभचन्द्र का जन्म गुजरात प्रदेश के जलसेन नगर मे हुआ जहा गढ एव मन्दिर थे तथा सुन्दर सुन्दर भवन थे। वही हूवड वश के शिरोमणि हीरा श्रावक थे। माणिकदे उनकी पत्नी का नाम था। वचपन मे ही वालक व्युत्पन्नमति थे उसका विद्याध्ययन की ओर विशेप ध्यान था, इसलिए व्याकरण, तर्कशास्त्र, पुराण एव छन्द शास्त्र का गहन अध्ययन किया। अष्टसहस्री जैसे कठिन ग्रन्थो को पढा। प्रारम्भ मे उसका नाम नवलराम था लेकिन ब्रह्मचर्यव्रत धारण करने पर उसका नाम सहेजसागर रखा गया और भट्टारक वनने पर वे शुभचन्द्र नाम से प्रसिद्ध हुये।[2]

शुभचन्द्र शरीर से अतीव सुन्दर थे। श्रीपाल कवि ने उनकी सुन्दरता का निम्न प्रकार वर्णन किया है—

नाशा शुक चची सम सुन्दर, अधर प्रवाली वृन्द।
रक्तवर्ण द्विज पक्ति विराजित, निरखता आनन्द रे ।।९।।

---

1 सखी सवत सत्तर एक वीसे वली जेष्ठ-बदी प्रतिपद दीवसे
श्री पोरबन्दर मोहोछव हवा, मल्या चतुर्विध सघ ते नवा नवा

2 हूवड वश हिरणी हीरा' सम सोहे मन गो धन्य
वस मन रजक माणिकदे शुभ जायो सुन्दर तन्न रे
वालपणे बुधिवत विलक्षण विद्या चउद निधान।
जैनागम जिन भक्ति करें एह जिन सास्त्र वहुतान रे ।।५।।

रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभय कुमार ।
सीले सुदर्शन समान सोहे गोतम सम अवतार रे ॥१०॥

एक दिन भट्टारक अभयचन्द्र ने अपनी प्रवचन सभा मे हर्षित होकर कहा कि सहेजसागर के समान कोई मुनि नही है। वही पट्टस्थ होने योग्य है । वह आगमो का सार भी जानता है।

इसके पश्चात सघपति प्रेमजी, हीरजी, मल्लजी, नेमीदास हूवड वश शिरोमणी बाघजी, सघजी, रामजीनन्दन, गागजी जीवधर वर्धमान आदि सभी श्रीपुर से आये और चतुर्विध सघ के समक्ष यह महोत्सव का आयोजन किया। सघ सहित श्री जगजीवन राणा भी पाट महोत्सव मे आये तथा दक्षिण से धर्मभूषण भी ससघ सम्मिलित हुये। शुभ मुहूर्त देखकर जिन पूजा की गई । शान्ति होम विधान सम्पन्न हुआ। जलयात्रा एव जीणमवार हुई और जेठ सुदी प्रतिपदा के दिन जय जयकार शब्दो के बीच शुभचन्द्र को पट्टस्थ विराजमान कर दिया । सूरि मन्त्र धर्मभूषण ने दिया।

---

1 एकदा अतिआनन्द बोले, अभयचन्द्र जयकार ।
सुणयो सहु सज्जन मन रगे, पाट तणो सुविचार रे ॥१॥
सहेज सिंधु सम नहीं को यतिवर, जगमा जाणो सार ।
पाट योग छे सुन्दर एहने, आपयो गच्छ नो भार रे ॥२॥
सघपति प्रेमजी हीरजी रे, सहेर वंश शृंगार ।
एकलमल्ल आवई अति उदयो, रत्नजी गुण भण्डार रे ॥३॥
नेमीदास निरुपम नर सोहे अखई अवाई वीर ।
हूम्बड वंश शृंगार शिरोमणि बाघजी कंघ धीर रे ॥४॥
रामजीनन्दन गागाजी रे, जीवधर वर्धमान ।
इत्यादिक सघपति ए साते, आवा श्रीपुर गाम रे ॥५॥
पाट महोछव मांड्यो रगे' सघ चतुर्विध लाव्या ।
सघपति श्री जगजीवन राणो सघ सहित ते आव्या ॥६॥
दक्षण देश नो गछपति रे, धर्मभूषण तेडाका ।
अति आडबर साये साहमो करीने तप धराव्या रे ॥७॥
शुभ महूरत जोई जिन पूजा शांतिक होम विधान ।
जमणवार पुगते जल जात्रा आये श्रीफल पान रे ॥८॥

शुभचन्द्र हमची

पट्टस्थ होने के पश्चात् इन्होने अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया और अपने आत्म उद्धार के साथ-साथ समाज के अज्ञानान्धकार को दूर करने का बीडा उठाया और उन्हे अपने मिशन मे पर्याप्त सफलता भी मिली। उन्होने अनेक स्थानो पर विहार किया और जन जन के श्रद्धा एव भक्ति के पात्र बने। वे तीर्थों के वन्दना का जाते तो अपने साथ पूरे सघ को ले चलते। एक बार वे सघ के साथ मागी तुगीगिरी की यात्रा पर गए थे और वहा आनन्द के साथ पूजा विधान सम्पन्न किये थे।

मागीतु गी गई जिन भेरियाए, पूजा कीधा पवित्र निज गात्र।
सातिक त्रीस चोविसि पूजा, सोभताए, जल यात्रा करी पोषे पात्र ॥८॥

जब वे नगर मे विहार करते तो उनके भक्तगण उनका गुणानुवाद करते, प्रशसा करते और स्तवन मे पदो की रचना करते। इस प्रसग पर निर्मित एक पद देखिये—

वादो श्री शुभचन्द्र सुखकारी
अभयचन्द्र सूरि पाटे पट्टोधर, अकलक समो अवतारी।
साह मनजी कुल मडल सुदर, ज्ञानकला गुणधारि ॥
माणकदे धन्य तात मनोहर, अध्यम तत्व विचारि ॥२॥
मूलसघ मरहस विचक्षण वादी विबुध मदहारी।
पच महाव्रत शीलशिरोमणि, सुद्धाचार अभरी ॥वादो॥
सोलकला शशि वदन विराजित, मनमथ मान उतारी
वाणी विनोद मिथ्यामत भागे अवनी गयो उदारि
मही मडल महिमा छे मोये, कीरति जल विस्तारि
अमल विमल वाणी मम वोले, गुण गाउ नर नारि ॥वादो॥५॥

"शुभचन्द्र" के शिष्यो मे प श्रीपाल, गणेश, विद्यासागर, जयसागर, आनन्दसागर आदि के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। "श्रीपाल" ने तो शुभचन्द्र के कितने ही पदो में प्रसशात्मक गीत लिखे हैं-जो साहित्यिक एव ऐतिहासिक दोनो प्रकार के हैं।

भ शुभचन्द्र साहित्य निर्माण मे अत्यधिक रुचि रखते थे। यद्यपि उनकी कोई बडी रचना उपलब्ध नही हो सकी है, लेकिन जो पद साहित्य के रूप में इनकी कृतिया मिली हैं, वे इनकी साहित्य-रसिकता की ओर प्रकाश डालने वाली है। अब तक इनके निम्न पद प्राप्त हुए हैं—

१. पेखो सखी चन्द्रसम मुख चन्द्र
२. आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा
३. कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की
४ जपो जिन पार्श्वनाथ भवतार
५ पावन मति मात पद्मावति पेखता
६. प्रात समये शुभ ध्यान धरीजे
७ वासुपूज्य जिन वनिती–सुणो वासु पूज्य मेरी विनती
८ श्री सारदा स्वामिनी प्रणमि पाय, स्तवू वीर जिनेश्वर विबुधराय ।
९ अज्झारा पार्श्वनाथनी वीनती

उक्त पदो एवं विनतियो के अतिरिक्त अभी भ शुभचन्द्र की और भी रचनाए होगी, जो किसी गुटके के पृष्ठो पर अथवा किसी शास्त्र भण्डार मे स्वतन्त्र ग्रथ के रूप मे अज्ञानावस्था मे पडी हुई अपने उद्धार की बाट जोह रही होगी ।

पदो मे कवि ने उत्तम भावो को रखने का प्रयास किया है ऐसा मालूम होता है कि शुभचन्द्र अपने पूर्ववर्ती कवियो के समान "नेमि-राजुल" की जीवन-घटनाओ मे अत्यधिक प्रभावित थे इसलिए एक पद मे उन्होने "कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की" मार्मिक भाव भरा । इस पद से स्पष्ट है कि कवि के जीवन पर मीरा एव सूरदास के पदो का प्रभाव भी पडा हैं—

कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की ।
मधुरी धुनी मुखचन्द विराजित, राजमति गुण गावे ।।श्याम।।१।।
अ ग विभूषण मनीमय मेरे, मनोहर माननी पावे ।
करो कछु तन्त मन्त मेरी सजनी, मोहि प्राणनाथ मिलावे ।।श्याम।।२।।
गज गमनी गुण मंदिर स्यामा, मनमथ मान सतावे ।
कहा अवगुन अव दीन दयाल छोरि मुगति मन भावे ।
सव सखी मिली मनमोहन के ढिग, जाई कथाजु सुनावे ।
सुनो प्रभु श्रीशुभचन्द्र के साहिव, कामिनी कुल क्यो लजावे ।।४।।

कवि ने अपने प्राय: सभी पद भक्ति रस प्रदान लिखें हैं । उनमे विभिन्न तीर्थंकरो का स्तवन किया गया है । आदिनाथ स्तवन का एक पद है देखिये—

आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा ।।टेक।।
सकल सुरासुर शेष सु व्यतर, नर खग दिनपति सेवित चदा ।।१।।

जुग आदि जिनपति भये पावन, पतित उदाहरण नाभि के नंदा ।
दीन दयाल कृपा निधि सागर, पार करो प्रभु-तिमिर जिनंदा ॥२॥

केवल ग्यान थे सब कछु जानत, काहु कहु प्रभु मो मति मंदा ।
देखत दिन-दिन चरण सरण ते, विनती करत यों सूरि शुभचंदा ॥३॥

५१ भट्टारक रत्नचन्द्र

ये भट्टारक शुभचन्द्र के शिष्य थे और उनके स्वर्गवास के पश्चात् भट्टारक गादी पर बैठे थे। एक प्रशस्ति के अनुसार ये संवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पंचमी को भट्टारक पद पर आसीन थे। पं० श्रीपाल ने एक प्रभाती गीत में भ. रत्नचन्द्र के सम्बन्ध में निम्नगीत लिखा है जिसके अनुसार रत्नचन्द्र अत्यधिक सुन्दर एवं अंग प्रत्यंगों से मनोहारी लगते थे। वे विद्वान थे। सिद्धान्त ग्रन्थों के पाठी थे तथा अष्टसहस्री जैसे कष्ट साध्य ग्रन्थों के पारगामी अध्येता थे। पूरा प्रभाति गीत निम्न प्रकार है —

प्रात समे समरो सुखदाय
वादीने रत्नचन्द्र सूरी राय।
रूप देखी गयो इन्द्र आवास
गमने गज हंस रह्या वनवास।
वदन देखि शशधर हवो खीण
लोचने आजीया खंज मृग मीन।
जेहना वचन तणे झडकाये
सकल वादीश्वर निज वश थाये।
शील असिवर करि काम विहंडे
क्रोध माया मद लोभ ने छंडे
पंच मिथ्यात तणा मद खांडे
प्रबल पचेन्द्री महा रिपु डंडे
नव नय तत्व सिद्धन्ति प्रकासे
भलीयरे श्री जिन आगम भासे
अष्टसहस्री आदि ग्रन्थ अनेक
चार जिन वेद लहे सु विवेक
श्री शुभचन्द्र पटोद्धर राय
गछपति रत्नचन्द्र नमु पाय
मण्डण मूलसंघे गुरु एह
विबुध श्रीपाल कहे गुणगेह

भट्टारक रत्नचन्द्र की साहित्य रचना मे विशेष रुचि थी। लेकिन अपने पूर्व गुरुश्रो के समान वे भी छोटी-छोटी रचनाओ के निर्माण मे रुचि रखते थे। अब तक उनकी निम्न रचनाए मिल चुकी है—

१ वृषभ गीत अपर नाम आदिनाथ गीत
२ प्रभाति
३ गीत आदिनाथ
४ बलिभद्रनु गीत
५ चिन्तामणि गीत
६ बावनगज गीत
७. गीत

(१) आदिनाथ के स्तवन मे लिखा हुआ यह छो.ा सा पद है किन्तु भाव भाषा एव शैली की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। पूरा पद निम्न प्रकार है—

वृषभ जिन सेवो सुखकार।
परम निरजन भवभय भजन ससारार्णवतार ॥वृषभ॥ टेक
नाभिराय कुलमडन जिनवर जनम्या जगदाधार।
मन मोहन मरुदेवी नन्दन, सकल कला गुणधार ॥वृषभ॥
कनक कातिसम देह मनोहर, पांचसें धनुष उदार।
उज्वल रत्नचन्द्र सम कीरति विस्तरी भुवन मझार ॥वृषभ॥

(२) प्रभाति मे भी भगवान आदिनाथ की ही स्तुति की गयी है। प्रभाति मे ९ अन्तरे हैं तथा वह "सुप्रात समरो जिनराज, सकल मन वाछित सपजे काज" से प्रारम्भ की गयी है।

(३) राग असावरी में निबद्ध आदिनाथ गीत भी भगवान आदिनाथ के स्तवन के रूप मे लिखा गया है। लेकिन भाव भाषा एव शैली की दृष्टि से जैसा उक्त पद है वैसा यह गीत नही लिखा जा सका। इसकी भाषा भी गुजराती प्रभावित है। गीत वर्णनात्मक है काव्यात्मक नही। अन्त मे कवि ने गीत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

जय जय श्री जिननाथ निरजन वाछित पूरे आस रे।
श्री शुभचन्द्र पटोद्धर व्रज दीनकर, रत्नचन्द्र कहे भासरे ॥९॥

(4) बलिभद्रनु गीत—श्री कृष्ण के बडे भाई बलभद्र ने तुगी पहाड से

निर्वाण प्राप्त किया था। इसलिये यह पहाड जैनो के अनुसार सिद्ध क्षेत्र की कोटि मे आता है। इस क्षेत्र की भट्टारक रत्नचन्द्र ने सघ सहित सवत् १७४५ मे यात्रा की थी। उसी समय यह गीत लिखागया था। इसमे ११ पद्य हैं। काव्य एव भाषा की दृष्टि से गीत सामान्य है लेकिन वह ऐतिहासिक बन गया हैं। गीत के ऐतिहासिक स्थल वाले पद्य निम्न प्रकार हैं—

सवत सत्तर परतालीसे काई सघपति अवई सार रे।
सघ सहित जात्रा करी, मुख बोले जय जयकार रे।
श्री मूलसघे सोहाकरु काई गछपति गुण भण्डार रे।
रत्नचन्द्र सुरिवर कहो, काई गावो नर ने नार रे ॥१॥

(5) "चिन्तामणी पारसनाथनु गीत" भी ऐतिहासिक बन गया है। अकलेश्वर नगर मे चिन्तामणि पार्श्वनाथ का मन्दिर था। भट्टारक रतनचन्द्र उस मन्दिर के बड़े प्रशसक थे। वहा बडे ठाट से अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा होती थी। पूरा गीत निम्न प्रकार है—

श्री चिंतामणि पूजो रे पास, वाछित पोहोचरो मनणी आस।
आवो रे भवियण सहु मली सगे, वसुविध पूज्य रे करो मन रगे।
देस मनोहर कामी रे, सोहे, नगर वनारसी जय मन मोहे ॥आवो रे॥
विश्वसेन राजा रे राज करत, ब्रह्मादेवी राणी सु प्रेम धरत।
तस कुल अबर अभीनवोचन्द, उदयो अनोपम पास जिनेंद।
नीलवरण नव हस्त उत्तग, निरुपम नाम कलाधर चग।
सुरनर खग फणी सेवित पाय, सत सवच्छर पूरण आय।
एकदा अस्थीर ससार जाणि चारित्र नीधु रे सवेग आणी।
तप बले उपनु केवल ज्ञान, लोकालोक प्रकासी रे भान।
सेव करम सहु दूर करी ने, मुगति वधुवरी प्रेम धरी ने।
दर्शन ज्ञान रे वीर्य अनत, पाम्या सौख्य अनतानंत।
वाछित पूरे रे पचम काले, सकट को विघन सहु टाले।
श्री अकलेश्वर नगर निवास, सघ सकल तणी पूरे रे आस।
मुनी शुभचन्द चरण ची आणी, सूरि रतनचन्द्र वदे अमृत वाणी।
आवो रे भवियण सहु मली सघे, वसुविध पूजा रे करो मन सगे।

(६) बावनगजागीत—भट्टारक रत्नचन्द्र ने सवत १६५६ मे बावनगज सिद्ध क्षेत्र की संघ सहित यात्रा की थी। इसको चूलगिरि भी कहते हैं। यहा से पाँच

करोड मुनियो ने निर्वाण प्राप्त किया। सघ मे कितने ही श्रावक थे जिनमे सघवी अखई, अम्बाई, सघवी शाति, माणकजी, अमीचन्द, हेमचन्द, प्रेमचन्द, रामाबाई आदि के नाम उल्लेखनीय है। जव सघ राजनगर आया तो राणा मोहनसिंह ने सवका स्वागत किया। वावनगजा सिद्ध क्षेत्र पर जव सघ पहुचा तो सघ के साथ भट्टारक रत्नचन्द्र भी चूलगिरि पर चढे। वहा सानन्द भगवान की पूजा की तथा भट्टारकजी ने सघपति के तिलक किया। उस दिन पौष सुदी ३ सोमवार था तथा सवत १७५७ था। गीत ऐतिहासिक है इसलिये पूरा गीत यहाँ दिया जा रहा दे—

श्री जिन चरण कमल नमु, सरस्वति प्रणमु पावरे।
चूलगिरि गुन वर्णउ, श्री शुभचन्द्र पसावरे ॥१॥
पवित्र चूल गिरि भेटीये
मिलियो सघ सोहामणे पुजवा वावनगज पायरे।
पाच कोड मुनि सिद्ध वा, जेणो स्तवा सुर रायरे ॥२॥
कुवरजी कुलमडन हवा, सघीय अखइ अम्बाई गुणवाण रे।
तेह कुल अम्बर चाँदलो, सघ विशति घोलो भाई जाणरे ॥३॥
सघवी अम्बई सुत अमरसी, माणकजी अमीचन्द जोडरे।
तेह तणा कुवर कोडामणा, हेमचन्द प्रेमचन्द ते सघनो कोडरे ॥४॥
रामावाई वहनी इम कहे, भाई सघतिलक जस लीजेरे।
रतनचन्द्र गुरपद नमी, सघनां काम ते उत्तम कीजे रे ॥५॥
एनें वचने सज्जन हरखिया, मुरत्त लिघो गुरु पासेरे।
मार्गसीर सुदी पचमी, गुरु श्रीसव पूरे आसरे ॥६॥
सनय सनय साघ चालिये, कियो मेदा ने मीलान रे।
राज पुरिनोकडोराजीयो राणो मोहणसिंघ चतुर सुजान रे ॥७॥
सघ आयो ते जाणि करि, राये सुभट भेज्यो ते निवार रे।
जात्रा करी मघ आणीयो, राजपुर नगर मझार रे ॥८॥
सघवी आवि राणाजो ने मील्या, राणा जीये द्रिधा घणा मान रे।
सघ भले इहा आवियो, आपे फोफल पान रे ॥९॥
जीवनदास ने राय इम कहे, तहमे जा करावो सार रे।
राय आज्ञा मस्तग घरी, संघने लेइ चाल्यो ते निवार रे ॥१०॥
वडवानि आविडे रादिघा, मिलियो श्रीसंघ सार रे।
चूलगिरि डूगर चढ्या, त्यारे मुखे वोले जयकार रे ॥११॥
पूज्य तिहा वहुविघ हवि, हवा सुखकार रे।
सघ पूज हवि सोभति, जाचक वोले मगलाचार रे ॥१२॥

चडता चडता डुगरे, आनन्द हरष अपार रे।
वावन गज जव निरखीये, त्यारे मुखे वोले जयकार रे॥१३।
सवत सतर सतवनो, पोस सुदि तीज सोमवार रे।
सिद्ध क्षेत्र अति सोभते, ते निमहि मानो नहि पार रे॥१४॥
श्री शुभचन्द्र पट्टे हवो, पर वादि मद भजे रे।
रतनचन्द्र सुरिवर कहे, भव्य जीव मन रजे रे॥१५॥

॥ इति गीत ॥

इस प्रकार भट्टारक रतनचन्द्र ने हिन्दी साहित्य के विकास मे जो महत्वपूर्ण योगदान दिया वह इतिहास मे सदा स्मरणीय रहेगा।

५२ श्रीपाल

सवत 1748 की एक प्रशस्ति मे प० श्रीपाल के परिवार का निम्न प्रकार परिचय दिया गया है—

पण्डित वणायग भार्या वीरवाई
|
पण्डित जीवराज भार्या जीवादे
|
पण्डित श्रीपाल भार्या सहजलदे
|
पण्डित अखाई प० अमरसी—प० अनतदास, प० वल्लभदास-विमलदास
पुत्री-अमरवाई, प्रेमवाई, वेलवाई

उक्त प्रशस्ति के अनुसार प० श्रीपाल के पितामह का नाम वणायग एव पिता का नाम जीवराज था। साथ ही उसकी मातामह वीरवाई एव माता जीवादे थी। श्रीपाल की पत्नी का नाम सहजलदे था। उसके पाच लडके अखई, अमरसी, अनतदास, वल्लभदास एव विमलदास एव तीन पुत्रिया अमरवाई, प्रेमावाई एव वेलवाई थी। श्रीपाल का पूरा वश ही पण्डित था। वे हसतट के रहने वाले थे। तथा सघपुरा जाति के श्रावक थे। श्रीपाल एव उसके पूर्वज भट्टारकीय परम्परा के पण्डित थे तथा भट्टारक रत्नकीर्ति, भट्टारक कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, शुभचन्द्र एव भट्टारक रत्नचन्द्र परम्परा मे उनकी गहरी आस्था थी तथा अधिकाश समय उनके सघ मे रह तेआये थे।

श्रीपाल भट्टारक परम्परा के कट्टर समर्थक थे। उन्होने भट्टारक रत्नकीर्ति, की प्रशसा मे एक गीत, भट्टारक अभयचन्द्र की प्रशमा मे दो गीत, भ शुभचन्द्र की प्रशसा में पाच गीत तथा भ रत्नचन्द्र की प्रशमा में तीन गीत लिखे हैं। इन गीतो में भट्टारको के लावण्य मय शरीर की तो प्रशसा की-ही है साथ मे उनके अध्ययन की, प्रभाव की एव महानता की भी प्रशसा की गयी है। इन गीतो मे भट्टारको के माता पिता का नाम भी मिलता है। इन्होने प्रभातिया लिखी है जिनमें प्रात उठकर भट्टारको के दर्शन करने तथा उनकी गुणानुवाद करने, नगर में विहार करने पर उनका जोरदार स्वागत करने की प्रेरणा दी गयी है। इन गीतो मे भट्टारको का ऐतिहासिक वर्णन तो मिलता ही हैं साथ मे उनकी लोकप्रियता का भी पता चलता है।

प० श्रीपाल के अब तक ३० गीत मिले हैं जो उनके साहित्य प्रेम के द्योतक हैं। उनकी अब तक उपलब्ध रचनायें निम्न प्रकार है—

१ उपासकाध्ययन
२ शातिनाथनु भवान्तर गीत
३ रत्नकीर्ति गीत (मराठी)
४ गीत
५ बलिभद्र स्वामिना चन्द्रावली
६ अभयचन्द्र गीत
७ रतनचन्द्र गीत
८ रतनचन्द्र गीत
९ रतनचन्द्र गीत
१० शुभचन्द्र गीत
११ शुभचन्द्र गीत
१२ शुभचन्द्र गीत
१३ प्रभाति
१४ प्रभाति
१५ प्रभाति (अभयचन्द्र)
१६ प्रभाति (शुभचन्द्र)
१७ प्रभाति
१८ सधवई हीरजी गीत
१९ गीत

२० वाहुबलीनी विनती
२१. नेमिनाथनी गीत
२२. वीस विरहमान विनती
२३ घृत कल्लोनी विनती
२४ आदिनाथनी धमाल
२५. भरतेश्वरनुगीत
२६ गीत
२७ गीत
२८ भरतेश्वरनु गीत
२९ शुभचन्द्र हमची
३० गुर्वावली

उक्त रचनाओ मे अधिकाश रचनाये लघु रचनायें हैं जिनसे कवि की काव्य रचना में गहरी रुचि होने का परिचय मिलता है साथ ही मे उसके भट्टारको का परम भक्त होने का सकेत भी मिलता है। कवि की सबसे बडी रचना उपासकाध्यन है। इसे उसने संवत १७४२ मे सूरतनगर में समाप्त की थी। इसमे श्रावकाचार का वर्णन मिलता है। इसकी रचना सघपति रामाजी के पठनार्थ की गयी थी जैसा कि निम्न प्रशस्ति मे ज्ञात होता है—

इति श्री उपासकाध्ययनाख्याने प० श्री श्रीपाल विरचिते सघपति रामाजी नामांकिते श्री श्रावकाचाराभिधानो प्रबन्ध समाप्त ।

पण्डित श्रीपाल के समय सूरतनगर जैन धर्म का प्रमुख केन्द्र था। वहा पर वासुपूज्य स्वामी का मदिर था जहा पर बैठकर कवि ने उपासकाध्ययन का लेखन समाप्त किया था।

सुन्दर सूरति सहेर मझार, सोभित श्री जिन भुवन मझार।
शिखर-बद्ध दीठड मन मोहई कनक कलस ध्वज तोरण सोहे।
वासुपूज्य तणु एक विसाल, त्या, रचना रची रग रसाल।

श्रावकाचार में श्रावक धर्म का वर्णन किया गया है।

श्रीपाल ने भट्टारक रत्नकीर्ति, अभयचन्द्र, शुभचन्द्र एव रत्नचन्द्र की प्रशसा के रूप मे जो पद लिखे है वे अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इन पदो मे भट्टारको

का परिचय के साथ ही कवि की काव्य कुशलता का भी परिचय मिलता है। भट्टारक अभयचन्द्र के सम्बन्ध मे लिखा हुआ एक पद देखिये—

चन्द्रवदनी मृग लोचनी नारि
अभयचन्द्र गच्छ नायक वादो सकलसघ जयकारि।
मदन महामद मोडे ऐ मुनिवर, गोयम सम गुणधारी।
क्षा न्तवि गम्भीर विचक्षण, गुरु तो गुण भण्डारी ॥चन्द्र॥
निखिल कलाविधि विमल विद्यानिधि विकट वादि हठ हारी।
रम्य रूप रंजित नर नायक, सज्जन जन सुखकारी ॥चन्द्र॥
सरसति गच्छ शृ गार शिरोमणी, मूलसघ मनोहारी।
कुमुदचन्द्र पद कमल दिवाकर, श्रीपाल सुख वलीहारी ॥चन्द्र॥

इसी तरह भट्टारक रत्नचन्द्र पर जो पद लिखा है वह भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

आवो रे सखि चन्द्रवदन गुणमाल।
सुरिवर रत्नचन्द्र ने वधावो मोतीयडे भरि थाल ॥आवो॥
शील आभूषण अ गे सोहे, सजय त्रिदश प्रकार।
अष्टविंशति मूल गुणोत्तम, धर्म सदा वश धार ॥आवो॥
परिसा सहे निज अ गे अ गे, करे परिग्रह त्याग।
श्रीपाल कहे एह पचम काले, प्रगट करे शिव प्राण। आवो॥

सवत् १७३४ की ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी के दिन सूरतनगर में शाति विधान किया गया। सघ को भोज दिया गया तथा भट्टारक रत्नचन्द्र ने तिलक किया गया। जिन यन्त्र की प्रक्षाल की गयी उस समय पण्डित श्रीपाल वही थे।

सवत् १७२१ मे पोरबन्दर मे महोत्सव किया गया। चारों प्रकार के सघ एकत्रित हुए। भट्टारक अभयचन्द्र का पट्ट स्थापित किया गया। उस समय शुभचन्द्र मुनि अवस्था मे थे जो गौतम के समान लगते थे।[1]

श्रीपाल ने भट्टारक शुभचन्द्र की हमची लिखी। इसमे उसने भटटारक

---

१. सखी सवत सत्तर एक वीसे वली जेष्ट वदी प्रतिपद दीवसे।
श्री पोवननयर मोहाछव हवा मल्या चतुर्विध सघ हो नवा नवा।

शुभचन्द्र का पूरा इतिवृत्त लिख दिया। सवत् १७२१ मे शुभचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था। शुभचन्द्र की सुन्दरता, महोत्सव मे विभिन्न श्रावको का योगदान, भट्टारक पट्ट पर शुभचन्द्र का अभिषेक, इसी उपलक्ष मे सगीत एव नृत्य का आयोजन आदि सभी का इसमे वर्णन कर दिया है। इसमे २९ पद्य है। अन्तिम दो पद्य निम्न प्रकार है—

दिवस माहि जिम रवि दीपतो, गिरि मा मेरु कहत।
तिम श्री अभयचन्द्र ने पाटि, श्री शुभचन्द्र सोहन्त रे ॥ २८ ॥

श्री शुभचन्द्र तणी ऐ हमची जो गाये जिन धाम।
श्रीपाल विबुध वदे ए वाणी, ते मन वछित पामे रे ॥ २९ ॥

श्रीपाल ने भट्टारक अभयचन्द्र के गीत गाये, फिर भट्टारक शुभचन्द्र की प्रशसा मे गीत लिखे और अन्त में रतनचन्द्र के भट्टारक बनने पर उसका गुणानुवाद किया। इससे यह जान पडता है कि ये भट्टारकीय पडित थे। सघ के साथ रहना तथा समय समय भट्टारको का गुणानुवाद करना, सघ का इतिहास लिखना' समाज को सघ के सम्बन्ध मे अवगत कराते रहना उनके प्रमुख कार्य थे। वे पडित थे और वे भी पुस्तैनी पण्डित।

संवत् १७२८ की एक प्रशस्ति मिलती है जिसमें प० श्रीपाल के पढने के लिये सूरत मे ग्रन्थो की लिपि की गयी थी। उसमे भट्टारक शुभचन्द्र का उल्लेख किया गया है जिनके उपदेश मे ग्रन्थ की प्रतिलिपि की गयी थी। प्रशस्ति निम्न प्रकार है—

सवत सतर अठाइम १७२८ वर्षे मार्गशीरमासे शुकलपक्षे पचमी दिने गुरुवारे श्रीसूर्यपूरे श्रीवासुपूज्य चैत्यालये श्री मूलसघ सरस्वतीगच्छे वलात्कारगणे श्री कुन्दकुन्दान्वये भ० रत्नकीर्तिदेवा तत्पट्टे भ० कुमुदचन्द्रदेवा तत्पट्टे भ० श्री अभयचन्द्र देवास्तत्पट्टे भ० श्री शुभचन्द्रोपदेशात सघपुराशाते पडित जीवराज भार्याजीवादे तयो सुत पडित श्रीपाल पठनार्थं ।

गुर्वावली में भट्टारक विद्यानन्द की परम्परा मे होने वाले भट्टारको का गुणानुवाद है। गुर्वावली ऐतिहासिक बन गयी है। यदि सवत लिखने की उस समय परम्परा होती तो ऐसे गीत भी निश्चित ही इतिहास की सामग्री बन जाते फिर भी इस प्रकार के गीत साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। इसमें ११ पद्य हैं। पूरी गुर्वावली निम्न प्रकार है—

वदो गुरु विद्यानन्द सूरि, जेह नामे दुख जाये दूरि।
जनम जनम ना पाप पलाय, जिम रुर्डा मन वाछित थाय ।। १ ।।
मल्लि भूषण छे मोटा मति, जेहनें जग जाणे शुभमती।
वचन अनुपम अमिय समान, ग्यासदीन रज्यो सुल्तान ।। २ ।।
लक्ष्मीचन्द्र नमो नित पाय, जेहनी सेव करे नर राय।
गच्छनायक गुणवो भन्डार, भव सागर उतारो पार ।। ३ ।।
अभयचन्द्र सेवो सहु सत, जेहना गुणनो नवि अत।
पाले सयम साधु सुजाण, जेहनी महीपति मनि आण ।। ४ ।।
अभयनन्दि यति कोमलकाय, जेहनां वचन भला सुखदाय।
साधु शिरोमणि कहीये एह, भवियण नाम जपा सहु तेह ।। ५ ।।
रतनकीरति रुपे अति भलो, चन्द्रकिरण सम जस उजलो।
हूवड वश तणो सिणगार, जेहना गुणनो नवि पार ।। ६ ।।
कुमदचन्द्र गुरुवो चादलो, रत्नकीरति पाटे गोर भलो।
मोढवश उदयाचल रवि, जेहना वचन वखाणे कवि ।। ७ ।।
अभयचन्द्र सेवो शुभमति, जेहना चरण नमे नरपती।
वादि शिरोमणि कहीये एह, गुणसागर विद्यानो गेह ।। ८ ।।
अभयचन्द्र कुल अवर चन्द्र, उदयो पुन्य तरुवर कद।
दीठे भवियण मनि आणद, वादो सहे गुरु श्री शुभचन्द्र ।। ९ ।।
• ••• सम रवि, जेहना वचन वखाने कवि।
••••वर जसवत, जेहना पद सेवे माहत ।। १० ।।
समरो • •••••गुरु राय, समरता सुख सपति थाय।
रत्नशशि सेवो अन्य काल, प्रणमे जिन सेवक श्रीपाल ।। ११ ।।

इति श्री गुर्वावली समाप्त।

वाहुबलीनी वीनती—इसमें ऋषभदेव के द्वितीय पुत्र बाहुबली की स्तुति की गई है। विनती १२ पद्यो में पूर्ण होती है। रचना सामान्य है। पूरी विनती निम्न प्रकार है—

श्री जिनवर वदन उपन्निमाय, पावन सुत्र सरस्वति प्रणमू पाय।
लहु वाछितार्थ विद्या विवुध, जिनवाणी अनोपम होये सुद्ध ।। १ ।।
भुजवलि गुण वर्णवू तुझ पसाय, जीम हेयडले हरष आण पाय।
वृषभ नृप सुन्दर तनुज एह, धनु पाचसे पचीस उच देह ।। २ ।।

वलवत विलक्षण गुणनो गेह, पोयणपुरि नयरीये राजे एह ।
सुखद सुभट नर नमित पाय, जेण जीत्यो ॥ ३ ॥

मानभंग दीठ्ठो जव जेष्ठ भ्रात, वैराग धरी वन माहे जात ।
दीधे राजकाज महावलने आज, प्रभु चाल्या आतमना करवा काज ॥ ४ ॥

कैलासगिरि आदिनाथ वास, जै चारित्र लीधू मन उल्लास ।
तप तापे ज्वालि माया जाल, क्षमा खड्गधरी हण्यो क्रोध काल ॥ ५ ॥

जीत्यो समकित वाणे लोभ वेरी, ज्ञानाकुश मद गज राख्यो घेरी ।
तप करता गत एक वर्ष सार, पछे कर्महणी वरी मुगति नार ॥ ६ ॥

जय बाहुवली देवाधिदेव, तुझ सुर नर किन्नर करेय सेव ।
तू पचम काले प्रतक्ष वीर, तू सकल सूरमा छे प्रवीण ॥ ७ ॥

तोरे नामे भुजग पुष्प माल, तोरे नामे नडे न पीसाच काल ।
तोरे नामे अर्णव जावे पार, तू मन गाम कोत्र पुरे ॥ ८ ॥

लेख वार्वसिह दूरे जाय, भुजवली तोरा नाम तणे पसाऊय ।
सुभ सायर तट मोहे नयर रम्य, रुडु नामे अनोपम दपण धन्य ॥ ९ ॥

ताहा सघपति हेमजी धर्मवत, वसे वणीक वश हु वड सतंग ।
भुजवली मोहे तल गेह चग, प्रभु पद पूजता उपजे आणद ॥ १० ॥

श्री मूलसघ माहन सा, जयो रत्नकीर्ति गोर विद्यावत ।
तस पद उदयो विद्या समुद्र, वादीगज केसरी कुमुदचन्द्र ॥ ११ ॥

तस पाट पट्टोधर प्रगटो पूर, देखी वचन कल गया वादीपुर ।
सूरि अभयचन्द्र उदयो दिनेस, कर जोडी ने सेवक (श्रीपाल) नामे सीस ॥१२॥

घृत कल्लोजनी विनती—हसपुरी मे कमला नामक श्राविका थी । वह प्रतिदिन पंचामृताभिषेक करती थी । एक रात्रि को उसको स्वप्न आया कि यदि आदिनाथ की प्रतिमा का घी से अभिषेक किया जावे तो सब सिद्धिया प्राप्त होगी । प्रात होने पर प्रतिमा को घी से अभिषेक किया गया । इसके पश्चात जिसने भी अभिषेक किया उसी के सब सिद्धिया प्राप्त हो गयी । इसी का श्रीपाल कवि ने अपनी इस विनती मे उल्लेख किया है । रचना सामान्य है । विनती मे 8 पद्य हैं ।

श्रीपाल ने कुछ गीत भी लिखे हैं जिनमे आदिनाथ, भरतेश्वर, नेमिनाथ आदि का स्तवन किया गया है । सबमे अधिक गीत आदिनाथ के हैं जिनसे पता चलता है कि वे भ० ऋषभदेव के अधिक उपासक थे । एक ऋषभदेवनुगीत मे 'धूले वनयर

मझार" लिखा है जिससे पता चलता है कि वे सवत १७४७ मे ऋषभदेव की यात्रा पर ससैंघ आये थे। सघ सूरत से चला था जिसके प्रमुख थे भ० रत्नचन्द्र। यह सघ अखई एव अखाई ने चलाया था जो पहिले से ही राघपति कहलाते थे। इसमे २० पद्य हैं।

इस प्रकार प० श्रीपाल की साहित्यिक सेवाए अत्यधिक उल्लेखनीय एवं चिरस्मरणीय हैं।

५३ ब्रह्म जयसागर

ब्रह्म जयसागर भट्टारक रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्यो मे से थे। ये ब्रह्मचारी थे और जीवन पर्यन्त इसी पद पर रहते हुए अपना आत्म विकास करते रहे। जयसागर अपने गुरु के समान ही साहित्याराधना मे लगे रहते थे। उन्होने या तो भट्टारक रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे पद लिखे हैं या फिर छोटी छोटी अन्य कृतिया लिखी है। उनकी अब तक किसी बडी रचना की प्राप्ति नही हो सकी है।

जयसागर के जीवन के सम्बन्ध मे अभी कोई विशेष जानकारी प्राप्त नही हो सकी है लेकिन इन्होने अपनी सभी रचनाओ मे भट्टारक रत्नकीर्ति का ही उल्लेख किया है इसलिये ऐसा जान पडता है कि वे रत्नकीर्ति के समय में ही स्वर्गवासी हो गये थे। रत्नकीर्ति सवत १६५६ तक भट्टारक पद पर रहे इसलिये ब्रह्म जयसागर को भी हम इससे आगे नही ले जा सकते। गुजरात का घोघा नगर इनकी साहित्यिक सेवाओ का केन्द्र था। वैसे ये भी भट्टारक रत्नकीर्ति के साथ रहने वाले पडित थे। जयसागर की अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं—

(१) चूनडी गीत
(२) मल्लिदासनी वेल
(३) सघ गीत
(४) विद्यानन्दिगीत
(५) सकटहर-पार्श्वनाथ जिनगीत
(६) क्षेत्रपाल गीत
(७) प्रभाति
(८) क्षेत्रपालगीत
(९) रत्नकीर्तिना पूजा गीत
(१०) नेमीश्वर गीत

(११) यशोधरगीत
(१२) पंच कल्याणक गीत

उक्त रचनाओ का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

(१) चूनडी गीत

इसका दूसरा नाम चारित्र चूनडी भी दिया हुआ है। राजमती नेमिनाथ से चारित्र चूनडी ओढने के लिये माग रही है। नेमि गिरनार के भूषण है। वहा भव जीवो का निवास है। चारो ओर सम्यकत्व रूपी हरियाली है। पीला रंग बहुत सुन्दर लगता है जिस पर देवता भी मोहित हो जाते हैं। मूल गुणो का स्वच्छ रग बन गया है। जिनवाणी का उसमे रस दिया है। तप मे वह चूनडी सूखती हैं। उसमे रग चटकता है छूटता नहीं। पाच महाव्रत कमनो के समान रग लाने वाले हैं। पाच समितियो से नहीं मिटने वाला नीला वर्ण चढ जाता हैं। चारोसी लाख जो उत्तर गुण है उससे वह चुनरी सुन्दर लगती हैं। तीन गुप्तियां से वह चूनडी नीली, पीली से आप्लावित होकर मन को मोह रही है। इस प्रकार की चूनडी को ओढकर राजुल स्वर्ग चली गयी जहा वह स्वग के सुख भोग रही है। इस प्रकार की चारित्र-चूनडी जो भी ओढेगा उसे मन वाछित सुखो की प्राप्ति होगी और अन्त मे ससार सागर को पार करेगा।

चूनडी मे १६ पद्य हैं। ब्रह्म जयसागर ने इसमे रत्नकीर्ति को स्मरण किया है; उसका अन्तिम पद्य निम्न प्रकार हैं—[1]

सूरि रत्नकीरति जयकारी, शुभ धर्म शशि गुण धारी।
नर नारी चुनटी गावे, ब्रह्म जयसागर कहे भावे॥ १६॥

२. सघपति श्री मल्लिदासनी वेल

यह एक ऐतिहासिक कृति है जिसमे मल्लिदास द्वारा आयोजित पचकल्याणक प्रतिष्ठा का वर्णन किया गया हैं। पचकल्याण प्रतिष्ठा बलमाड नगर मे हुई थी। वे हूबड वश के शिरोमणि थे। उनकी पत्नि का नाम राजबाई था। मल्लिदास का पुत्र मोहनदे का पति था। वह राजा श्रेणिक के समान जिन भक्ति मे ओतप्रोत था। प्रतिदिन अपार सम्पत्ति का दान करता रहता था। भट्टारक रत्नकीर्ति का वह भक्त था इसलिये उन्ही के उपदेश से उसने पचकल्याणक प्रतिष्ठा करायी।

---

१ चूनडी की पूरी प्रति आगे दी गयी है।

मगसिर शुक्ला ५ के दिन कु कुम पत्रिका लिखी गयी। विभिन्न नगरो मे स्वय पडितो को भेजा गया। रत्नकीर्ति अपने विशाल सघ के साथ वहा आये। प्रतिष्ठा की सभी विधिया-अकुरारोपण, वास्तुविधान, नदीपाठ, होम आदि सम्पन्न किये गये। जल-यात्रा की गयी जिसमे स्त्रिया मगलगीत गाती हुई चलने लगी। राजबाई के हर्ष का ठिकाना नही रहा। अ त मे कलशाभिषेक के पश्चात प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न हुआ। माघ शुक्ला ११ के दिन भ रत्नकीर्ति ने मल्लिदास के तिलक क्रिया तथा पच महाव्रत अगीकार कराये गये। उसका नाम जिनचन्द्र रखा गया।

वेल लघु रचना अवश्य है फिर भी तत्कालीन धार्मिक समाज का अच्छा चित्र उपस्थित करता है। वेल का अन्तिम पाठ निम्न प्रकार है—[1]

मन वाछति फल पाय, ज्यो ए सघपति श्री मल्लिदास।
ब्रह्म जयसागर इम कहेए, सोभागेण पीहोता आ सके॥

३ सघगीत

भट्टारक रत्नकीर्ति ने अपने सघ के साथ शत्रु जय एव गिरिनार तीर्थों की यात्रा की थी। सघ में मुनि अर्यिका श्रावक श्राविका चारो ही थे। रत्नकीर्ति सबके प्रमुख थे। तेजबाई सघ की सचालिका थी। मगसिर सुदी पचमी के दिन भाणेज गोपाल एव उसकी पत्नि वेजलदे को तिलक करके सम्मानित किया गया। रत्नकीर्ति पालकी मे विराजते थे। गीत छोटा सा है लेकिन तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश डालता है।

४. विद्यानन्दि पद

इस पद मे मूलसघ के भट्टारक देवेन्द्र कीर्ति के शिष्य भट्टारक विद्यानन्दि का स्तवन किया गया है। विद्यानन्दि ने गुजरात में धम की बडी प्रभावना की थी। वे भट्टारक होते हुए भी दिगम्बर रहते थे तथा कामदेव पर विजय प्राप्त की थी। शेरवाड वश में उत्पन्न हरिराज उनके पिता का नाम था तथा चापु माता का नाम था।[2]

५ प्रभाति

जयसागर ने अपनी प्रभाति गीत मे भट्टारक रत्नकीर्ति का गुणानुवाद

---

१ वेल की पूरी प्रति आगे दी गयी है

२ पूरा पद आगे दिया गया है।

किया है तथा जन जन को रत्नकीर्ति की पूजा, भक्ति करने की प्रेरणा दी गयी है। उस समय प्रात काल श्रावक गण भट्टारकों के दर्शन करते थे तथा उपदेश सुनकर अपने जीवन को सौभाग्यशाली मानते थे। भट्टारकों के शिष्य जनता मे उनका प्रचार भी किया करते थे।

६ संकटहर पार्श्व जिनगीत

हासोट नगर मे पार्श्वनाथ स्वामी का मन्दिर था। उसी का इस गीत मे स्तवन किया गया है। उसे संकट हर पार्श्वनाथ के रूप मे स्मरण किया गया है। मन्दिर मे प्रतिदिन उत्सव विधान होते रहते थे तथा सभी भक्त अपनी मनोकामना के लिये प्रार्थना किया करते थे।

७ क्षेत्रपाल गीत

घोघा नगर के दिगम्बर जैन मन्दिर मे क्षेत्रपाल विराजमान थे। उन्ही के स्तवन मे यह गीत लिखा गया है। कवि ने क्षेत्रपाल को सम्यग्दृष्टि एवं जिन शासन का रक्षक कहा है।

८ भट्टारक रत्नकीर्तिना पूजा गीत

कवि के समय मे भट्टारकों का इतना अधिक प्रभाव था कि उनकी भी अष्टप्रकारी पूजा होती थी। ब्र जयसागर ने प्रस्तुत गीत मे इसी के लिये आह्वान किया है।

९ चौपई गीत

इसीमे कवि ने भट्टारक पद्मनन्दि-भ देवेन्द्रकीर्ति से लेकर भट्टारक रत्नकीर्ति तक के भट्टारकों का उल्लेख किया है। गीत ऐतिहासिक कृति है।

१० नेमीश्वर गीत

नेमिनाथ पर कवि के दो गीत उपलब्ध हुए है। गीत सामान्य हैं।

11. जसोधर गीत

यशोधर के जीवन पर जैन कवियो ने सभी भाषाओं म काव्य लिखे हैं। कवि ने भी इस गीत में राजा यशोधर के जीवन का अति संक्षिप्त वर्णन किया है।

१२ पंचकल्याणक गीत

यह कवि की सबसे बडी रचना है जिसमे शान्तिनाथ स्वामी का गर्भ कल्या-

णक, जन्म, तप, ज्ञान और निर्वाण कल्याणको का वर्णन किया गया है। कल्याणक गीत की रचना घोघानगर मे चन्द्रप्रभु चैत्यालय मे की गई थी। इसमे पाच कल्याणको की पांच ढालें हैं।

१४. कविवर गणेश

गणेश कवि भट्टारक रत्नकीर्ति का प्रमुख शिष्य एव प्रशसक थे। इन्होने अपने गुरु एव आश्रयदाता के सम्बन्ध मे जितने गीत लिखे हैं उतने दूसरे कवियो ने बहुत कम लिखे हैं। गणेश कवि के सभी गीत अपने पीछे इतिहास लिये हुए हैं। ये कभी विहार के समय के, कभी यात्रा सघो का नेतृत्व करते समय के, कभी जनता से भट्टारक रत्नकीर्ति का स्वागत करने हेतु प्ररणा देने के उद्देश्य से लिखे गये हैं। गणेश कवि बहुत सुसस्कृत भाषा मे रत्नकीर्ति की प्रशसा करता है। इस प्रकार के गीतो की सख्या १२-१३ होगी। इन गीतो मे गणेश कवि भक्तिमात्र से रत्नकीर्ति भट्टारक का गुणानुवाद करता है। इन गीतो मे भट्टारक के माता पिता का नाम, वश का नाम, जन्म स्थान का नाम, भट्टारक पद प्राप्त करने का स्थान, शरीर की सुन्दरता, कमनीयता, अग-प्रत्यगो की बनावट आदि के सम्बन्ध मे विस्तृत वर्णन किया गया है। इसी तरह का एक पद देखिये—

रोग केदार गडो

साभल सजनी सेहे गोर सोहेरे।
रत्नकीर्ति सूरी जनमन मोहे रे॥
अभयनन्द पद कज उदयो सूर रे, कुमति तिमिर हर विद्या पूर रे॥१॥
हु वड वश-विभुव विख्यात रे, मात मेहेजलदे देवीदास तात रे।
कुअर कलानिधि कोमल काय रे, पद पूजो प्रेमे पातक पलाय रे॥२॥
श्री मूलसघ महिमा निधान रे, सरसति गछ गोर गोयम समान रे।
अरध शशि सम सोहे शुभ भाल रे, वदन कमल शुभ नयन विशाल रे॥३॥
दशन दाडिम सम रसना रसाल रे अधर बिंबीफल विजित प्रवाल रे।
कठ कबू समा रेखा त्रय राजे रे, कर किसलय सम नख छवि छाजे रे॥४॥
हृदय विसाल वर गज गति चाल रे, गछपति गुह्यो गभीर गुणमाल रे।
पच महाव्रत धर दया प्रतिपाल रे पच समिति त्रय गुपति गुणाल रे॥५॥
उदयो अवनि अभयकुमार रे, दिगम्बर दर्सण तणो सणगार रे।
सयल-प्रबल बल जग जीतो मार रे, शील सोभागी सुन्दर उदार रे॥६॥

कनक वरण तन सुरूप रे, महि तले माने मोटा बहु भूप रे।
विनय विवेकी नर परधान रे, अमर महीरुह सम आपे दान रे ।।७।।
जग जस निर्मल अमल सरीर रे, गिरिवर समवार जलधी गभीर रे।
तुझ दीठडे मुख सामरे नेह रे, अकलक निकलक गोवरधन जेहरे ।।८।।
अभेनन्द पाटे पटोधर एह रे, सुगुण सलूणो रुचु सु सनेह रे।
धर्म भूषण धन सूरीमत्र आपारे, गणेश कहे गोर गछपति थाप्या रे ।।९।।

उक्त गीत में रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे कितना खुलकर लिखा है पाठक उसका आस्वादन कर सकेंगे। कवि ने उनकी प्रत्येक बात पर प्रकाश डाला है यहा तक कि उसके स्वभाव की चर्चा कर डाली है। इसी तरह के कम अथवा अधिक रूप मे और गीतों मे प्रकाश डाला गया है। जो पूर्णत सत्य घटनाओ के आधार पर ही आधारित हैं।

कवि के दो गीत तेजावाई गीत के नाम से मिलते हैं। इसने सवत १६४३ मे भट्टारक रत्नकीर्ति से दीक्षा धारण की थी। गणेश कवि ने इस घटना को भी छन्दोबद्ध किया है।

एक प्रशस्ति मे गणेश कवि ने भट्टारक रत्नकीर्ति के गुणानुवाद को शिव सुख का साधन माना है। पूरी प्रभाति निम्न प्रकार है—

सुप्रभाति नमो देव जिणन्द।
रत्नकीर्ति सूरी सेवो आनन्द ।।
सबल प्रबल जेणे काम हराव्यो, जाननणा पोरमाहि यतीये वधाव्यो।
वागवादनी वदने वसे एहने, एहनी उपमा कहीसे कहनें ।।२।।
गछपति गिरवो गुण गभीर, शील सनाह धरे मन धीर ।।३।।
जे नरनारी ए गोर गीत गामे, गणेश कहे ते शिव सुख पासे ।।४।।

एक दूसरे गीत मे गणेश कवि ने रत्नकीर्ति की अनेक उपमाओ से प्रशसा की है।

कला बहोत्तरि कोडामणो रे, कमल वदन करुणाल रे।
गछ नायक गुण आगलो रे, रत्नकीरति विबुध विशाल रे ।।
आवो रे भामिनी गज गामिनी रे, स्वामीजी वाणी विख्यात रे ।।
अभयनन्द पदकज दिनकरु रे, धन एहना मातने तात रे।

मान मूकाव्या मिथ्यातिया रे, हाथिया ते वादी गजनी सोहे ।
मूलसघ मुनि माहि सरस्वती गछ माहि लीहरे ।।३।।
चारित्र रग सोहे रुवडो रे, समकित सुमति सोहत रे ।
वागवादिनी मुखे रूवडी रे, रुग्रडला भविक जन मोहत रे ।।४।।
मान सरोवर सोहे हससु रे, तारा माहि सोहे जिम चन्द रे ।
रत्नकीर्ति सोहे सीलसू रे, मुदडी नगीना केरा वृन्द रे ।
जिनमत जाणे जाति युगतस्यु रे, जालणापुर प्रसिद्ध रे ।
सघवी तोला आसवा माली रे, गणेश कहे पाट सिद्ध रे ।।६।।

भट्टारक रत्नकीर्ति के गुणानुवाद के अतिरिक्त भट्टारक कुमुदचन्द्र की प्रशंसा में लिखा हुआ एक गीत मिलता है जिसका नाम गुरु स्तुति है । सवत १६५६ में वारडोली नगर मे कुमुदचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था प्रस्तुत गीत में उसी का उल्लेख किया गया है । कुमुदचन्द्र मोढवंश के श्रावक थे उनके पिता का नाम सदाफल एव माता का नाम पदमाबाई था । वे दर्शन ज्ञान एव चारित्र से सम्पन्न थे । पूरी स्तुति निम्न प्रकार है—

माई रे मन मोहन मुनिवर सरस्वती गच्छ सोहत रे ।
कुमुदचन्द्र भट्टारक उदयो भवियण मन मोहत रे ।।माई।।१।।
गुण गम्भीर गरउ गछ नायक वायक रुडा रसाल रे ।
रत्नकीर्ति गोर पाटि पटोधर मानदे भला भूपाल रे ।।माई।।२।।
सघपति श्री कहानजी भाइयो भल वीर रत्न जयवत रे ।
करे प्रतिष्ठा पाट महोत्सव गो थाणे गुणवंत रे ।।माई।।३।।
वित्त विलसे उलट भरे धन्य मल्लिदास ।
कुमुदचन्द्र गछ नायक थाप्या, गोपाल पुहती आस रे ।।माई।।४।।
सवत सोल छपन्ने, वैसाखे, प्रगट पटोधर थाप्या रे ।
रत्नकीर्ति गोर वारडोली वर, सूर मन्त्र शुभ आप्या रे ।।माई।।५।।
मूलसघ, प्रगट मणि माहत, सरसति गच्छ सोहावे रे ।
कुमुदचन्द्र भट्टारक आगलि वादि को वादे न आवे रे ।।६।।
मोढवश शृगार शिरोमणि, साह सदाफल तात रे ।
जायो यतिवर जुग जयवतो पदमाबाई सोहात रे ।। ।।7।।
शील तणो रग अग अनोपम दर्शन ज्ञान चारित्र रे ।। ।।८।।

अभयनन्दि गोर पाट पट्टोधर, रत्नकीर्ति मुनिन्द रे।
तस पाटि सोहे कुमुदचन्द्र गोर, गणेस कहे आणद रे ॥ ॥९॥

इस प्रकार गणेश कवि ने भट्टारको के सम्बन्ध मे जो गीत, प्रभृति लिखी है वह इतिहास की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

लेकिन गणेश कवि के सम्बन्ध मे इन गीतो से कोई जानकारी नहीं मिलती। यह अवश्य है कि उन्होंने कुमुदचन्द्र का पट्टोत्सव देखा था तथा कुछ समय तक जीवित भी रहे थे। क्योंकि यदि अधिक समय तक जीवित रहते तो उनको सम्बन्ध मे और भी गीत लिखते।

५५ सुमतिसागर

ये भट्टारक अभयनन्दि के शिष्य थे। अपने गुरु भट्टारक अभयनन्दि के साथ रहते थे। उनके विहार के समय जन साधारण को भट्टारकजी के प्रति भक्ति-भावना प्रगट करने की प्रेरणा दिया करते थे। भट्टारक अभयनन्दि के पश्चात जब रत्नकीर्ति भट्टारक बने तो वे रत्नकीर्ति के प्रिय शिष्य बन गये। वैसे गुरु भाई होने के कारण रत्नकीर्ति इनका बहुत सम्मान करते थे। इन्होंने रत्नकीर्ति की प्रशसा मे भी गीत लिखे हैं। इनकी अब तक जो कृतियां उपलब्ध हुई है उनके नाम निम्न प्रकार हैं—

१ हरियाली–दो
२ साधर्मी गीत
३ नेमिगीत
४ गणधर विनती
५ रत्नकीर्ति गीत
६ नेमिनाथ द्वादशमासा
७ अन्य गीत

१ हरियाली

कवि ने हरियाली के नाम से दो गीत लिखे हैं। इनमे मानव के जन्म के सम्बन्ध में तथ्य लिखे गये हैं। मनुष्य को चारो ओर हरियाली ही हरियाली दिखती है उसमें वह अपना सब कुछ भूल जाता है जो उचित नही। इसी तथ्य को कवि ने अपने दोनो गीतो में निबद्ध किया है। गीतो मे भट्टारक अभयनन्दि के नाम का उल्लेख किया है इससे ये उन्ही के समय के लिखे हुए गीत लगते हैं।

२ साधर्मी गीत

यह भी सम्बोधनात्मक गीत है। जिसमे १० अन्तरे हैं। इसे अभयनन्दि भट्टारक के समय लिखा गया था। गीत में ससार की भयानकता पर प्रकाश डाला गया है।

३ नेमि गीत

राजुल नेमि के अभाव मे अपने आपको कैसी समझती हैं इसी का गीत में वर्णन किया गया है। गीत अच्छा है। इसीलिये यहा उसे दिया जा रहा है—

नेमि आतमा राजिमति वर कामा छे सम्बन्ध करे।
परि परिना दुख सम र ने किम सहिये, कु वियोगन रे॥
नारि भणे गुणि मुझ नायक, तुम मुझ चलो सयोग न रे।
एक मेक थई खीर नीर जिम लीजे म नीजो सारो भोगन रे।
तुझ बिन सुख न निद्रा नारी तुम बिन न हिय सयोगन रे।
तुझ बिन रजे एकला भाई, किमे दुखिया वियोगन रे।
हू छू नारी गुणवन्तीजी, नेमि कामु कीजे जायन रे।
रूपकला मयलि चतुराई, नाथ नही मुझ उछन रे।
जिम विना प्रतिमा देहरा जो, गुण विना रूप न सोभे रे।
जिम विना परिमल फूल न सोभे, सरोवर कमल विहडन रे।
धर्म दया विना कदा न सोभे ज्ञान विहूणो जीवन रे।
क्रिया विना जेम मुनिवर दीसे, दुखिया फिरे ससारन रे।
दान विना जिम लखमी दिनि, पात्र विना जिम दानन रे।
घीय विना भोजन नवि सोभे कला विहूणो वोधन रे।
विवेक बिना जिम नर नारी भाई, नवि शोभे बहु मध्यन रे।
तेह विना जिम प्रीति न शाभे, तिमहू तुझ विना नाथन रे।
जलचर जल बिन टलवले जी, तिमहू तुझ बिना पहिय रे।
एक दिवस गुणवन्त प्रीतडी, ते अब छडियन छडे रे।
सरखे सरिणु मेल विने, करतार तु का खडे, रे।
... नवि सपजे जी, इम वोले राजुल मढिय रे ॥५॥
... उ... नवि करियेजी, तुम्ह विन मुझ नवि कोइम रे।
... महीतल दामे, नवि दीसे मुझ जो मन रे,
पच्यासीये को... स जी, करि सघला नर एक तालन रे।
... सुर मनज जो... नारायण, सुमतिसागर इम वोलन रे।
... दक्षण पूरव पश्चिम
... करे श्री अभयचन्द्र गोर, ... नि नेमिगीत

गीत

रत्नकीर्ति की प्रशसा मे कवि द्वारा निबद्ध दो गीत उपलब्ध हुए हैं। एक गीत मे सवत् १६३० में वैशाख सुदी ततीया के दिन पट्ट स्थापना का उल्लेख किया है। इसलिये गीत उसके बाद के लिखे हुए मालूम पडते हैं। दोनो गीतो मे से एक गीत मे रत्नकीर्ति के सम्बन्ध में अच्छा प्रकाश डाला गया है इसलिये उसे यहां दिया जा रहा है—

गीत राग–धन्यासी

श्री जिनवर चरण कमल वर मधुकर गुण गण मणि भण्डार जी।
भव्य कुमुद वन रंजन दिनकर, करुणा रस जी रे, करुणा रस आगार जी।
अभयनन्दि महोदय दिन मणि भविक कमल जीरे, भविक कमल मन रजे जी।
रत्नकीर्ति सूरि वादि शिरोमणि, परवादी मद गजे जी॥ ॥१॥
पच महाव्रत पच सुमति अणव, गुपति एह गोर मोहे जी।
दुक्ख शोक भय रोग निवारे, वाणिह त्रिभुवन मोहे णी॥ ॥२॥
धनि धनि हुवड वश एह, कलि काल गणधर जाया जी।
सेहेजलदे देवदास सुनन्दन, रत्नकीर्ति सूरी राया जी॥ ॥३॥
दक्षण देश विचार विलक्षण जालणापुर जगिसारा जी।
सघपति पाक साह विख्यात सघवणि रुपाई उदार जी॥ ॥४॥
ते वहे कूखे कुअर उपमा सघवी, आसवा अति गुणमाल जी।
सघवी रामाजी अगे शुभ लक्षण, वघेरवाल सुविशाल जी॥ ॥५॥
सवत् सोलसा त्रिस सवच्छर वैशाख शुदि त्रीज सार जी।
अभयनन्दि गोर पाटि थाप्या रोहिणी नक्षत्र शनिवार जी॥ ॥६॥
आगम काव्य पुराण सुलक्षण, तर्क न्यास गुरु जाणे जी।
छन्द नाटिक पिगल सिद्धान्त, पृथक पृथक वखाणे जी॥ ॥७॥
कनक काति शोभित तस गात्र, मधुर समान सुवाणि जी।
मदन मान मर्दन पचानन, भारती गच्छ सन्मान जी॥ ॥८॥
श्री अभयनन्दि सूरी यह धुरधर सकलसघ जयकार जी।
सुमतिसागर तस पाय प्रणमे निर्मल सयम धारी जी॥ ॥९॥

४ नेमिनाथ का द्वादश मासा ... छन्द ... र हरियाली हो

इसमे नेमि के विरह मे राजुल के बारह... जो उचित नही। ... होते हैं इसका वर्णन किया जाता है। इसमें १३ पद्य हैं जिन... गीतो मे भट्टारक अभयनन्दि का वर्णन मिलता हैं। अन्तिम १३वें पद्य मे प्रशस्ति दी ... लिखे हुए गीत लगते हैं।

श्री लक्ष्मीचन्द्र मुनीसरु अभिचन्द्र पोट सु सार।
तस पाटे चारित्र चतुर जाणु अभिनन्दि गुणधार।
बहु प्रकारिइ पूजो श्री जिन माणिक देवी सुमत।
श्री सुमतिसागर दोठव जिनवर नेमि जय गुणवन्त॥
रूप सोभागिण वन्दन जइये॥

५६. दामोदर

दामोदर भट्टारकीय पडित थे। इन्होंने भट्टारक रत्नकीर्ति से लेकर भट्टारक अभयचन्द्र तक का समय देखा था। इसलिये तीनो ही भट्टारको के सम्बन्ध में इन्होंने गीत लिखे हैं। इसके अतिरिक्त "सघवी नागजी" गीत भी लिखा है। अभयचन्द्र के प्रति इनकी अधिक भक्ति थी। इनके द्वारा लिखा हुआ एक गीत देखिये—

राग धन्यासी

आदि जिणद नमी करी प्रणमी सह गोर पाय।
अभयचन्द्र गुण गायेस्यु माहरे हैडले हरष न माय।
सहिली सहे गोर गाइ ये रे गोर कुमुदचन्द्र ने भाण।
श्री अभयचन्द्र चतुर-सुजाण ....।२।
अभयनन्दी नवो गोतम ए गोर प्रगट्यो शील तणो सिणगार।
वादी तिमिरहर दिनकरु, सरस्वती गच्छ साधार।३।
हूवड वंश शृंगार शिरोमणि श्रीपाल साधन मात।
बारडोली नयरि उछव कीधो महोछव अन्न अवार।
सघवी नागजी अति आणद्या, हेमजी हरष अपार।४।
संघवी कुअरजी कुल मण्डन मेघजी महिमावत।
रूपजी मालजी मनोहारु, सहु सज्जन मन मोहत ।५।
संघवे भीमजी भावस्यु सुत जीवा मनें उल्हास।
सघवई जीवराज उलट घणो, पहोती छै मन तणी आस।६।
सवत सोल पच्यासीये फागुण सुदि एकादशी सोमवार।
नेमिचन्द्र सुर मत्रज जाप्यो, वरतयो जयकार।७।
उत्तर दक्षण पूरब पश्चिम माने सहे गोर आण।
तिलक करे श्री अभयचन्द्र गोर, वचन कर्‌या प्रमाण।८।

रत्नकीर्ति पाटे कुमुदचन्द्र गोर, वहुजन दे आशीष।
तस पाटि श्री अभयचन्द्र गोर प्रतपो कोडि वरीष।९।
सघ सहूनें ए यति वाहलों, धर्मसागरस्युं नेह।
कहे दामोदर सेवो सज्जन, वांछित कण छै मेह।१०।

प्रस्तुत गीत को पण्डित श्रीपाल के पुत्र अखई के पठनार्थ लिखा गया था ऐसा भी उल्लेख मिला है।

५७. कल्याणसागर

कल्याणसागर भट्टारकीय पडित थे तथा भट्टारक रत्नकीर्ति के सघ में रहते थे। इनके अब तक चार गीत मिले हैं जिनके नाम हैं क्षेत्रपाल गीत, नेमिजिन गीत, गीत एव पद।

५८ आणदसागर

ये भट्टारक शुभचन्द्र के सघ मे रहते थे। इनके द्वारा लिखे हुए तीन गीत मिले हैं और वे सभी शुभचन्द्र की प्रशसा मे लिखे गये हैं।

५९ विद्यासागर

विद्यासागर ने अपनी चन्द्रप्रभनी विनती में अपना परिचय देते हुए लिखा है कि वे भट्टारक शुभचन्द्र के शिष्य थे। वे बलात्कारगण एव सरस्वती गच्छ के साधु थे। चन्द्रप्रभ विनती को इन्होने सवत् १७२४ मे समाप्त किया था। इनकी अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं—

१. सोलह स्वप्न
२ जिन जन्म महोत्सव
३ सप्तव्यसन सवैय्या
४. दर्शनाष्टाग
५. विषापहारस्तोत्र भाषा
६. भूपालस्तोत्र भाषा
७ रविव्रत कथा
८ पद्मावतीनी विनती
९. चन्द्रप्रभनी विनती

सोहल स्वप्न

सोलह स्वप्न लघु कृति है जिसमे तीर्थंकर की माता को आने वाले सोलह स्वप्नो के बारे मे वर्णन दिया हुआ है। जिन जन्म महोत्सव १२ पद्यो की कृति है। पद्मावतीनी विनती मे पद्मावतीदेवी का स्तवन है जो १० छप्पय छन्दो में पूर्ण होती है। इसी तरह चन्द्रप्रभविनती १८ पद्यो की रचना है। कवि ने इसके अन्त मे अपन परिचय निम्न प्रकार दिया है—

मूलसघ नभचन्द्र सम अभयचन्द्र, तस पाटे भूषण हवा सौम्यचन्द्र।
तेह नेह थि वाणि वदे उदार, प्रभू विद्यासागर तणो आयो पार।
शुभ सवत सत्तर चोवीस समे, नभ मास वदि सप्तमी भौम दिने।
कर जोडी ने विनती एह कहे, बहु जीवन धन सुख तेह लेहे।।८।।

कवि की रविव्रत कथा अच्छी कृति है जो ३६ पद्यो में पूर्ण होती है। भाषा गुजराती प्रभावित है। काव्य रचना का एकमात्र उद्देश्य कथा कहना है। एक पद्य देखिये—

पुत्र कहे माता सुणो व्रत ए नहि सार।
खरच नहि जिहा धन तणु ते जाणो आसार।
एहवा वचने बहु कहि व्रत निंद्या किधि।
जाणे पाप जलांजलि पट पुत्रे पिधि

६०. ब्रह्मधर्म रुचि

भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र की परम्परा में दो अभयचन्द्र भट्टारक हुए। एक अभयचन्द्र [स १५४८] अभयनन्दि के गरु थे तथा दूसरे अभयचन्द्र भट्टारक कुमुदचन्द्र के शिष्य थे। दूसरे अभयचन्द्र का पूर्व पृष्ठो में परिचय दिया जा चुका है किन्तु ब्रह्म धर्मरुचि प्रथम अभयचन्द्र के शिष्य थे। जिनका समय १६वीं शताब्दि का दूसरा चरण था। इनकी अब तक ९ कृतियाँ उपलब्ध हो चुकी हैं। जिनमें सुकुमालस्वामिनी रास[1] सबसे बडी रचना है। इसमे विभिन्न छन्दो मे सुकुमाल स्वामी का चरित्र वर्णित है। यह एक प्रबन्ध काव्य है। यद्यपि काव्य सर्गों मे विभक्त नहीं है लेकिन विभिन्न भास छन्दो मे विभक्त होने के कारण सर्गों में विभक्त नही होना खटकता नहीं है। रास की भाषा एव वर्णन शैली अच्छी है। भाषा की दृष्टि से रचना गुजराती प्रभावित राजस्थानी भाषा में निबद्ध है।

---

१ रास की एक प्रति महावीर ग्रन्थ अकादमी के संग्रह मे है।

ते देखि भयभीत हवी, नागश्री कहे तात ।
कवण पातिग एणे कीया, परिपरि पामइ छे घात । १ ।
तव ब्राह्मण कहे सुन्दरी सुणो तह मो एणी बात ।
जिम आनद बहु उपजे जग माहे छे विख्यात । २ ।

रास की रचना घोघानगर के चन्द्रप्रभ चैत्यालय में प्रारम्भ की गयी थी और उसी नगर के आदिनाथ चैत्यालय मे पूर्ण हुई थी। कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

श्रीमूलसघ महिमा निलो हो, सरस्वती गच्छ सणगार ।
वलात्कार गण निर्मलो हो, श्री पद्मनन्दि भवतार रे जी ॥ २३ ॥
तेह पाटि गुरु गुणनिलो हो, श्री देवेन्द्रकीर्ति दातार ।
श्री विद्यानन्दि विद्यानिलो हो, तस पट्टोद्धर सार रे जी ॥ २४ ॥
श्री मल्लिभूषण महिमानिलो हो, तेह कुल कमल विकास ।
भास्कर सम पट तेह तणो हो, श्री लक्ष्मीचन्द्रवास रे जी ॥ २५ ॥
तस गछपति जगि जाणियो हो, गौतम सम अवतार ।
श्री अभयचन्द्र वखाणीये हो, ज्ञान तणे भडार रे जीवडा ॥ २६ ॥
तास शिष्य भणि रुवडो हो, रास कियो मे सार ।
सुकुमाल नो भावइ जट्ठो हो, सुणता पुण्य अपार रे जी ॥ २७ ॥
ख्याति पूजानि नवि कीय हो, नवि कीयु कविताभिमान ।
कर्मक्षय कारणइ कीयु हो, पामवा वलि रुडू ज्ञान रे जी ॥ २८ ॥
स्वर पदाक्षर व्यजन हीनो हो, मइ कीयु होयि परमादि ।
साधु तम्नो सोधि लेना हो, समितवि करजो आदि रे जी ॥ २९ ॥
श्री घोघानगर सोहामणू हो, श्री सघव से दातार ।
चैत्यला दोइ भामणां हो, महोत्सव दिन दिन सार रे जी ॥ ३० ॥

कवि की अन्य कृतियो के नाम निम्न प्रकार है—

१ पीहरसासडा गीत
२ वणियडा गीत
३ मीणारे गीत
४ अरहत गीत
५ जिनवर वीनती
६ आदिजिन विनती
७ पद एव गीत

इस प्रकार कवि की सभी लघु रचनायें हैं तथा सामान्य शैली मे निवद्ध है। पीहर सासरा गीत रूपात्मक गीत है। जो बहुत सुन्दर है तथा मानव स्वभाव को प्रकट करने वाला है इसलिये पूरा गीत पाठको के रसास्वादन के लिये यहाँ दिया जा रहा है—

सन्मति शिव यति प्रणमीनि, भजी वली भगवती माय रे।
सासरु पीहर अले गायस्यु, जेह गाता पातिग जाय रे।
ससार सासरु माँहि दोहिलू, सोहिलू नहीय लगार रे।
शिवपुर पीहर सास्वतु, जिहा नही सुखनो पार रे॥ १॥
मोह सासरो मदि मलय तो, माया रे सासूडी कलछ रे।
कुमत नणदडी सखि नित दये, नमी तेहना मागी पद पीठरे॥ २॥
सयम पिता हमारे अति भलो, दया रे माता मझसार रे।
धर्म बाधव दश शोभता, सुमति वहेन भवतार रे॥ ३॥

मदन महाभट नाहलो, रति बधूस्यू क्रीडे अज्ञान रे।
क्रोध जेठ करे पेखणा, राग द्वेष देवर मोडि मान रे॥ ४॥
सयल कुटव तप व्रत तणो, सहयकारी सवे परिवार रे।
शील आभरण अगि उपता, पुण्य फले सुख भंडार रे॥ ५॥
असयम कुटब अलखा मणू, धामणु दीसे वहु रौद्र रे।
पाप पदारथ सासरू नही, एक घडी सुख निद्र रे॥ ६॥

सखी एहवा पीहर अलजई, तहा रे जावानू वहू कोड रे।
दैवना दाढा किमनी गमू, कहीइ होसे तेहनो मोड रे॥ ७॥
ससार-सारडे-मून्हे नवि गमे, भमि मन पीहर मझारि रे।
विविध वेष धरी दुख सहिया, भमि भमि अनत ससार रे॥ ८॥
देवगुरु अभयचन्द सेवता, ससार साहारा होसे अत रे।
सुगति पीहर प्राणि पाममई, कहे ब्रह्मरुचि सत रे॥ ९॥

ब्रह्मरुचि ने अभयचन्द्र के गुरु कुमुदचन्द्र एव दादागुरु ज्ञानभूपण का उल्लेख भी नहीं किया है इसलिये ऐसा लगता है कि इनका उदय भट्टारक कुमुदचन्द्र के पश्चात हुआ होगा।

६१. आचार्य चन्द्रकीर्ति

भ रत्नकीर्ति ने साहित्य-निर्माण का जो वातावरण बनाया था तथा अपने शिष्य-प्रशिष्यो का इस ओर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया था, इसी के फल-स्वरूप ब्रह्म-जयसागर कुमुदचन्द्र, चन्द्रकीर्ति, सयमसागर, गणेश और धर्म-सागर जैसे प्रसिद्ध सन्त, साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए। "आ चन्द्रकीर्ति" भ रत्नकीर्ति के प्रिय शिष्यो मे से थे। ये मेधावी एव योग्यतम शिष्य थे तथा अपने गुरु के प्रत्येक कार्यों में सहयोग देते थे।

"चन्द्रकीर्ति" के गुजरात एव राजस्थान प्रदेश प्रमुख क्षेत्र थे। कभी-कभी ये अपने गुरु के साथ और कभी स्वतन्त्र रूप से इन प्रदेशो मे विहार करते थे। वैसे वारडोली, भडौच, डूगरपुर, सागवाडा आदि नगर इनके साहित्य निर्माण के स्थान थे। अब तक इनकी निम्न कृतियां उपलब्ध हुई है—

१. सोलहकारण रास
२ जयकुमाराख्यान,
३ चारित्र—चुनड़ी,
४ चौरासी लाख जीवजोनि वीनती।

उक्त रचनाओ के अतिरिक्त इनके कुछ हिन्दी पद भी उपलब्ध हुए हैं।

१ सोलहकारण रास

यह कवि की लघु कृति है। इसमे षोडशकारण व्रत का महात्म्य बतलाया है। ४६ पद्यो वाले इस रास में राग-गोडी देशी, दूहा, राग-देशाख त्रोटक, चाल, राग-धन्यासी आदि विभिन्न छन्दो का प्रयोग हुआ है। कवि ने रचनाकाल का उल्लेख तो नही किया है, किन्तु रचना-स्थान "भडौच" का अवश्य निर्दिष्ट किया है। "भडौच" नगर मे जो शातिनाथ का मन्दिर था वही इस रचना का समाप्ति-स्थान था। रास के अन्त मे कवि ने अपना एव अपने पूर्व गुरुओ का स्मरण किया है। अन्तिम दो पद्य निम्न प्रकार है—

श्री भरुयच नगरे सोहामणू श्री शातिनाथ जिनराय रे।
प्रासादे रचना रचि, श्री 'चन्द्रकीरति' गुण गायरे ॥ ४४ ॥

ए व्रत फल गिरता जो जो, श्री जीवन्धर जिनराय जी।
भवियण तिहा जइ भावज्ये, पातिग दुरे पालाय रे ॥ ४५ ॥

2. जयकुमार आख्यान

यह कवि का सबसे बडा काव्य है जो ४ सर्गों में विभक्त है। जयकुमार प्रथम तीर्थंकर भ ऋषभदेव के पुत्र सम्राट भरत के सेनाध्यक्ष थे। इन्ही जय कुमार का इसमे पूरा चरित्र वर्णित है। आख्यान वीर-रस प्रधान है। इसकी रचना वारडोली नगर के चद्रप्रभ चैत्यालय मे सवत् १६५५ की चैत्र शुक्ला दशमी के दिन समाप्त हुई थी।

"जयकुमार" को सम्राट भरत सेनाध्यक्ष पद पर नियुक्त करके शाति पूर्वक जीवन विताने लगे। जयकुमार ने अपने युद्ध-कौशल से सारे साम्राज्य पर अखण्ड शासन स्थापित किया। वे सौन्दर्य के खजाने थे। एक वार वाराणसी के राजा "अकम्पन" ने अपनी पुत्री "सुलोचना" के विवाह के लिए स्वयम्वर का आयोजन किया। स्वयम्वर मे जयकुमार भी सम्मिलित हुए। इसी स्वयम्वर मे "सम्राट भरत" के एक राजकुमार "अर्ककीर्ति" भी गये थे, लेकिन जव सुलोचना ने जय-कुमार के गले मे माला पहिना दी, तो वे अत्यन्त क्रोधित हुए। अर्ककीर्ति एव जयकुमार में युद्ध हुआ और अन्त मे जयकुमार की विजय के पश्चात् जयकुमार का सुलोचना के साथ विवाह हो गया।

इस "आख्यान" के प्रथम अधिकार में जयकुमार-सुलोचना-विवाह का वर्णन है। दूसरे और तीसरे अधिकार में जयकुमार के पूर्व भवो का वर्णन और चतुर्थ एव अन्तिम अधिकार में जयकुमार के निर्वाण-प्राप्ति का वर्णन किया गया है।

"आख्यान" में वीर-रस, शृंगार-रस एव शांत रस का प्राधान्य है। इसकी भाषा राजस्थानी डिंगल है। यद्यपि रचना-स्थान वारडोली नगर है, लेकिन गुज-रातो शब्दो का बहुत ही कम प्रयोग हुआ है। इससे कवि का राजस्थानी प्रेम झलकता है।

"सुलोचना" स्वयम्वर में वरमाला हाथ में लेकर जव आती है, तो उस समय उसकी कितनी सुन्दरता थी, इसका कवि के शब्दो में ही अवलोकन कीजिए—

जाणीए सोल कला शशि, मुखचन्द्र सोभासी कहु ।
अधर विद्रुम राजताए, दन्त मुक्ताफल लहु ॥
कमल पत्र विशाल नेत्रा, नाशिका सुक चच ।
अष्टमी चन्द्रज भाल सोहे, वेणी नाग प्रपच ॥
सुन्दरी देखी तेह राजा चितवे मन माहि ।
ए सुन्दरी सूर सुदरी, किन्नरी किम केह वाय ॥

सुलोचना एक एक राजकुमार के पास आती और फिर आगे चल देती। उस समय वहां उपस्थित राजकुमारो के हृदय में क्या-क्या कल्पनाए उठ रही थी— इसको भी देखिए—

एक हसता एक खीजे, एक रग करे नवा।
एक जाणे मुझ वरसे, प्रेम धरता जु जवा॥
एक कहे जो नही वरें, तो अम्यो तपवन जायसु।
एक कहतो पुण्य पाये, एह वलभ थासू॥
एक कहे जो आवयातो, विमासण सहु परहरो।
पून्य फल ने वातणोए, ठाम सुभ हैयडे धरै॥

लेकिन जब सुलोचना ने अर्ककीर्ति के गले में वरमाला नहीं डाली, तो जयकुमार अर्ककीर्ति में युद्ध भडक उठा। इसी प्रसग में वर्णित युद्ध का दृश्य भी देखिए—

मला कटक विकट कवहू सुभट सू,
धरि धीर हमीर हठ विकट सू।
करी कोप कूटे वूटे सरवहू,
चक्र तो समर खडग मू के सहु॥
गयो गम गोला गणनागणे,
अ गो अ ग आवे वीर इम भणें।
मोहो माहि मू के मोटा महीपतो,
चोट खोट न आवे डयमरती॥
वथो थवा करी वेहदू डसू,
कोपे करता कूटे अखड सू।
धरी धरी धर ढोली नाखता,
कोपि कडकडी लाजन राखता॥
हस्ती हस्ती सघाते आथडे,
रथो रथ सूभट सहू इम भडे।
हय हपार व जव छजयो,
नीसाण नादें जग गज्जयो॥

कवि ने अन्त मे जो अपना वर्णन किया है, वह निम्न प्रकार है—

श्री मूलसघ सरस्वती गछे रे, मुनीवर श्री पदमनन्द रे।
देवेन्द्रकीरति विद्यानदी जयो रे, मल्लीभूषण पुन्य कद रे ।।
श्री लक्ष्मीचन्द पाटे थापयारे, अभय सुनन्द्र मुनीन्द्र रे।
तस कुल कमलें रवि समोर, अभयनन्दी नमे नरचन्द रे ।।
तेह तणे पार्टे सोहावयो रे, श्री रत्नकीरति सुगुण भडार रे।
तास शीष सुरी गुणे मडयो रे, चन्द्रकीरति कहे सार रे।
एक मना एंह भणें सामले रे, लखे भलु एह आख्यान रे ।।
मन रे वाछति फल ते लहे रे, नव भवें लहे वहु मान रे।
सवत सोल पचावनें रे, उजाली दशमी चैत्र मास रे ।।
बारडोली नयरे रचना रची रे, चन्द्रप्रभ सुभ आवास रे।
नित्य नित्य केवली जे जपे रे, जय-जयनाम प्रसीधरे ।।
गणधर आदिनाथ केर डोरे, एकत्तरमो वहु रिघ रे ।।
विस्तार आदि पुराण पाडवे भणोरे, एह सक्षेपे कही सार रे।
भणे सुणे भवि ते सुख लहे रे, चन्द्रकीरति कहे सार रे।

समय

कवि ने इसे सवत् १६५५ में समाप्त किया था। इसे यदि अन्तिम रचना भी मानी जावे तो उसका समय सवत १६६० तक का निश्चित होता है। कवि ने अपने गुरु के रूप में "रत्नकीर्ति" एव "कुमुदचन्द्र" दोनो का ही नामोल्लेख किया है, सवत १६६० तक तो रत्नकीर्ति के पश्चात कुमुदचन्द्र भी भट्टारक हो गए थे, इसलिये यह भी निश्चित सा है कि कवि ने रत्नकीर्ति से ही दीक्षा ली थी और उनकी मृत्यु के पश्चात वे सघ से प्राय. अलग ही रहने लगे थे। ऐसी अवस्था में कवि का समय सवत् १६०० से १६६० तक माना जा सकता है।

चारित्र चूनडी

कवि की तीसरी रचना चारित्र चूनडी है जिसके रूप में भट्टारक रत्नकीर्ति के चारित्र की प्रशसा की हैं। चूनडी में विभिन्न रूपको का प्रयोग हुआ है। चूनडी निम्न प्रकार हैं—

श्री जिनपति पद कज नमी रे, भजी भारती अवतार रे।
चारित्र पछेडी अले गायेस्यु रे, श्री गुरु सुख दातार रे।

चतुर चारित्र पछेडली रे, सोहे श्री गुरु अगि रे।
सूरी श्री रत्नकीरती सोहे रे, मोहे महिमडल रग रे।
श्री जिनागम सूत्र नीपनी रे, विण अवगुणे वणी एह रे।
सयम सरोवरे धोई जेरे, पुरातन पले पाप जे हरे॥
श्री गुरुवाणी हरडा करी रे, तेह तणो दीधो पास रे।
आगम फटकी रग दोढ करी रे, अध्यातम अनोपम तीसरे॥
ध्यान कडाई रग उकालीजे रे, तप तेल दीधे ए भूर रे।
समकित चोल रग गह गयो रे, पुण्य पल्लव सुख सुख पूर रे।
विमल कमल पंच व्रत तणा रे, पान पच सुमति ना फूला रे।
त्रण्य गुपति रेखा सोभती रे, वरती विविध परिनेह रे।
सील समोह फरती कुलडी रे, मूलगुण मणि गुण छीट रे।
उत्तर चोरासी लख्य वेलडी रे, जोये रुडी ग्यान नी प्रीत रे।
सुन्दर चारित्र पछेलडी रे, सोहे रत्नकीरति मुनींद रे।
चन्द्रकीरति सूरी वर कहे रे, चारित्र पछेडी सुख वृंद रे॥

इति चारित्र चुनडी गीत समाप्त

कवि ने भट्टारक कुमुदचन्द्र पर भी पद लिखे हैं जिसमें कुमुदचन्द्र के गुणो का वखान किया गया है। एक पद देखिए—

राग धन्यासी

वदो कुमुदचन्द्र सूरी भवियण

सरस वखान मनोहरवाणी, सेवे सदा पद गुणियण॥ १॥
पच महाव्रत पच सुमति, त्रण्य गुपति वर मडल।
पचाचार प्रवीण परम गुरु, मथित मदन मद खडन॥ २॥
शास्त्र विचार विराजित नायक, विकट वादी मद भजन।
चन्द्रकीर्ति कहे शोभित सदगुरु, सकल सभा मन रजन। ३

चन्द्रकीर्ति द्वारा निबद्ध चौरासी लाख जीवजोनी वितती भी मिलती है।

६२. संयमसागर

ये भट्टारक कुमुदचन्द्र के शिष्य थे। ये ब्रह्मचारी थे। सघ में रह कर अपने गुरु को साहित्य निर्माण मे योग देना तथा विहार के समय भट्टारक कुमुदचन्द्र

के गुणानुवाद करना इनका प्रमुख कार्य था। वे स्वय भी कवि थे। छोटे-छोटे गीत लिखा करते थे। अब तक इनके निम्न गीत मिल चुके हैं।

१ कुमुदचन्द्र गीत
२ पार्श्वनाथ गीत
३. शीतलनाथ गीत
४ नेमिगीत
५. गुर्वावली गीत
६ शातिनाथनी विनती
७ वलिभद्रनी विनती
८ लघु गीत

उक्त सभी गीत छोटे छोटे हैं। लेकिन इतिहास लेखन मे सभी गीत उपयोगी है। यहा एक गीत, जिसमें कुमुदचाद्र की विशेषताओ का वर्णन किया गया है दिया जा रहा है--

आवो साहेलडी रे सहू मिलि सगे।
वादो गुरु कुमुदचन्द्र ने मनि रगि॥
छन्द आगम अलकारनो जाण, वारु चितामणि प्रमुख प्रमाण।
तेरे प्रकार ए चारित्र सोहे, दीठडे भवियण जन मन मोहे।
साह सदाफल जेहनो तात, धन जनम्यो पदमा बाई मात।
सरस्वती गच्छ तणो सिणगार, वेगस्यु जीतियो दुर्धर मार।
महीयले मोढवशे सु विख्यात, हाथ जोडाविया वादी सघात।
जे नरनारी ए गोर गुण गावे, सयमसागर कहे ते सुखी पाय॥

६३ धर्मचन्द्र

ये भट्टारक रत्नकीर्ति के सघ में रहते थे। छोटे छोटे गीत लिखने में ये भी रुचि लेते थे। आपका एक गीत मिला है जिसमें भट्टारक परम्परा, प्रतिष्ठाकारको की प्रतिष्ठा आदि के सम्बन्ध में लिखा गया है। रचना सामान्य है।

६४ राघव

ये भी भट्टारक रत्नकीर्ति के सघ में रहते थे। विद्वान थे। कभी-कभी

छोटे छोटे गीत लिख दिया करते थे। इन्होंने अपने एक गीत मे खान मलिक द्वारा भट्टारक रत्नकीर्ति का सम्मान किया गया था, ऐसा उल्लेख किया गया है।

श्री अभयनन्द पाटि पटोधर, रत्नकीरति गोर वदो जी।
वदे सुख लक्ष्मी बहु पामो, तो जन्मना पाप निकन्दो जी।
बेठा सिंहासन सभा मनरजन, ... हा अधिकु ... सचे जी।
आगम छन्द प्रमाण ए व्याकरण मलूहरी वमतिहो वाजे जी।

लक्षण बतीस सकल कला अगि बहोत्तरि, खान-मलिक दिये मान जी।

धन्य ए घोघा नयर वखाणू, हूबड वश सुजाण जी।
श्री रत्नकीरति चरण नमीने, भवियण करे वखाण जी।
धन्य सहेजलदे मात वखाणु, देवदास सुत रतन जी।
कर जोडी ने राघव वीनवे, जीव दया शुभ मन जी।
गोरने जीव दया शुभ मन जी ॥

६५ मेघसागर

मेघसागर ब्रह्मचारी थे तथा भट्टारक कुमुदचन्द्र एव अभयचन्द्र के सघ मे रहते थे। इन्हे भी छोटे छोटे गीत लिखने मे आनन्द आता था। सवत १६८५ मे जब अभयचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था तब ये वहीं थे। उन्होने उसका एक गीत में वर्णन भी किया हैं। पूरा गीत यहा दिया जा रहा है—

गुरुगीत—राग मल्हार

सकल जिनेश्वर प्रणमीने, सारदा नवूं वली पाय।
कुमुदचन्द्र पाटि गाईए, अभयचन्द्र गुरु राय रे।
आवो सुन्दरी तम्हे सहु मिली, जिन मन्दिर मझार रे ॥आचली॥१॥
मूलसघे गुरु जाणिये, सरस्वती गछे जेह रे।
तेह तणा गुण वर्णवु, धरी अधिक सनेह रे। आवो॥२॥
सूरी कुमुदचन्द्र पाटि अभिनवो गौतम अवतार रे।
चारित्र पाले निर्मला, धरे पच आचार रे ॥आवो॥३॥
पच महाव्रत उजला, पच समिति सुखकार रे।
त्रण्य गुपति ने वश कर, चारित्र तेर प्रकार रे ॥आवो॥४॥

बारडोली नयर सोहामणु, चंद्रप्रभ जिनधाम रे।
पाटि महोछव तिहा हवो, सरसा सघना काम रे ।।आवो।।५।।
सवत सोल पच्यासीई, फागुण सुदि एकादशी सोमवार रे।
कुमुदचन्द्र पाटि थापिया, अभयचन्द्र गुरु सार रे ।।आवो।।६।।
तप तेजो दिनकर समो, मिथ्यामत कीधो दूरि रे।
भव्य जीवने प्रतिवोधवा, दीठे आणद पूर रे ।।आवो।।७।।
श्री अभयचन्द्र गुण गाइये, धरी हरप अपार रे।
मेघसागर ब्रह्म इम कहे, सकल सघ जयकार रे ।।आवो।।८।।

६६ धर्मसागर

ये भट्टारक अभयचन्द्र द्वितीय के सघ मे ब्रह्मचारी थे तथा भट्टारक के प्रिय शिष्यों में से थे। वे अपने गुरु के साथ रहते और विहार के अवसर पर उनका विभिन्न गीतो के द्वारा प्रशसा एव स्तवन किया करते। नेमिनाथ एव राजुल भी इनके प्रिय थे इसलिये उनके सम्बन्ध मे भी इन्होंने कितने ही गीत लिखे हैं। अब तक इनके निम्न गीत प्राप्त हो चुके हैं।

१ नेमि गीत
२. नेमीश्वर गीत
३ लाल पछेडी गीत
४. मरकलडा गीत
५ गुरु गीत
६ विभिन्न गीत

धर्मसागर ने नेमि राजुल के सम्बन्ध मे अपने पूर्व गुरुओ के मार्ग का अनुसरण किया और राजुल के सौन्दर्य एव उसकी विरह वेदना को व्यक्त करने मे उनसे भी बाजी मारने का प्रयास किया। उनके द्वारा निबद्ध एक नेमीश्वर गीत देखिये—

सखिय सहू मिलि वीनवे, वर नेमि कुमार।
तोरण थी पाछा वल्या, करीस्यो रे विचार ।। १ ।।
राजीमती अति सुन्दरी, गुणनो नही पार।
इद्राणी नही अनुसरे, जेह नू रूप लगार ।। २ ।।

वेणी विशाल सोहामणी, जीत्यो श्याम फणिद।
भाल कला अति रुपडी, अरधो जस्यो चद ॥ ३ ॥
आंखडली कज पाखडी, काली अणियाणी।
काम तणा शर हारिया, जेह नें सु नीहाली ॥ ४ ॥
आनन हसित कमल जस्यु, नाक सरल उत्तंग।
घणूअ करीस्यु बखाणीये, सूका चच सुचग ॥ 5 ॥
अरुण अधर सम उपता जेहवी पर वाली।
वचन मधुर जाणी करी, कोयल थई काली ॥ 6 ॥
कठे कंबु हरावीयो हैयडं हरे चित।
बाहु लता अति लहकती, कर मन मोंहत ॥ ७ ॥
अधर अनोपम पातलू, जेहवू पोमण पोन।
हरो लकी करि जाणिये, अर रभ समान ॥ ८ ॥
पान्हीस उची अति रातडी आगलडी तेहवी।
सर्व सुलक्षण सुन्दरी, नही मलसे एहवी ॥ ९ ॥
रहो लाल पाछा चलो, कह्यू बचन ते मानो।
हास विलास करो तम्हे, अति घूण मा ताणि ॥ १० ॥
एह वचन मान्यु नहीं, लीधो सयम भार।
तप करीस्या सुख पामिया, सज्जन सुखकार ॥ ११ ॥
कुमुदचन्द्र पद चादलो, अभयचन्द्र उदार।
धर्मसागर कहे नेम जी, सहूने जय जय कार ॥ १२ ॥

इस प्रकार कवि ने राजुल की विरह गत भावनाओ को अपने गीतो मे सजो कर हिन्दी जगत में एक नयी सामग्री प्रस्तुत की है।

धर्म सागर ने भट्टारक अभयचन्द्र का भी खूब गुणानुवाद किया है। एक गीत में तो भट्टारक जी लाल पछेवडी धारण करने पर कितने सुन्दर लगते थे इसका भी वर्णन किया गया है और लिखा है कि "लाल पिछेवडी अभयचन्द्र सोहे, निरखता भविकयनां मन मोहे"। भट्टारक अभयचन्द्र की प्रशसा में लिखा है कि इनका यश देहली दरबार तक व्याप्त था तथा वहा इनकी प्रशसा होती थी।

दिल्ली रे सिंहासन केरा राजियो रे, गाजियो यश त्रिभुवन माहि रे।
वादि तिमिरहर दिनकरु रे, सुरतरु सरस्वती गच्छे रे॥

अभयचन्द्र की प्रशसा मे लिखा एक और गीत देखिये जिसमे कवि ने अभयचद्र की विद्वता एव ज्ञान की खुल कर प्रशसा की है—

आवो रे भामिनी गजवर गामिनी, गदवा अभयचन्द्र मिली मृगनयनी।
मुगताफलनी थाल भरीजे, गछनायक अभयचन्द्र वधावीजे॥ २॥
कुंकुम चादन भरीय कचोली, प्रेमे पद पूजो मोरना सहू भली॥ ३॥
हू बड वशे श्रीपाल साह तात, जनम्यो रुडी रतन कोडमदे मात॥ ४॥
लघुयणे लीधो महाव्रत भार, मन वश करी जीत्यो दुर्द्धर मार॥ ५॥
तर्क नाटक आगम अलकार, अनेक शास्त्र भण्या मनोहार॥ ६॥
भट्टारक पद एहमे छाजे, जेहनो यश जगमो वास गाजे॥ ७॥
श्री मूलसघे उदयो महिमा निधान, याचक जन करे जेह गुणगान॥ ८॥
कुमुदचन्द्र पाटि जयकारी, धर्मसागर कहे गाउ नर नारी॥ ९॥

६७ गोपालदास

गोपालदास की दो छोटी रचनायें यादुरासो तथा प्रमादीगीत जयपुर के ठोलियो के मदिर के शास्त्र भण्डार के ९७वें गुटके में सग्रहीत हैं। गुटके के लेखनकाल के आधार पर कवि १७वी शताब्दी या इससे भी पूर्व के विद्वान रहते थे। यदुरासो में भगवान नेमिनाथ के वन चले जाने के पश्चात् राजुल की विरहावस्था का वर्णन है जो उन्हे वापिस लाने के रुप मे हैं। इसमें २४ पद्य हैं। प्रमातीगीत एक उपदेशात्मकगीत है जिसमें आलस्य त्याग कर आत्महित करने के लिये कहा गया है। इनके अतिरिक्त इनके कुछ गीत भी मिलते हैं।

६८ पांडे हेमराज

प्राचीन हिन्दी गद्य पद्य लेखको में हेमराज का नाम उल्लेखनीय है। इनका समय सत्रहवी शताब्दी था तथा ये पाडे रुपचन्द के शिष्य थे। इन्होंने प्राकृत एव सस्कृत भाषा के ग्रथो का हिन्दी गद्य में अनुवाद करके हिन्दी के प्रचार मे महत्वपूर्ण योग दिया था। इनकी अब तक १२ रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं जिनमे नयचक्र-

भापा, प्रवचनसार भापा, कर्मकाण्ड भाषा, पञ्चास्तिकाय भाषा, परमात्मप्रकाश भापा आदि प्रमुख हैं। प्रवचन सार को इन्होने १७०६ मे तथा नयचक्र भापा को १७२४ मे समाप्त किया था। अभी तीन रचनायें और मिली हैं जिनके नाम दोहा-शतक, जखडी तथा गीत हैं। रचनाओ के आधार पर कहा जा सकता है कि कवि का हिन्दी गद्य एव पद्य दोनो में ही एक सा ही अधिकार था। भाव एव भापा की दृष्टि से इनकी सभी रचनायें अच्छी है। दोहा शतक, जखडी एव हिन्दी पद अभी तक अप्रकाशित हैं।

———

नेमिनाथ फाग

श्री जिन युग धन जाणिय, वखाणीये वाणि विख्यात।
सारदा वरदा स्मामिनी, भामिनी भारती मात ॥ १ ॥
विमल विद्या गुरु पूजीइ, बूझिये ज्ञान अनन्त।
मुगति तणा फल पाईइ, गाइए राजुल कंत ॥ २ ॥
यादव कुल तणो मण्डप, खण्डन पापनो अंश।
अवतरयो अवनि अनोपम उपमना अविकवतंश ॥ ३ ॥
सुन्दर शिवादेवी नन्दन, वन्दन त्रिभुवन तेह।
समुद्र विजय धन तात, विख्यात वसुधा एह ॥ ४ ॥
कुंअर करुणावन्त, महन्त कंहत अपार।
राज काज मनि आणियं, जाणिय करें मोरारि ॥ ५ ॥
जोउ पारथ एह तणू, अह्यतणु माने मन्न।
पन्नग सेजि पोढिय, कम्बू धनुष धरे धन्न ॥ ६ ॥
मल्ल- युद्ध- जो ए करे, बहु परिप्राक्रमी होय।
पारखे प्राक्रमे पूरो, सूरो ए समो नही कोय ॥ ७ ॥
पाणिग्रहण करी पाडु, देखाडु विपरीत।
परणो प्रभू कहे प्रेमे, इम मनोहेरा रीत ॥ ८ ॥
सिषवी सुन्दरी सामले आमले पाडवा वात।
खड़ी खली झीलवा चालिय, झालिय नेमने हाथि ॥ ९ ॥
जुगल कमले करी कामिनी, स्वामिनी छाडे देह।
पाणिग्रहण पर प्रेम रे, नेम धरो मनि नेह ॥ १० ॥
वल छल कल करी, भोलव्यो भोले नेमिकुमार।
उग्रसेन केरी कुवरी, राजुल रूप अपार ॥ ११ ॥



दूहा

राजुल का सौन्दर्य

चन्द्र वदनी मृग लोचनी मोचनी खजन मीन ।
वासग जीत्यो वेणिइ, श्रेणिय मधुकर दीन ॥ १२ ॥
युगल गल दीये सशि, उपमा नाशा कीर ।
अधर विद्रुम सम उपता, दन्तनू निर्मल नीर ॥ १३ ॥

ढाल

चिवुक कमल पर षटपद, आनन्द करे सुधापान ।
ग्रीवा सुन्दर सोभती, कजु कपोतने वान ॥ १४ ॥
कोमल कमल कलश वे उपरि मोती सोहे ।
जाणें कमल केरी वेलडी, वेलडी वाहोडी सोहि ॥ १५ ॥
कनक कजोपम सोभतु, नाभि गम्भीर विसेस ।
जाणे विधाताइ आगुली वालिय रूपनी रेख ॥ १६ ॥
कटि हरिगति गज जीतिया, पूरिया वनमा वास ।
जघाइ जीतिय कदलिय, अगुलिय पद्म पलास ॥ १७ ॥
आभ्रण अग अनोपम, भूषण शरीर सोहत ।
कवि कहेस्यु वखाणीये राजुल रूप अनन्त ॥ १८ ॥
उग्रसेन को कुअरि सुन्दरी सुलक्षण अग ।
माधव वन्धव नेमनो, वीवाह मेलो मनरग ॥ १९ ॥

दूहा

नेमिनाथ का विवाह

वेहू घरि सुभ पर प्रेमस्यू, अही अण मिलिया अनेक ।
खरचे वित्त नित चितस्यु वीहवा वारु विवेक ॥ २० ॥
करी सगाई सुर मिलि यदुपति हलधर कहान ।
इन्द्र नरिन्द्र गयन्द चढी, ते पणि आव्या जान ॥ २१ ॥

ढाल

जान मान माहि मोटा, महीपति मलिया अनन्त ।
एकेक पाहि अधिका घणा, ईश्वर उभया कत ॥ २२ ॥
देई निसाण सजाण चतुर चढियो रथ सोहि ।
किरिट कुण्डल केरी कानि, शक्या रवि शशि सोहे ॥ २३ ॥
आवया मण्डप दूकडा कूकडा मृग तणा वृन्द ।
देखी वल्यो तत खेचरे देव दया तणो कद ॥ २४ ॥

साभलो सारथि वात विख्यात असम्भव आज ।
तह्यं काई कारण जाण्यो रे, ए आण्या कोण काजि ॥ २५ ॥

दूहा

उग्रसेन राइ आणीआ पखी पशू अनेक ।
गोरव वेला मारसे, करस्ये तह्म विवेक ॥ २६ ॥
वात घातनी साँभली, अन्तर पडियो त्रास ।
धिग ससार वीह्वा किस्यो ए पसु नेस्यो पास ॥ २७ ॥

ढाल

नेमि वैराग्य

पास छोडावो एहना देहना काकरो घात ।
जाणी वात मे एह तणी विवाह तणी नही वात ॥ २८ ॥
पाछो चालो रथ सारथि, सासो म करस्यो सोस ।
उपनी तृषा अति जल तणी, न समे दूधे तथाउस ॥ २९ ॥
विषय भोगवे अग्यानी, ज्ञानी न भोगवे तेह ।
भूता तन्तु वाधे मक्षिका नवि बाधे करि देह ॥ ३० ॥
इन्द्रिय सुख शुभ तव लगे, मुगति न जाणो खेल ।
दीये स्वाद नही जव लगे, तव लगे उत्तम तेल ॥ ३१ ॥
विवाह वात निवारु, मारु मदन महंत ।
सुध मने तप साधू, आराधु सिद्ध महत ॥ ३२ ॥

दूहा

आलिये आवी इम कहु सखीस्यो करे शृंगार ।
तोरण थी पाछो वल्यो, यदुपति नेमिकुमार ॥ ३३ ॥
साभली श्रवणे सुन्दरी, मनि धरी एक वात ।
चकित थई तव मति गई, कारण कहो मुझ वात ॥ ३४ ॥

ढाल

राजुल का विलाप

मात तात सहु देखता, राजुल थई दिग मूढ ।
वात वारती सीघणी कर्मतणी गति गूढ ॥ ३५ ॥
आभरण भूषण छोडती मोडती ककण हाथ ।
मन्दर ह्मेलू वहेलिय, ह्वेलिय सहियर साथ ॥ ३६ ॥
राखो रे रथ तम्हे समरथ, हसारप करे बहु लोक ।
लक्षण कोण स सन्तना, माहतना वचन सुफोक ॥ ३७ ॥

का जाये वन ह्वाहला, कला कठिन का थाय ।
साभली वीनती साहरी, ताहरी कोमल काय ॥ ३८ ॥
छए रति आरति अति घणी, वरसा लेरे विख्यात ।
नाथ वात नो हे सोहिली दोहिली शियालानी रति ॥ ३९ ॥
सीयाले शीत पडे, पडे अति निर्मल हीम ।
हरी करी चरि मद मूके, चूके तापस नीम ॥ ४० ॥
माह उमाह अति आवयो, महियल माधव राय ।
पच वाण अह्वा हाथि ते, सावे मदन सहाय ॥ ४१ ॥
उप्ण कालि खल सरिखो, निरखो हस कठोर ।
कोमल तनि लू लागस्ये, वागस्ये वायु निठोर ॥ ४२ ॥

दूहा

अपराध पापे का परिहरो, दया करो देव दयाल ।
जलचर जल विना टलवलें, विलवले राजुल वाल ॥ ४३ ॥
मैं जाण्युह तु मुझने, मिलस्ये अगो अगि ।
उलट उपनो अति घणो, रग मा काकरो भग ॥ ४४ ॥

ढाल

राजुल का नेमि से निवेदन.

भग काकरि प्रिय भोगनो, भोगवो लोग विख्यात ।
माहरो करग्रह करस्ये, करस्ये को जीवनो घात ॥ ४५ ॥
प्रारथी ने पाप लागू, मागो मया करो मुझ ।
एक रयणी रहो पास रे, दास थाउ छु तुझ ॥ ४६ ॥
हरिहर ब्रह्मा इन्द्र रे, चन्द्र नरेन्द्र न नारि
परण्या दानव देवता, सेवता सहू ससारि ॥ ४७ ॥
सुर नर हरि हर परण्या, पशूनो न करस्यो तेणेमार ।
राजुल सामलि वीनती, बोल्यो नेमिकुमार ॥ ४८ ॥
अकेका भव ने सगपण, भल पण हिसा न होय ।
सुगति सुधारसढोलिय, पीये हलाहल कोय । ४९ ॥
किहा थी आव्यु एवडू डाहापण देव दयाल ।
परण्या विण का परहरो बोले रायुल वाल ॥ ५० ॥
किम रहु दुख एकली, किम मानें मुझ मन्न ।
रजनीपति दहे रजनीय, वासरपति दहे दन्न ॥ ५१ ॥

दूहा

स्यामाटि शशि काढीयो, त्रास्यो अतिशय सेस ।
सूर भली मेरु वरासीयो, वासुदेव विसेस ॥ ५२ ॥
के निधि माही थीं काढीयो, विरहिणी केरो काल ।
शीतल शशि ते सहू कहे, विरहा दवानल झाल ॥ ५३ ॥

ढाल

झाल मेहेले परशी करु, धरु क मालि वेशि ।
भव माहि भव करु, ननका मन करे परवेस ॥ ५४ ॥
एम विलवन्ती जूवती, वीनती करे पीयू पासि ।
चतुर चिन्ता करो माहरीय, ताहरी रायुल दासि ॥ ५५ ॥
साभलि सुन्दरि सीख, सीखामरण अहम तरिण ।
सू जाणे ए सार मसार असार अनेक ॥ ५६ ॥
तन धन गृह मुख भोगव्या, ए भव माहि अपार ।
नरके जाये जीव एकलो, एकलो स्वर्ग दुआर ॥ ५७ ॥
देवता दानव मानव तेह तणा घणा करस्या भोग ।
तोहे जीव तृपति न पामीयो, मानव भवनो सो जोग ॥ ५८ ॥
उपनी तृपा अति नीरनी, क्षीरधिनें कीयो पान ।
तृपति न पाम्यो आतमा, तृण जल कोण समान ॥ ५९ ॥
तात मात सहू देखता, जीव जाये निरधार ।
धर्म विना कोई जीवनें, नवि तारे ससार ॥ ६० ॥
रायुल मन मनाविय, आवी चढ्यो गिरिनारि ।
वार भेद तप आचरे, आचरे पचाचार ॥ ६१ ॥
सुकुमालो परिसा सहे, सहसा वन मभारि ।
पनर प्रमाद दूरें करे शील सहस अठार ॥ ६२ ॥
ध्यान वले कर्म क्षय करी, अनुमरो केवल ज्ञान ।
लोकालोक प्रकाशक भासक तत्व निधान ॥ ६३ ॥
रायुले तो परनो करी, मनधर रही वेराग ।
भूषरण अगना सू किय, शरीर सोहाग ॥ ६४ ॥
भव्य जीव प्रतिवोधिय, कीधो शिवपुर वास ।
तव वले स्त्रीलिंग छेदिय, रायुल स्वर्ग निवास ॥ ६५ ॥

उदधि सुता सुत गोर नमी, प्रणमी अभेचन्द पाय !
मानियो मोटे नरिन्द, अभयनन्दि गछपति राय ॥ ६६ ॥
तेह पद पकज मन धरी; रत्नकीरति गुण गाय।
गाये सूणे ए माहत, वसन्त रिते सुखि थाय ॥ ६७ ॥

दूहा

नेमि विलास उल्हासस्यु, जे गास्ये नरनारि।
रत्नकीरति सूरीवर कहे, लहे सौख्य अपार ॥ ६८ ॥
हासोट माहि रचना रची, फाग राग केदार।
श्री जिन जुग घन जाणीये, सारदा वर दातार ॥ ६९ ॥

इति श्री रत्नकीर्ति विरचित नेमिनाथ फाग समाप्त ।[1]

(२) बारहमासा

ज्येष्ठ मास—

राग आसावरी

आ ज्येष्ट मासे जग जलहर नोउमाहरे।
काई वाय रे वाय विरही किम रहे रे ॥
आए रते आरत उपजे अग रे।
अनंग रे सन्तापे दुख केहे नें कहे रे ॥ १ ॥

नोडक—

केहनें कहे किम रहे कामिनी आरति अगाल।
चारु चन्दन चीर चिते, माल जाणे व्याल ॥
कपूर केसर केलि कु कम केवडा उपाय।
कमल दल छाटणा वन रिपु जाणे वाय ॥
भावे नही भोजन भूपण कर्ण केरा भाय।
परीनगमे पान नीको रलि करें कर भाय ॥
गिरिनारि केरो गिरितपे, सखि जेष्ठ मास विसेप।
दु सह दीन दोहिला लागे कोमला सलेपि ॥ २ ॥

१ गुटका, यशकीर्ति सरस्वती भवन ऋषभदेव, पत्र सख्या १२७ मे १३२ तक

आषाढ मास—

आभर आषाढ आवयो ए पेर रे ।
काई घरे रे नाह नही हू किम रहु रे ।।
आ जल थल मही अल मेहनू मडाण रे ।
सजाण रे न सम्भारे दुख केहने कहु रे ।।
आगड अड्डे गगने गोहे रो अपार रे ।
काई धार रे न खचे उन्नत माहालो रे ।।
आ जिम जिम तिम रीति मरासु माहाले रे ।
काई साले तिम तिम नेमनो नेहलोरे ।। ३ ।।

त्रोटक—

तिम तिम नाहनो नेह साले आषाढि अगाल ।
दादुर बोले प्राण तोले वरसाले विशाल ।।
दिवस अधारी रातडी वलि वाट घाटे नोर ।
वापीयडो पीउ पीउ बोले किम धरु मन धीर ।।
तरु तणी साखा करे भाषा सावजा सोहत ।
रितुकाल मोर कला करी मयूरी मन मोहत ।।
आज सखी अगाल आव्यो उन्हई ने गेह ।
झब झबक झबके वीजली किम सहे कोमल देह ।
आपो पणा पीउ ने पासे, करे कामिनी लाड ।
किम रहुँ हु एकली रे आवयो आषाढ ।। ४ ।।

सावन मास—

आषाढ अनुक्रमे श्रावण मास रे ।
काई पास रे आस करु हु तम तणी रे ।।
आ अनुचरी जाणी आवयो एक वार रे ।
आधार रे नेमि जिन धम त्रिभुवन धणी रे ।। ५ ।।

त्रोटक —

त्रिभुवन धणी तम तणी जाणी आवयो एक वार ।
पछे नो हे अवसर अह्म तणो, जोवन नो आगार ।।
अवसर चूकी आपणो पछे कस्यो उगे चन्द ।
तिम तुझ विना निज नाथ मुझने सोहोये न आनन्द ।।
मालती मकरद चूको, कस्यु करे करी रे ।
मानसर मराल चूको, किम धरे मन धीर ।।
असवर गये सज्जन मिले पछे किम टले दुख देह ।

आ तुझ विना दीन मुख दोहिला जाये रे ।
काई जाये रे जूवति योवन दोहिलू रे ॥
आ पीहर तो दीन पाच नो प्रेम रे ।
काई नेम रे सासरडे सहू सोहिलू रे ॥ १३ ॥

त्रोटक—

साहेलू स्वामि राज ताहरु माहर तो नहीं कर्म ।
चीर भव मे आल मेहेल्या बोला मोसा मर्म ॥
कोडहु तु एक मुझने एटली ता आस ।
करस्यु' लीला नाथ सार्थे कांकरीनी रास ॥
आस पूरो माहरी एटली ता खति ।
अति घणू' न ताणिये जी जूयो विमासी चिन्त ॥
पाणिग्रहण नही कही पछे ना कहेस्यो धर्म ।
काला तेटला कामणी रे ए में जाण्यो मर्म ॥
किम भव जास्ये एह माहरो क्षण वरसा सो थाय ।
मागशिर गयो मुझ दोहिलो रे जूयो, यादव राय ॥ १४ ॥

पौष मास—

आ पोषे पोषन सोरंग सीयाले रे ।
ए शीत कालि कापीउ परिहरो ॥
आ शीत वाये उत्तर नो वाय रे ।
काये रे कपे प्रभु मुझ परिकरो रे ॥
आताधपडे ही मह लिही माले रे ।
काई डालें रे तखी जुगल वे सीरहे रे ॥
आ किल किले केलि करे सुन्दर शखारे ।
काई भाषा रे भावता वचन ते ता कहेरे ॥ १५ ॥

त्रोटक—

भाषा कहे शाखा रहे वलि सहि अगे शीत ।
प्रीत प्रोढी पखि पेखी आवयो जी मित मित ॥
करयो चिंत माहरी ताहरी दास दयाल ।
विले वले वचन ता एम कहे किम रहे राजुल बाल ॥
आपो पणे नरनारि मदिर करे सुन्दर राज ।
हूं नेमि विन एकली अनुदिन किम सरे मुझ काज ॥

मुझ नयन थी निज नाह गयो रे रह्यो अग शोष।
कृपा करो मुझ मन घरो किम रहु पीउडा पोष ॥ १६ ॥

माघ मास —

आ पोष महा मुझे दोहिले दिन राति रे।
काई मात रे जीवन यदुपति किस सहे रे ॥
आ जिम जिम पडे वन अति घन ठाई रे।
आधार रे उभो गिरि मा किम सहेरे ॥
आ एरते महीपति चाप चढावी रे।
काई आवी रे हेमन्त रित उभो रह्यो रे ॥
आ तो जीवु जो जइने जादव चालो रे।
हिमालो रे सरस सीयालो वही गयो रे ॥ १७ ॥

त्रोटक—

नेह गयो निज नाय केरो आ भवे आधार।
सुणि धणी वीनती धणी तह्म तणी राजुल नारि ॥
आपणी जाणी प्रेम आणी आवयो एक वार।
पाछा वले यो तेह पगे रे जो ना वे विचार ॥
न करु रे नाथ माहरा प्राणे तमसु प्रीति।
साहीन राखु स्वामी तह्म ने नेह भर हो निश्चित ॥
तेह भणी त्रिभुवन धणी वीनती सुणो मुझ सोय।
माह गासि पीउ पासि पुण्य विना नवि होय ॥ १८ ॥

फागुण मास—

आ पीउ विना आवयो फू फूइने फाग रे।
काई रागरे वसत विरही आल वे रे ॥
आ कुकम केसर छाटिया अग रे।
काई रग रे पदमिनी प्रिय चित वाल रे ॥
आ केसू फूलिया झूलिया जाय रे।
काई माय रे माधव मधुकर रणझणे रे ॥
आ मोगरो मन्दार मालती ना छोड रे।
काई कोउ रे कानन दीसे गुण घणे रे ॥ १९ ॥

आपोपणे अवसर चूको वरससेस्यु मेह,
करुणा कर कृपा करो जी दयावंत दयाल।
आगला मूंको सामला श्रावण करो संभाल ॥ ६ ॥

भाद्रपद मास—

भाद्रवडे भरि जलथल महीयल मेघ रे।
मैं घर रे नेमि जिम तुम विना किम रहु रे ॥
आ हरी अ भूमि परि इंद्र गोप आनन्द रे।
आनन्द रे सोभा तेहनो सी कहु रे ॥
ज्यम ज्यम जलहार वरसे बहुरंग रे।
अंग रे अनंग दहे सुणि सहचरी रे ॥
आ दीनथइने वचन बहु भापे इम।
अपराध पाखे का पीउ परहरी रे ॥ ७ ॥

त्रोटक—

परहरी का अपराध पाखें वचक भापे इम।
दिवस दोहिले नीगमु रे रयणी जावे किम ॥
आक्रंद करती दुख धरती रडली चकवइ राति।
उदय थाये एकठा तोराननी सी वात ॥
सुणि सखि मझ काई न सुझे धूजे काम शरीर।
निज नाथ केरो नेह साले नयन टलया नीर ॥
रमे कुरंग कुरंगीणी तरंगीणी ने तीर।
हाव भाव विलास निरखी नयन टलया नीर ॥
अवनीय उपरि अव पूरा पूरया सुरचाप।
भाद्रवे भरतार पाखि सेजतलाई ताप ॥ ८ ॥

आश्वनि मास—

आ आसो आसा नेमि जिणंद रे।
काई चंद रे उदयो अवनी नीर भलो रे ॥
आ उज्जल तृण जल अंबुज आकाश रे।
मास रे सरद सजनी सोहं जलो रे ॥
सवया सुत विनसो करु शृंगार रे।
सुगति नो हार हृदय मुझ दहे रे ॥

आ रे नाथ साथ ले को कहे वयणे रे।
नयणें रे काजल सखि मुझ नवि रहे रे ॥ ९ ॥

त्रोटक—

नवि रहे काजल नयण माहरे प्राणता हरे प्रेम।
उडुपति केरा किरणवाले शरद कालि एम॥
उह्या भरी किम रहु हू घरी वली करी तुमस्यु प्रीति।।
वाही ने वन माहि जायें लोक मासी रीत॥
सुणि स्वामी सामल तुम बिना नवि रहे मांहरु मन्न।
कठिन थई ने का रह्यो रे वचन ताहरु धन्न॥
मदिरमा में नवि लहू जे कर्यो पशुआ सोर।
ते देखि नीठोर थयोरे आंसो नाह निठोर ॥ १० ॥

कार्तिक मास—

आह किम रहे कामिनी कातीय मास रे।
कांई दास रे जाणी देव दया करी रे॥
आ तुझ विना नवि गमे तातने मात रे।
आज रे काई काज रे ए कुन सरे सुणि महि रे ॥ ११ ॥

त्रोटक

सुणि सही सु काज सारे न सभारे नाथ।
मुझ कनक कुडल कियूर ककरण नही भावे हाथ॥
मुझ राखडीनी आखडी मद कढि कडला दूरि।
तिलक अग नवि करु न घरु माग सिंदूर॥
ओटी मोटी मोरलि मोती दहे मुझ अग।
घूघरी खमकार नेउर चूनडी मा रग॥
आचरण भूषण अग दूषण एक क्षण नही आस।
किम रहे कामिनी एकलीरे आह काती मास ॥ १२ ॥

मगसिर मास—

आ मागशिरे मन वल विह्वल थाये रे।
माय रे राय नेमी जिन कारणें रे॥
आ जिम मृग मृगी चकित चूकी जूयो रे॥
लोयणे लोपे रुये वारणें रे॥

त्रोटक—

गुण घणे बोलमरी वेलि जासू अनारिंग।
पाडल परिमल कमल निर्मल कणेर केतकी संग॥
सहकार सुन्दर मोरीया वपोरीया ने रंग।
एलची रहया अनेक वन श्रीफल, संग॥
ते वन मा वलीय मवाये गाये गीत सनेह।
फागण मारे पीउ विना होली दहे मुझ देह॥ २०॥

चैत्र मास—

आ मुझ देहे दुख दहे चैत्र नो मित्र रे।
काई कंत रे माहत माहरे परहरी रे॥
आ कोकिला कूजे सोरवर पान्रिरे।
काई बोले रे बोल सखी मुझ सूडला रे॥
आ वली वन वसता सारसडा विख्यात रे
विख्यात रे मात न लागे रूअडला रे॥ २१॥

त्रोटक—

रूडा न लागे वन्न वेरी व्हाला ने वियोग।
तिलक अजन परहस्या दूरी कर्या सहु भोग॥
चालया चिहु दिमे पथि प्रेमे ताप तडका कीव।
किम रहु हू एकली तजीनीदश ने दीघ॥
उष्ण - कालि ए उन्हाले-काम सहे मुझ तन्न।
कठिन थई नेका जाये किम दहे माहरु मन्न॥
सोह सहसने आठ आगे सारग वरने साथि।
एक का अलखा मणि ए मन कीजे निज नाथ॥
मास पोस हू नीगमू वलिनीमगू पट् मास।
जनमारो किम निगमू- रे चैत्र मि रहो पामि॥ २२॥

वैशाख मास—

आ वैशाखे शाखा मोरि रसाल रे।
विशाल रे काल उन्हाले जल घणी रे॥
आ मेडिढ मदिर सुन्दर सोहावे रे।
काई आचेरे गामथा पथी घर भणी रे॥
आ मदिर आव्या स्वामी सोहाव्या रे।
सधाव्या रे पशु तणी करुणा करी रे॥

आ उनमद मनसिज मान नीवारि रे।
सभारी रे मुगति मानिनी करि धरी रे ॥ २३ ॥

त्रोटक—

करि धरि वैराग्य वाहलो चालयो गिरिनारि।
वार मास परीसा सहे किम रहे रायुल नारि ॥
निज मन्न ने ता तप सम्बोधी प्रतीबोधी रायुल राज।
मुगति पुरी गयो नाथ नेमि जिन करी आतम काज ॥
श्रीअभेचन्द उदार अनुक्रमे अभेनन्दआनन्द।
तस चरण णामी कहे यतिवर रत्नकीर्ति मुणिंद ॥
प्रेम आणी एह वाणी गासे द्वादश मास।
तेह तणी श्री नेमि जिनवर बहू पूरे मन आस ॥
सायर तट घोघा गुणाले चैत्यालयचन्द।
तिहा रही रचना रची रे बार मास आनन्द ॥ २४ ॥

इति श्री भ रत्नकीर्ति विरचिता बारहमासा समाप्त।

पद एवं गीत

राग मल्हार . (१)

सखी री सावनि घटाई सतावे ॥

रिमिझिमि बूंद वदरिया वरसत, नेमि नेरे नहि आवे ॥ १ ॥
कूजत कीर कोकिला वोलत, पपीया वचन न भावे ।
दादुर मोर घोर घन गरजत इन्द्रधनुष डरावे ॥ २ ॥
लेख लिखू री गुपति वचन को, जदुपति कु जु सुनावे ।
रतनकीरति प्रभु अब निठोर भयो, अपनो वचन विसरावे ॥ ३ ॥

राग न नारण (२)

नेम तुम कैसे चले गिरिनारि ।

कैसे विराग धरयो मन मोहन, प्रीति विसारि हमारी ॥ १ ॥
सारग देखी सिधारे मारगकु, सारग नयनि तिहारी ॥
उनपे तत मत मोहन हे वेसो नेम हमारी ॥ २ ॥
करो रे सभार सावरे सुन्दर, चरण कमल पर वारी ।
रतनकीरति प्रभु तुम विन राजुल, विरहानलहु जारी ॥ ३ ॥

राग कनडो · (३)

कारण कोउ पीया को न जाने ॥ टेक ॥

मन मोहन मडप ते वोहरे पसु पोकार वहाने ॥ १ ॥
मोपैं चूक पडी नही पल रति भ्रात तात के ताने ।
अपने हर की आली वरजी सजन रहे सव छाने ॥ २ ॥
आये वोहोत दीवाजे राजे, सारग मय धूनी ताने ।
रतनकीरति प्रभु छोरी राजुल, मुगति वधू विरमाने ॥ ३ ॥

राग कंनडो (४)

सुदसर्ण नाम के मैं वारि ॥

तुम विन कैसे रहु दिन रयणी, मदन सतावे भारी ॥ १ ॥
जावो मनाओ आनो गृह मेरे यो कहे अभिया रानी ॥ २ ॥
रतनकीरति प्रभु भये जु विरागी, सिध रहे जीया धाई ॥ ३ ॥

राग कल्याण चर्चरी (५)

राजुल गेहे नेमी आय ।
हरि वदनी के मन भाय, हरि को तिलक हरि सोहाय ॥ १ ॥
कवरी को रग हरी, ताके सगे सोहे हरी,
ता टक हरि दोउ श्रवनि ॥ २ ॥
हरि सम दो नयन सोहे, हरिलता रग अधर सोहे,
हरिसुतासुत राजित द्विज चिबुक भवनि ॥ ३ ॥
हरि सम दो मृनाल राजित इसी राजु बार,
देही को रग हरि विशार हरी गवनी ॥ ४ ॥
सकर हरि अग करी, हरि निरखती प्रेम भरी,
तत नन नन नीर तत प्रभु अवनी ॥ ५ ॥
हरि के कुहरि कु पेखि, हरिलकी कु वेषी,
रतनकीरति प्रभु वेगे हरि जवनी ॥ ६ ॥

राग केदारो (६)

राम । सतावे रे मोहि रावन ॥
दस मुख दरस देखें डरती हूँ, वेगो करो तुम आवन ॥ १ ॥
निमेष पलक छिनु होत वरिषमो कोई सुनादो जावन ।
सारगधर सो इतनो कहीयो, अब तो गयो है आवन ॥ २ ॥
करुनासिधू निशाचर लागत, मेरे तन कु डरावन ।
रतनकीरति प्रभु वेंगे मिलो किन, मेरे जीया के भावन ॥ ३ ॥

राग केदारो (७)

अवगरी करज्यो न माने मेरी ।
श्री अनीत नीत काहे कु करतरी,
अति मीन मृग खजन घोरो ॥ १ ॥
कनक कदली हरि कपोत कबु,
अरु कुभ कमल करी कीरो ॥
सारग उरग अनेक सग मिलि,
देत उरानो तेरो ॥ २ ॥
चदगहन होवत राका निशि,
रे हे त्रिया निज गेह नेरो ॥
रतनकीरति कहेया तु कलकी,
राह गहत हे अनेरो ॥ ३ ॥

राग केदारो (८)

नेम तुम आवो घरिय घरे ।

एक रयनि रही प्रात पियारे, वोहोरी चारित घरे ॥ १ ॥ नेम ॥
समुद्र विजयनदन नृप तु ही विन मनमथ मोही न रे ।
चन्दन चीर चारु इन्दुसे दाहत अग घरे ॥ २ ॥ नेम ॥
विलखती छारि चले मन मोहन उज्जल गिरि जा चरे ।
रतनकीरति कहे मुगति सिधारें अपनो काज करे ॥ ३ ॥ नेम ॥

राग केनारो (९)

राम कहे अवर जया मोही भारी ॥

दश कमल सु शीतल सीता दाहत देह धारी ॥ १ ॥
नयन कमल युगल कर पदुमिनी गयन के इ दु-अपारी ।
रतनकीरति राम पीर तजु पलक जुग अनुवारी ॥ २ ॥

राग केदारो (१०)

दशानन, वीनती कहत होइ दास ।

तोही विरहानर जरत या तन, मन मोहु आउ दास ॥ १ ॥
सूर तो सपन दश च्यार निवारे ते तोही अग निवास ।
चन्द बदन कु अधर सुधा कु स्पनदत केलास ॥ २ ॥
लावनि काम दुधा श्रीकाते रंभा रूप के पास ।
गज गमनी जु हर द्रीगन कु धनुध भमे कवु पास ॥ ३ ॥
कठिन री हो कहा करत कठियाई या मोही पूरन आस ।
रतनकीरति कहे सीया कारण काहे नसावत सास ॥ ४ ॥

राग केदारो (११)

वरज्यो न माने नयन निठोर ।

सुमिरि सुमिरी गुन भये सजल घन,
उमगी चले मति फोर ॥ १ ॥ वरज्यो ॥
चचल चपल रहत नही रोके,
न मानत जु निहोर ॥
नित उठि चाहत गिरि को मारग,
जेही विधि चन्द्र चको ॥ २ ॥ वरज्यो ॥

तन मन धन योवन नही भावत ।
रजनी न भावत भोर ॥
रतनकीरति प्रभु वेगे मिलो ।
तुम मेरे मन के चोर ॥ ३ ॥

राग केदारो (१२)

झीलते कहा कर्यो यदुनाथ ।
एही रुकमणि सत्यभामा छीरकत मिली सबु साथ ॥ १ ॥
छिरकतें बदन छपात इतउत, व्याहान को दीयो हाथ ।
रतनकीरति प्रभु कैसे सीधारे मुगति वधू के पाय ॥ २ ॥

राग केदारो (१३)

सरद की रयनि सुन्दर सोहात ।
राका शशधर जारत या तन, जनक सुता बिन भ्रात ॥ १ ॥
जब याके गुन आवत जीया मे, वारिज वारी बहात ।
दिल विदर की जानत सीआ, गुपत मते की वात ॥ २ ॥
या विन या तन सहो न जावत, दु सह मदन को घात ।
रतनकीरति कहे विरह सीता के, रघुपति रह्यो न जात ॥ ३ ॥

राग केदारो (१४)

सुन्दरी सकल सिंगार करे गोरी ।
कनक बदन कचूकी कसी तनि, पेनीले आदि नर पटोरी ॥ १ ॥
नीरखती नेह भरि नेमनो साहकु रथ वेले आयेंसग हलधर जोरी ।
रतनकीरति प्रभु निरखी सारग वेग दे गिरी गये मान मरोरी ॥ २ ॥ सुन्दरी ॥

राग मारुणी (१५)

सारग उपर सारग साहे सारग व्यासार जी ।
ते तल पर सारग एक सुन्दर एवी राजुनार ॥
तरुणी तेजे मोहे जी ॥ १ ॥
सारग सारग हरी मोहे सारग माहे ।
सारग मुकी सारग पति ने जोवे ॥ तरु० ॥ २ ॥
सारग करीने सारग बैठो कोटे सारग समान जी ।
सारग उपर थी सारग उतरी सारग सु करे गन ॥ त० ॥ ३ ॥

सारग श्रवणे शामली वाले नेम दयाल जी ।
सहु सारग केरो ने हीतकर वाल्यो रथ गुणाल ॥ त० ॥ ४ ॥
सारग नी वारी सारग सधाव्यो सारग गज ए रहावे जी ।
अभयनन्द पद पजक प्रणमी रत्नकीरति गुण गावे ॥ ५ ॥

राग मारुणी (१६)

सुण रे नेमि सामलीया साहेव, क्यो वन छोरी जाय ।
कुण काहने रच्यो क्योन जाणो काहे न रथ फेरायरे ॥
जीवन जीवन सुण मेरी अरदास, हु होउगी तोरी दास ।
तू पूरण मोरी आस मोरी आस रे ॥ जी ॥ १ ॥
तात भ्रात अव मात न मोरी, तेरी चेरी होई आउ ।
सेवते देव ते दया न होवे तो सीर लख्या पाउ रे ॥ जी ॥ २ ॥
यु वील वील ते दया न आवे, काहावे क्यो कृपावत ।
रतनकीरति प्रभु परम दयालु, पास छो राजतु रे ॥ जी ॥ ३ ॥

राग सारंग (१७)

सारग सजी सारग पर आवे ।
सारग वदनी, सारग सदनी, सारग रागनी गावे ॥ १ ॥
सारग सम शीर की वनाई, सारग अपनो लजावो ।
या छवी अधिक आपोरी दुवारो सारग सवद सुनावे ॥ २ ॥
सारग लकी सारग थे, सारग अग न भावे ।
सारग छोरति सारग सग दो रति रतनकीरति गुण गाये ॥ ३ ॥

श्री राग (१८)

श्री राग गावत सुर किनरी ॥
करत थेई थेई नेम कि आगि, सुधाग सुगीत देवत भमरी ॥ १ ॥
ताल पखावज वेणू नीकि वाजत, पृथक पृथक वनावत सुन्दरी ।
सारग आगि सारग नाचत देखत सुन्दरी धवल वरी ॥ २ ॥
रथ वैठो शिवया मुत आवे, वधावे मानिनी मोती भरी ॥
रत्नकीर्त्ति प्रभु त्रिभुवन वदित सोहे ताकि राम हरी ॥ ३ ॥

राग असाउरी (१६)

आजू अलि आये नेम नो साउरी ॥
चद्रवदनी मृग नयणी हिलि मिलि ।
या विधि गावत राग असाउरी ॥ १ ॥
मोन मूरत सूरत वनी सुन्दर ।
पुरदर पाछे करत नो छाउरी ॥
जय जय शबद आनन्द चन्द सूर सग ।
या विधि आये चग हलधर भाउरी ॥ २ ॥
किरीट कुण्डल छवि रवि ससि सोहन ।
मोहन आये मण्डप पाउरी ॥
रतनकीरति प्रभू पसूय देखी फिरे ।
राजीमती युवती भई बाउरी ॥ ३ ॥

राग असाउरी , (२०)

वली बन्धोका न करज्यो अपनो ॥
चरन परी परी करु री नोछाउरी ।
लघु वय कहा तप जपनो ॥ १ ॥
रह्यो न परत छिनू निमेष पलक धरी ।
सोवत देखत सपनो ॥
वाच साच सम्भारो अपनी ।
रतनकीरति प्रभु चयनो ॥ २ ॥

राग केदारो . (२१)

कहाँये मण्डन करु कजरा नेन भरु,
होउ रे वेरागन नेम की चेरी ॥
सीस न मजन देउ माग मोती न लेउ ।
अब पोर हू तेरे गुननी वेरी ॥ १ ॥
काई सु बोल्यो न भावे, जीया मे जु एसी आवे ।
नही गमे तात मात न मेरी ।
आली को कह्यो न करे वावरी सी होई फिरे ।
चकित कुरगिनी यु सर घेरी ॥ २ ॥

नीठर न होई ए लाल, वलिहु नेन विसाल।
केसेरी तस दयाल भले भलेरी ॥
रतनकीरति प्रभु तुम विना राजुल।
यो उदास ग्रहे क्यु रहे री ॥ ३ ॥

राग केदारो

(२२)

सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनीरे।
पीयु घरि आवे तो जीव सुख पावे रे ॥ १ ॥
सुनि रे विधाता चन्द सन्तापी रे,
बिरहिनी वध थे सपेद हुआ पापी रे ॥ २ ॥
सुन रे मनमथ वतिया एक मुझरे,
पथिक वधू वध थें देहे हानि मुझरे ॥ ३ ॥
सुन रे जलधर करत कहा गाजरे
मे चक भई तुझत न तअजू न लाज रे ॥ ४ ॥
सुन रे मेरे मीता गोद बिठाउ रे,
सारग वचन थे दुख गमाउ रे ॥ ५ ॥
सुनो मेरा कता नही मुझ दोसरे,
मे क्या कीता इतना कहा रोस रे । ६ ॥
शशधर कर सम चन्दन तन लाया रे,
कमर कदरीदर दुख न गमाया रे ॥ ७ ॥
वियोग हुतासन दहे मुझ देहरे,
वीनती चरन परी करु धरी नेहरे ॥ ८ ॥
रे मन विजोगे भोजन न भावे रे,
उदक हालाहल राग न सुहावे रे ॥ ९ ॥
पीउ आवन की को देवे वधाई रे,
रतन मोतिन का हार देउ भाइ रे ॥ १० ॥
रतनकीरति पीया तोरन जव आया रे,
सजनी सवे मिलि गुन गाया रे ॥ ११ ॥

राग देशाष

(२३)

रथडो नीहालतीरे, पूछति सहे सावन नी वाट।
कहो रे कत नेरे, मुझ नेमे हेले ते स्यामाटि ॥

करु नोरा नेम जीरे, नीठोर न थाईये ना होला नाट ।
वेगें चलो वाहला वनिता कहे, सो गिरनार नो घाट ॥ १ ॥

साभलि सामला रे, आमला मे हलो मुझस्यु कत ।
झीलतास्यु कहयू रे महातना वचन होये महात ॥

किम परणेवा अवीया रे, किनर सुर सोहत ।
हवे मेहली वन जाता वाहला, सोभासी जर हत ॥ २ ॥

सुणि राजमती रे युवती मुझ मन एता वात ।
मुझ जोताथ कारे, जिनधर्म जग माहि वारु विख्यात ॥
एकेका भवने नातर रे अन्तर स्या वाधवा मात तात ।
ते माटह अह्मे तह्मे सेवीये रतनकीरति नो नाथ ॥ ३ ॥

(२४)

सखी को मिलाओ नेम नरिंदा ।

ता बिन तन मन योवन रजतहे चारु चन्दन अरु चन्दा ॥ १ ॥

कानन भुवन मेरे जीया लागत, दु सह मदन को फन्दा ।
तात मात अरु सजनी रजनी, वे अति दु ख को कदा ॥ २ ॥

तुमतो सकर सुख के दाता करम अति काए मदा ।
रतनकीरति प्रभु परम दयालु सेवत अमर वरिंदा ॥ ३ ॥

(२५)

सखी री नेम न जानी पीर ॥

वहोत दिवाजे आये मेरे घरि, सग लेई हलधर वीर ॥ १ ॥

नेम मुख निरखी हरषीयनसू अब तो होइ मनधीर ।
तामे पसूय पुकार सुनी करी गयो गिरिवर के तीर ॥ २ ॥

चन्द वदनी पोकारती डारती मण्डन हार उर चीर ।
रतनकीरति प्रभु भये वैरागी राजुल चित कियो थीर ॥ ३ ॥

राग असाउरी (२६)

आजो रे सखि सामलियो वाहालो रथ परि रुडो भावे रे ।
अनेक इन्द्र अनग अनोपम उपम एहनी न आवेरे ॥ १ ॥
कमल वदन कमलदल लोचन, सुक चची सम नामारे ।
मस्तक मुगट उगट चन्दन तन कोटि सूरजि प्रकाशा रे ॥ २ ॥

कुण्डल अलक तिलक शुभ शोभा, अधर विद्रुम सम सोहे रे।
दत श्रेणि मुकताफल मानू मीठडे वचन मन मोहे रे ॥ ३ ॥

वाहु सकोमल सजनी एहनी, केहनी उपमा दीजे रे।
गज गति वाले मण्डप आवे, भामिनी भामणा लीजे रे ॥ ४ ॥

हरिहर हलधर साथे आवे, भावे रुअडी जान रे।
सारग नयनी सारग वयनी गाये मनोहर गान रे ॥ ५ ॥

रथ आगलि अप्मरा आणदे छवे नाटिक नाचे रे।
रतनकीरति प्रभु निरखी निरखी त्याहा राजी मन राचे रे ॥ ६ ॥

राग असाउरी (२७)

गोखि चडी जू ए रायुल राणी नेमि कुमर वर आवे।
इन्द्र सुरभ नचावता काइ अपछर मगल गावे रे ॥ १ ॥

मही नोहासणि सुन्दरी तहने पहरो नव सर हार रे।
तेह ने उठो नवरग घाट रे रथ वेसीने आवे छे।
माहरो जीवन जगदाधार ॥ २ ॥

काई गाजते ने वाजते माहरो पीउ परणेवा आवे।
राजुल हेडे हरपन्ती काई सखिस्यु रुडु भावे रे ॥ ३ ॥
काई तोरण आव्या नेमि स्वामी, काई दीणे पशुनो पुकार रे।
रथवाली गिरिनारि गयो रतनकीरति नो आधार रे ॥ ४ ॥

राग सारग (२८)

नेमि गीत

ललना समुद्र विजय सुत सामरे, यदुपति नेम कुमार हो।
ललना शिवा देवी तन वन युग केहे अनोपम अवनि उदार हो ॥ १ ॥
ललना मस्तक मुकट कनक जर्यो, रवि छवि कुण्डल कान हो।
ललना नव शिख सोभा कहो वरणु,
जव चढियो हे व्याहान रे ॥ २ ॥

ललना इ द नरिंद गयद चरी गावत सर सवमार हो।
ललना नाचत सुखी अगना, नो सत जी सिंगार हो ॥ ३ ॥
ललना पच रंग पहेनी पटोरी, गोरी राजुल गात हो।
ललना चन्द वदनी मृग लोचनी, चिपुक विन्दु मोहात हो ॥ ४ ॥

ललदा मनिता तक श्रवन दोउ शिर ए खरी श्रमूल हो ।
ललना कवरी शेष लजामणि नाश शुक स्यु हो रहो ॥ ५ ॥
ललना दशन श्रनार श्रनोपम श्रधर श्ररुन परवार हो ।
ग्रीवा सारग सोहवनी उर वंवि मुगता हार हो ॥ ६ ॥
ललना नाभि मण्डल कटि केसरी गजगति लाज्यो मरार हो ।
ललना जानूकदरी पद बीछये नूपूर कुणि तर सार हो ॥ ७ ॥
ललना श्रग श्रंग छवि फवि कहा वरणु राजित राजुल वार हो ।
उग्रमेन के मण्डपे ले रही वर कर मार हो ॥ ८ ॥
ललना श्रायो नीसान वजावते हरि हलधर सव साथ हो ।
ललना सारग देखे दामरी, तव वोल्यो यदुनाथ हो ॥ ९ ॥
ललना सुणि सारथि कहे सामरो पसू वाघे वुण काज हो ।
ललना एति भोजन राजा करे, तुम कारन ए श्राज हो ॥ १० ॥
ललना जीव दयारु सामरो जान्यो श्रथिर ससार हो ।
ललना रथ फेरी गिरिनार चरे, धाई राजुल नारि हो ॥ ११ ॥
ललना सुननो साह मुझ वीनती, मे दुलनी तुम दास हो ।
ललना करु नो छाडरी साम रे, या मुझ पूरे श्रास रे ॥ १२ ॥
ललना रतनकीरति प्रभु इउ कहे एको ग्रहे श्रयान हो ।
ललना सम्वोधी शिखरी गये हरे जीजीया धरी ध्यान हो ॥ १३ ॥

राग मल्हार (२९)

सुणि सखि राजुल कहे, हैडे हरय न माय लाल र ।
रथ वैठो सोहामणो जीवन यादवराय लाल रे ।
मस्तग मुगट सोहामणी श्रवणे कुण्डल सार लाल रे ।
मुख सोभा सोहामणी, काति तणो नही पार लाल रे ॥ १ ॥
गज गमनी मृग लोचनी, रायुल रूप श्रपार लाल रे ।
रतन जडित वाहे वेहपा, कठि एकावल हार माल रे ॥
रथ वैठांने निरखियु, सौरिग ने तो पास लाल रे ।
वचन सूणी रथ चालियो, पूरयो गिरिनारि वास लाल रे ॥
सखि कहे रायुल सुणो, नेम गयो गिरिनारि लाल रे ।
श्री श्रभयनन्दि पद प्रणमीने, रत्नकीर्ति कहे सार लाल रे ॥

राग रामश्री (३०)

सशघर वदन सोहमणी रे, गज गामिनी गुण माल रे ॥
हरिलकी मृग लोचनी रे, सुधा सम वचन रसाल रे ॥
रायुल रति सम वीनवे रे, जीवन जिन यदुराय रे।
सुणि सुणि जिन यदुराय रे, चरि चन्दन चन्द नवि गये रे ॥
नवि गये तात ते माय रे ॥ १ ॥

दशन दाडिम वीज शोभता रे, चम्पक वरण सेहि देह रे।
अधर विद्रुम सम राजता रे, घरती नाथस्यु वहु नेह रे ॥ २ ॥
कीर कोकिल वोल्यो नवि गमेरे, नोव गूथ्यो गमे केश कलाप रे।
नवि गये राग अलाप रे, नवशत करण ते नवि गमे रे ॥ ३ ॥
अन्न उदक निद्रा नोव गये, नवि गमे सजनी निसी खरे।
हास्य विनोद सहू परिहसो रे, अमृत भोजन लागे विष रे ॥ ४ ॥
विरह दवानल हू वली रे, तु तो त्रिभुवन तारण नाथ रे ॥
वलि वलि पाय पडी विनवू रे, मुन्हे राखो तुम्हारे पास रे ॥ ५ ॥
भोग भव भ्रमण कारण घणू रे, सुणि सुणि रायुल नारि रे।
ते किम ज्ञानवत आचर रे, तु तो ताहरे हृदय विचारि रे ॥ ६ ॥
प्रतिवोधी सामलिये सुन्दरी रे, जइ लीधो गिरिनारि वास रे ॥
रतनकीरति प्रभु गुणनिलो रे, पूरो पूरो मुझ मन आस रे ॥ ७ ॥

राग परजाउ गीत . (३१)

नेम जी दयालुडारे, तु तो यादव कुल सिणगार रे।
जग जीवन जगदाधार रे, तह्मे करो ह्मारी सार रे ॥
स्वामि अड वडिया आधार ॥ १ ॥

हु तो हु ती मदिर राज रे, मैं तो हरिनु न जाण्यु काज रे।
तु तो आको अधिक दिवाज रे, हम जाता तुझनें लागु लाज रे ॥ २ ॥
कोणे लायो तुझ मर्म रे, जे परणे वेसे कर्म रे।
ते न जणि ससार नो शर्म रे, हवे कोण क्षत्रिय धर्म ॥ ३ ॥
मन्हे हससे सजनी नो साथ रे, केहेस्ये हनेली गयो किम नाथरे।
हू किम रहू अनाथ रे, तहमे देयो अन्तर हाथ ॥ ४ ॥
तु तो सकल साखय आनद रे, तु तो करुणा तरवर कद रे।
तुझ दीठडे मुज आणद रे, कहे रत्नकीरति मुणिद रे ॥ ५ ॥

राग श्री राग (३२)

वदेह जनता शरण ॥

दशरथ नदन दुरित निकदन, राम नाम शिव सुख करन ॥ १ ॥
अकल अनत अनादि अविकल, रहित जनम जरा मरन।
अलख निरजन बुध मनरजन, सेवक जन अघव्रत हसन ॥ २ ॥
कामरूप करुना रस पूरित, सुर नर नायक नुत धरन।
रतनकीरति कहे सेवो सुन्दर भव उदधि तारन तरन ॥ ३ ॥

राग श्री राग (३३)

कमल वदन करुणा निलय ॥

सिव पद दायक नरवर नायक राम नाम रघुकुल तिलय ॥ १ ॥
मधुकर सम शुभ अलक मनोहर, देह दीप्ति अघ तिमिर हर।
कजदल लोचन भवभय मोचन, सेवक जन सतोष कर ॥ २ ॥
अधर विद्रुम सम रक्त विराजित, द्विजवर पक्ति मौक्तिक कलन।
सीता मनसिज ताप निवारन दीघु बाहु रिपु मद दलन ॥ ३ ॥
अमर खचर कर नायक सेवित चरण कमल युगल विमल।
रतनकीरति कहे शिवपदगामी कर्म कलक रहित अमल ॥ ४ ॥

(३४)

आवो सोहासणि सुन्दरी वृद रे, पूजिये प्रथम जिणद रे।
जिम टले जनम मरण दुख दद रे, पामीये परम आनन्द रे ॥ १ ॥
नाभि महीपति कुल सिणगार रे, रुअडला मरेवी मल्हार रे।
युगला धर्म निवारण ठार रे, करयो बहु प्राणी उपगार रे ॥ २ ॥
अण्य भुवन केरो राय रे, सुरनर सेवे जेहना पाय रे।
सोहे हेम वरण सम काय रे, दरशन दीठे पाप पलाय रे ॥ ३ ॥
एक शतय नीलजस रूप रे, विघटचू दीठु त्याह्यारे रूप रे।
मन घरीयो वेराग अनूपरे, जे तारे भव कूप रे ॥ ४ ॥

श्री राग (३५)

श्रीराग गावत सारग घरी ॥

नाचती नीलजसा रिषभ के आगे।

सरीगमपधु–निध-पम-गरी ॥ १ ॥

मूर्छनाता न वधानउ देखाडउ हू मान।
ठेया ठेवन के जू तार मान मृदग करी ॥
घूनीत घघरी वाजे देखत सवर लाजे,
नोसत श्रीराग सोहे सुन्दरी ॥ २ ॥
सगीत रगीत रूप निरखीन चलो भूप,
जय जय जय जिन आनद भरी ॥
नीलजसा विहाटी पेखी करी करुना,
रतनकीरति प्रभु देखी करी ॥ ३ ॥

राग वसत . (३६)

पार्श्व गीत

-वणारसी नगरी नो राजा, अश्वसेन गुणधार।
वामादेवी राणी-ए जनम्यो, पार्श्वनाथ अवतार ॥

विमल वसत फूल लेई पूजो, श्री सकट हर जिन पास।
दर्शन दूरितअघ निवारे पहोचे मन नी आस ॥ १ ॥

नव कार उन्नत जिनवर राय, इद्रनील मणि काय।
इद्र नरेन्द्र नित्य नमें पाय, समरे सकट जाय ॥ २ ॥

मदन गहन दहन दावानल, क्रोधसर्प सुपर्ण।
मान मत्त मातग केसरी, भव्य जीव ने सर्ण ॥ ३ ॥

मिथ्यातम नाशन तू सूर्य सम, लोभ दवानल मेह।
दुर्द्धर कमठ वैरी मद मू की, पाय नम्यो तुझ तेह ॥ ४ ॥

धरणेन्द्र पदमावती करे सेव, भव्य कमलवर भान।
ससार आवागमन निवारो, हु तुम्ह मागू मान ॥ ५ ॥
श्री हासोट नगर सोभा कर, सकलसघ जयकार।
रतनकीरति सूरि अनुदिन प्रणमे, श्री जिन पास उदार ॥ ६ ॥

अथ वलभद्र नी धीनति (३७)

प्रणमी नेमी जीनेन्द्र, सारदा गुण गण मडणीये।
गौतम स्वामीय पाय वंदन करु भव खडणीये ॥
सोरठ देश विशाल इद्र नरेन्द्र मनोहर ए।
सोभावत अपार नर नारि तिहा सु दरु ए ॥

नगर द्वारिका राय रुपकला गुण वारिधि ए।
कामिनी रूप विसाल रोहिणी नाम सुसोमीये ए।।
साली क्षेत्र वर मे चन्द्र परमोहतीए।
।। २ ।।

स्वपन दीठा ते नार देव पहुपरमु गल ए।
अवतरीया वलदेव त्रीभोवन मोहन पर वल ए।।
देव की पुत्र उदार नारायण मध वसुरणीए।
माहाराज वर तेह, त्रीण खडना सुधर्म ए।। ३ ।।
पद्मनाम वलभद्र चितवना सुख पामीए।
कीधा राज महत भोगवे पुन्य वःवाणिये ए।।
थीयो द्वारिका ना सवे वाधव तव निसराए।
कर्म तणी रे नीरखेव ज्ञानवत दुख वीसर्या ए।। ४ ।।
सर्व अचलनो राय तु गो गिरवर सोभतोए।
कोड नवाणु सीध्द ते जे त्रीभोवन मोह तोए।।
श्री नारायण भग वैराग पामी धीर मन।
चारीत्र लीघू धन्य ध्यान ऐ त वन।। ५ ।।
राम नाम गुणवत पू जता भव नासीये ए।
नामे रोग समूह नाग गर्जेद्र गु त्रामीवे।।
भूत पिसाच शाकनी डाकनी रोग हरे।। ६ ।।
लक्ष्मी नारि सुरूप पुत्र धुरधर नादीये ए।
सकल कला गुणवत अभय नदि गु॰ वादीये ए।।
वीनति राम नरेन्द्र रतनकीर्ति भणे भाव धरी।
स्वर्ग मोक्ष नर नारि लहे भणे जे सुःर मन करी।। ७ ।।

भट्टारक रत्नकीर्ति

की

कृतियां

श्री भरत-बाहुबली छन्द

मंगलाचरण

स्तुत्वा श्रीनाभेय सुरनरखचरालि राजिपदकमल ।
रौद्रोपद्रवशमन वक्ष्ये छदोति रमणीयक ॥ १ ॥
पणविवि पद आदीश्वर केरा । जेह नामे छूटें भवफेरा ।
व्रह्मसुता समरु मतिदाता । गुणगणमडित जग विख्याता ॥ २ ॥
वदवि गुरु विद्यानदि सूरि । जेहनी कीर्त्ति रही भरपूरी ।
तस पद कमल दिवाकर जाणु । मल्लिभूषण गुरु गुण वखाणु ॥ ३ ॥
तस पट्टें पट्टोधर पण्डित । लक्ष्मीचन्द्र महाजश मण्डित ।
अभयचन्द्र गुरु शीतल वायक । सेहेर वश मडन सुखदायक ॥ ४ ॥
अभयनदि समरु मनमाहि । भयभूला वलगाडे वांहि ।
तेह तणि पट्टे गुणभूषण । वदवि रत्नकीरति गत दूषण ॥ ५ ॥
भरत महीपति कृत महीरक्षण । वाहुवली वलवत विचक्षण ।
तेह तणो करसु नव छद । साभलता भणाता आणद ॥ ६ ॥
देश मनोहर कोशल सोहे । निरखता सुरनर मन मोहे ।
ते माहि राजे अति सुन्दर । शाकेता नगरी नव मन्दिर ॥ ७ ॥

महाराजा ऋषभदेव का शासन

राज्य करे तिहा वृषभ महाभुज । सुख सुखमा जितहसि तनवानुज ।
जुगलाधर्म निवारण स्वामी । भव भय भजन शिवपद गांमी ॥ ८ ॥
अग सुरग अनूपम राजे । रूप सुरूपें रतिपति लाजे ।
कनक काति सम काय कलाधर । धनुष पाचसे उच्च मनोहर ॥ ९ ॥
ज्ञान त्रण्य शोभे अति जेहनें । कोण कला उपदेशे तेहनें ।
कल्पवृक्ष क्षय जाता जाणी । जेणें सर्व संतोष्या प्राणी ॥ १० ॥
जैनधर्म जेणें उपदेश्यो । जीव जन्तु कोई नवि रेस्यो ।
दीनदयाल दयानो सागर । भावभजन भूरि गुणाकर ॥ ११ ॥

रानी यशोमति का वर्णन

गजगामिनी कामिनी कृशअगी । नयन हरावी बालकुरगी ।
सारद चारु सुधाकर वदनी । कुद कुसुमसम उज्जल रदनी ॥ १२ ॥

वजुल वेणी वीणा वाणी । रूपरमें जीती रति राणी ।
अधर अनुपम विद्रुम राता । नलवट केसर तिलक विभाता ॥ १३ ॥

नासा सरल सभर कुच सारा । मजुल रुचि मुक्ताफल हारा ।
कदली सार सुकोमल जघा । कटि तट लक लजावित सिघा ॥ १४ ॥

प्रथम यशोमति अति अभिरामा । वीजी रम्य सुनन्दा भामा ।
मात जसोमति जे जाया सुत । भरत आदि सो ब्राह्मी सयुत ॥ १५ ॥

जनम्यो वीर सुनन्दा मार्ये । वाहुवली सुन्दरी तनुजाये ।
सहु परियण सु राज्य करता । हास विलास विशेप वहता ॥ १६ ॥

आशी लाप पूरव सवच्छर । विविध विनोदेंव्योलाविस्तर ।
एक समय नीलजस रूप । देपी मति चमक्यो वृष भूप ॥ १७ ॥

ऋषभ का वैराग्य

ऊठ्यो अति वैराग्य विचारी । छडी लछि वहु अतिसारी ।
राज्य तणु आडवर आप्यु । भरत महीपति नामज थाप्यु ॥ १८ ॥

भरत को राज देना

पोतनपुरी भुजवली वैंसारया । अवर यथोचित तनुज वधार्‍या ।
च्यार हजार महीपति सार्थे । लीधो सयम त्रिभुवन नार्थे ॥ १९ ॥

पच महाव्रत पच समितिसु । पाले जिनपति अण्य गुपति सु ।
अति ऊजड अटवी म्हा रहेता । होर्डे सवल परीसह सेहेता ॥ २० ॥

एक दिवस ते राज्य करतो । वैठो भूप सभा सोहतो ।
त्यारें अण्य वधामणी आवी । साभलिता सहुनें मनें भावी ॥ २१ ॥

वृपभानथनें केवलणाण । प्रगटयु चक्ररयण जिमभाण ।
पुत्र जन्म साभलीयो नरपति । कीधो मत्र सहु मली शुभमति ॥ २२ ॥

धर्म कर्म कीजे ते पेहेलु । जिम नवछित सोभे वेहेलु ।
त्यारें भूपति भावधरीनें । केवलवोध कल्याण करीनें ॥ २३ ॥

चरच्यु चक्र कर्‍यु आडम्वर । पुत्र जन्म उच्छव करी सुन्दर ।
मही साधन सचरीयो नायक । मलीया गजरथ तुरग सुपायक ॥ २४ ॥

भरत द्वारा दिग्विजय

पूछवि पडित ज्योतिप जाण । वर मगल दिन कर्‍या पयाण ।
चाल्या चतुर महीपति मोटा । शूर सुभट अति चागण चोटा ॥ २५ ॥

जीत्या जोर छखड अखडा। वेरी वहु कीधी वहुरड्या।
दड्या षड्या गढपति गाठा। आठा नाहागजे उपराठा ॥ २६ ॥

गिरि गह्वर जल थल खखोल्या। व्यतर विद्याघर झकझोल्या।
साठ हजार वरसघरें आव्यो। लच्छि सुलक्षण ललना लाव्यो ॥ २७ ॥

दिन जोइ नगरी पेसता। चक्र न चल्ले सुर ठेलता।
त्यारें वचन चवे ते चक्री। वोलाव्या मतिसागर मन्त्री ॥ २८ ॥

कहो किम चक्र न पेसें पोलें। ते मन्त्री बोल्या अब बोलें।
स्वामी साभलि वचन अम्हारा। आण न माने बन्धु तम्हारा ॥ २९ ॥

तेम्हा वाहुवली वल पेषे। कोन्हे नवि मन माहे लेषे।
धीर वीर गम्भीर महावल। वेरी गज केसरी अति चचल ॥ ३० ॥

निज तेजें तरणी पण झप्यो। एह्वा वचन सुणीनें कप्यो।
रोष चढयो राजा ते वोले। कोण महीपति म्हारे तोले ॥ ३१ ॥

मारु मान उतारु तेहनु। रणरझलावु वहुदल एहनु।
त्यारें ते मन्त्री सुविचारी। वोल्या भूपति नें हितकारी ॥ ३२ ॥

रहो रहो स्वामी रीश न कीजे। तेहनु पेहेलो लेख लखीजे।
ते लेई विचारु चर जाये। वाटें कही खोटि नवि थाये ॥ ३३ ॥

जेम तिहाजईनें देहेलो आवे। जोईये साज पडूतर लावे।
एह विचार सभी मनें भाव्यो। आप्यो लेख सुदूत चलाव्यो ॥ ३४ ॥

वाहुबली के पास दूत भेजना

चाल्यो दूत गयो ते तत्क्षण। भेट्या राजकुमार सुलक्षण।
आप्यो लेख सभा सहु वेठा। वाची वचन चवें ते रूठा ॥ ३५ ॥

कहे रे चर तें किम पग धार्‌यो। त्यारें बोले वोल विचार्‌यो।
मानो आण महीपति केरी। आपें भूमि वली अधिकेरी ॥ ३६ ॥

त्यारें दूत वचनें कलमलीया। वलता वचन चवे ते वलीआ।
आण अम्हे तेहनी शिर वहीये। जेह थी भवसागर ऊतरीये ॥ ३७ ॥

एहवु कहि चढीआ कैलाशे। लीधो सयम स्वामी पासें।
त्यारे ते चर पाछो वलीयो। आवीनें राजा विनवीयो ॥ ३८ ॥

स्वामी तेणें सुह ऋद्धि छडी। सेवा आदि जिनेश्वर मडी।
एहवु वचन सुणी तह सीयो। मनमाहे वेराग न वसीयो ॥ ३९ ॥

आर्या

कोह केय वसुधा, बभूवुरस्या कियत ईशगणा ।
तै साक न गता सा, यास्यति कथ मयेति सह ॥ १ ॥ ४० ॥
बोल्यो वचन वली वसुधापति । बाहुवलीनो सीज मनोगति ।
चारु सो एक दूत चलावो । तेहनो आशय वेगे अणावो ॥ ४१ ॥
त्यारें तार्णे मत्र विचारी । दूत चलाव्यो वहुमति धारी ।
चाल्यो दूत पयाणें रेहेतो । थोडे दिन पोयणपुरी पोहोतो ॥ ४२ ॥

पोदनपुर का वैभव .

दीठी सीम सघन कण साजित । वापी कूप तडाग विराजित ।
कलकारजो नल जल कु डी । निर्मल नीर नदी अति ऊ डी ॥ ४३ ॥
विकसित कमल अमल दल पती । कोमल कुमुद समुज्जल कती ।
वन वाडी आराम सुरगा । अव कदव उदवर वु गा ॥ ४४ ॥
करणा केतकी कमरष केली । नवनारगी नागर वेली ।
अगर तगर तरु तिदुक ताला । सरल सोपारी तरल तमाला ॥ ४५ ॥
वदरी वकुल मदाफ बीजोरी । जाई जूही जवु जभीरी ।
चदन चपक चाउर ऊली । वर वासती वटवर सोली ॥ ४६ ॥
रायणरा जवू सुविशाला । दाडिम दमणो द्राख रसाला ।
फूल सुगुल्ल अमुल्ल गुलावा । नीपनी वाली निंवुक निंबा ॥ ४७ ॥
कणयर कोमल लत सुरगी । नालीयरी दीशे अति चगी ।
पाडल पनश पलाश महाघन । लवली लीन लवगलता घन ॥ ४८ ॥
बोलें कोयल मोर कीगरा । होला हस करें रवसारा ।
सारस सूडा चचु उतगा । लावा तीतर चारु विहगा ॥ ४९ ॥
कोक चकोर कपोत सरावा । भ्रमरा गु जारव रस भावा ।
कुसुम सुगन्व सुवासित दिग्मुख । मद मरुत उत्पादित प्रतिसुख ॥ ५० ॥
दूत चल्यो घन वन निरखतो । पेठो पोल विषय हरखतो ।
दिठी ऊ ची पोल पगारा । अति ऊ डी खाई जल फारा ॥ ५१ ॥
कोशीसें मडित बहुमारा । गोला तालन लागें पारा ।
नगर मझार चल्यो निरखतो । मन सु देवनगर लेखतो ॥ ५२ ॥
शिखर वद्ध जिन मदिर दीठा । जाणें लोचन अमीअ पइठा ।
सुन्दर सत्तखणा आवासा । मृगनयणी मडित सुविलासा ॥ ५३ ॥

मेडी मण्डप वहुमत वारण। घरे घरे लेहेके मगल तोरण ॥ ५४ ॥
ते जोतो मनें थयो अचभित। चाल्यो चर चहुदे अविलम्बित।
दीठो माणिक चोक मनोहर। च्यारे पासें विराजित गोपुर ॥ ५५ ॥
मणिमोती हीरा पर वाला। काली वेले अगर अतिकाला।
चोराशी चहुटा हटशाला। चित्र-विचित्र न झाक झमाला ॥ ५६ ॥
कु कुम कस्तूरी कर्पूरा। चूआ चन्दन चमर सु चीरा।
मखमल लालम सज्ज रसेसरु। वहु शकलात दुरगीटशरु ॥ ५७ ॥
ने सहु नगर तमासा जोतो। राज दुआर जइ चर पोहोतो।
पूछवि पोल घणी गयगतीनें। अवर जइ मन्नीयो रतिपतिनें ॥ ५८ ॥

बाहुबली की राज सभा

त्यारें भूपति आप्यु आसन। कुशल प्रश्न कीधु मभासन।
बोल्यो दूत वचन ते वलतु। स्वामी साभलीये कहु चर तु ॥ ५९ ॥
आज कुशल सविशषे तेहनें। तम्ह सरषा बाधव छे जेहनें।
तो पण तेहनें मलचा जईये। जेम जगमाहे मोटा थईये ॥ ६० ॥
तम्ह थी ते बाधव पण मोटो। ते सु मान धरो ते खोटो।
ते माटे सु फोकट ताणो। ते छे त्रण्य दुपडह राणो ॥ ६१ ॥
साभलि सर्व कहु ते माडी। मु को रोब हुंईयानो छाडी।
साध्यो विजयारध अतिसुन्दर। ध्रु जाव्या विद्याधर वितर ॥ ६२ ॥
म्लेछराय मारी वश कीधा। तेह तणें शिर दण्ड जदीधा।
नेमि विनेमि नमाव्या चरणें। मागध वर्तुन आव्या शरणें ॥ ६३ ॥
तरल तरग पयोनिधि तरीयो बाणें भूरि प्रभासविडरीयो।
गगासिंधु नदी अति डोहोली। आपी भेट अनूपम वोहोली ॥ ६४ ॥
उठ चढीयो हिमवतहराव्यो। नट्टमालि निज सेव कराव्यो।
पुण रमतो वृषभाचल आव्यो। जुगति करी तिहा नाम लिखाव्यो ॥ ६५ ॥
लाट मोट कर्णाट कस्या वस। मेदपाठ मारु लीधा घस।
मानी मरहट्टा ऊजाड्या। सोगल सोर घघगे पाड्या ॥ ६६ ॥
मालव मागधनें मुलतान। कन्नड द्राविड मोड्या लान।
जाहल मलवार सवराड। कामरूप नेपाल सलाड ॥ ६७ ॥
अग बग कबोज तिलगा। कु कण केरल कीर कलिगा।
पंचाला बगाला बब्बर। जालघर गधार सुग जर ॥ ६८ ॥

पारस कुरुजांगल आहीर । कोशील काशी लका तीर ।
रूम सूम हर मजहद कीघा । कच्छ वच्छ वर मुद्रा दीधा ॥ ६६ ॥

भक्खर देश पड्या भगाणा । हलफलीया हेलाहीदुआणा ।
एवनादि वत्तीश हजार । देश मनावी आण अपार ॥ ७० ॥

वमणा सोल हजार मुगटधर । गाजे लक्ष चोराशी गयवर ।
तत्समान रथ पाचक चल्ले । पाद प्रहारे मेदिनी हल्ले ॥ ७१ ॥

छुन्नु सेहेसर माललिअगी । कोड अठार तुरग सुरगी ।
वें अडतालीश कोडि सुगाम । सुन्दरसर शोभित वरचाम ॥ ७२ ॥

कर्वट खेट मटवक राजे । पत्तन द्रोण मुखादिक छाजे ।
नवनिधान मनवछित पूरे । चउद रयण दालिद्दवि चूरे ॥ ७३ ॥

जीर्णें लच्छि करी घरे दासी । कीर्ति कलाक कुवतनि दासी ।
चक्रपति सु वक न थइये । तेसु मानवरी नवि रहीये ॥ ७४ ॥

मान त्यजी तस आणज वहीये । भरत महीपति पद अनुसरीये ।
नही तर तस कोपानल चढस्ये । ताहारु भुजवल दल मलस्ये ॥ ७५ ॥

देशे विषय भगाणु पडस्ये । सुन्दर पोयणपुर उजडस्यें ।
त्रिते भींत पडि आथडस्ये । गढ पाडी मे दानज करस्ये ॥ ७६ ॥

मणिमोती हाटक लूटास्ये । वंदि पडचू माणस विघटास्ये ।
नाशी नर देशातर जास्ये । तीहारु लोकह सारय थास्ये ॥ ७७ ॥

ते माटे डव-डव सहु मूको । भरतपतिनी सेवम चूको ।
एहवा दूत वचन वहु वोल्यो । तो पण मन माहि नवि डोल्यो ।
रोस चढयो वोले रतिनायक । खोटु दूत भवेंसु वायक ॥ ७८ ॥

आर्या

पूज्योग्रजोत्रभुवने रीत्यापि न मान्यते मयेति नृप ।
वाहुवलीत्यभिरुपै सज्ञा सकथ्यते हि वृथा ॥ २ ॥ ७९ ॥

वाहुवली का उत्तर

जे जनपद मुझ आप्यो जिनवर । ते लीधो किम जाये नरवर ।
अण्यलोक माहारें दशवर्ति । एहनें खण्ड छखण्डज धरती ॥ ८० ॥
तो एहनी किम आणज-मानु । साहा मुहु वेसारु कानु ।
इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र नमावु । दानव देव दिनेश भमावु ॥ ८१ ॥

मद झरता मय गय सघारु । घसमसता झटपट हूठ दारु ।
हणहणता हयवर झकझोलु । रणसायर कल्लोलें रेलु ॥ ८२ ॥

भूतपिशाच परेत हकारु । व्यतर विद्याधर चक्कारु ।
लडथडता भडघड नच्चाडु । सुत्तो यमराणो जग्गाडु ॥ ८३ ॥

भूख्या राक्षस नें सतोष । क्षेतल्लो षेडे बल पोषु ।
रोस चढयो रण अगणें आडु । गडगडता गिरि चरते पाडु ॥ ८४ ॥

मुकटवद्ध राजाने मारु । छत्रभग करी नाद उतारु ।
शाकेता नगरी उज्जाडु । म्हारे को नवि आवे आडु ॥ ८५ ॥

विद्याधर वाजीगर माया । व्यतर अन्तर चचल छाया ।
ए जीतें किम शूर वखाणु । मुझसु आणि भडे तो जाणु ॥ ८६ ॥

चक्रें करी कुम्भारज कहीये । दण्ड धरे दरवानज लहीये ।
यमवाहन गजवेशर वाजी । वाल,रमति सरषी रथ राजी ॥ ८७ ॥

पायक पूतलडा समभासे । ते सारु किम मझनें त्रासे ।
आण वहु हु तेहनी माथे । जे सुरगिरि अच्यो हरि हाथे ॥ ८८ ॥

ते विण आण चहै जे केहनी । तो लाजे जननी जग तेहनी ।
जा जा दूत जवानी करतो । एके बोल न वोले नर तो ॥ ८९ ॥

घातो जाय घणी नें केहेजे । मुझ पहलो रण आवी रहेजे ।
नही तर हु आवु छु वहेलो । चापी भूमि पडु तझ पहिलो ॥ ९० ॥

वीर वचन साचु हू भाषू । युद्ध करी जगे नाम उ राखु ।
त्यारें दूत गयो शाकेता । जाइ वीनवीयो भरत विनेता ॥ ९१ ॥

दूत का वापिस भरत के पास आकर निवेदन करना

वाहुबली तझ आण न मानें । तेहना वोल न पोथे पानें ।
जो वली आतो दहेला जाऊ । नहीं तर वैठा गीत जगाऊ ॥ ९२ ॥

ते साभली नें राजा रूठो । हावु ढील कसी ते ऊठो ।
साजो कटक झटक सु चालो । वाहुवलीनी षडभड टालो ॥ ९३ ॥

त्यारे सैन्य-सजाई कीधी । रण जावाने फेरी दीधी ।
मदमाता मयगलमलयता । तिजतरल नेजा झलकता ॥ ९४ ॥

सेना की तैयारी

घम-घम घूघर वाला । गुम-गुम गुजताल भगराला ।
घण्टा टका रव रणकन्ता । लकती ढाल घजा लेहे कता ॥ ९५ ॥

मग मगता मद जल मेहूकता । ढलगा अंजनगिरि वन्ता ।
हस्त मलग गहि कर कर नाना ।
दतूशल मूशल सम थाला ॥ ९६ ॥
गुलगुलत मद गलता धाता । नाहूरे कुम्भस्थल राता ।
चचल चमरालापुटाना । उद्टा घंटा कटाना ॥ ९७ ॥
हिलि-हिलि कलित-कल्लिल हू पारा ।
जलचलगामियाधी सारा ।
नीला पीला धवल तुरगा । काला कविला मावल मुरगा ॥ ९८ ॥
रणझणता गल कदल चगा । रग विरग मनोरम मत्त गा ।
आवुट वाकुड आकडी आला ।
फसम सभाकी तलर ढींमाला ॥ ९९ ॥
ते उपरें चढी आठ कराला । मारु मरह ढाटढी आला ।
टाकचंदेलाने चहुआण । सोलकी राठोड़ सुराणा ॥ १०० ॥
दहिआडा भीनेबोटाणा । परमारा मोरी मकठाणा ।
रोमी मुगल मल्या मुलताना । पान मलिक साथे सुलताना ॥ १०१ ॥
हवशी हूड फरगी फलका । चपल बलोच पलठाण सुठलका ।
चाल्या कटक विकट अति केहरी । अगा टोप शिल्हे सहु पेहरी ॥ १०२ ॥
भास्यौ पचरपजीनें पेटी । भरी आभार बईल्ल झपेटी ।
ऊँट कम्या अरडाता वापर । तम्बू वाड तवेला पापर ॥ १०३ ॥
भेसा भार भर्या अति भारी । शलकी शाढकजावेफारी ।
चाल्या चित्तभृ तारहवर । तारों तरल तुरगम रवभर ॥ १०४ ॥
देता डोट झपेटा पाला । छूटा भट छोटा छोगाला ।
दडेवडता दोगा ठयेटाला । मारे गाल फटाकाठाला ॥ १०५ ॥
कडछ्या कुछाला मुछाला । झगझगता झाल्या ते भाला ।
पेडा खङ्ग, गदा फरशी घर । चक्र चाप तोमर मुद्गर कर ॥ १०६ ।
खपूआ छुरी कटारी मूशल । डीगा डाग च जाडे चचल ।
होका नाल हवाइ हाथे । वहु वन्धूक चलावी साथे ॥ १०७ ॥
विद्याधर निर्ज्जर मनोहारा । रचित विमान विनोद विहारा ।
देखी सैन्य पडगाडवर । हरष्यो भरत धराटमणीवर ॥ १०८ ॥
चढीयो छत्रपति सुविलास । चोपा चमर ढलें ते पास ।
कीधू कूच दमामा वाजे । नादे गडगड अम्बर गाजे ॥ १०९ ॥

ढम-ढम जगी ढोल धसूके। साभलता कायर मुख सूकें।
दो-दों मद्दल तवल नफेरी। झ झ झल्लरी भम्भा भेरी ॥ ११० ॥
वाजे काहल ताल कशाल। पूरे शख सुवश विशाल।
वोले भाट भटाइ गाढे। खाखरीआ आगल थी काढें ॥ १११ ॥
एहवि अविक दिवाजे जाये। वोहोला दल पोहोवी नवि माये।
रुनकटीआ आगल थी वाधर। कापी झाड करेते पाधर ॥ ११२ ॥
ऊड अडारा मोटा पाडी। वाकी वाट समारेखाडी।
अति अलगार करे ते मोटी। वाटें कहीथाये नवि खोटी ॥ ११३ ॥
चोण करी चाल्या चक्रीवल। वेगे जई पोहोता अतुली वल।
ते पहेलो आव्यो वाहुवली। दीवो चापि खड्यो रणभूतल ॥ ११४ ॥
करयु मुकाम रह्या ते रजनी। उग्यो दिनकर चाली धजिनी।
त्यारे रणवाजित्र ज वागा। साभलता कायर मन भागा ॥ ११५ ॥
शूर सुभट रहवट खलभलीआ। वेहेलारण अगणे जइमलीआ।
माड्यु युद्ध महीपति चढीआ। धीर वीर आगल थी वढीया ॥ ११६ ॥
छूटेशरधोरणी रण साथे। काढि कटारी ग्रीसे हाथे।
थामे धनुष चढावी पाला। अहमहमिकया न दीये टाला ॥ ११७ ॥
झग झगता भाला भल मोके। भक भकता लोदी मुखें ऊके।
छूटे नाल हवाई हेका। वन्वूके मारे वहु लोका ॥ ११८ ॥
मोडे मुगर शिल्हे सहु फोडे। चचल छत्र चमर वर ओढे।
नाचे धड वाजे रण तूरा। मुग्दर मारि करे चकचूरा। ॥ ११९ ॥
मदगेहे लागज शकल शूडे। पाछल थी हाला पग गूडे।
घसता धड नाखेते कटकी। झटकेशटकक ते कटकी ॥ १२० ॥
नाना धाय पड्यो वहु प्राणी। वलवलता वहु मागे पाणी।
हरख्या भूत पिशाच निशाचर। व्यतर वेताला शकाकुलर ॥ १२१ ॥
रुडगुड रण भूमि कराला। रुविर नदी दीशे विकराला।
नेजा तेज करता मारे। तो पण नवि को जीते हारे ॥ १२२ ॥

आर्या

सदयँ समर घोर, कृतवतो वर्जिता भटा मन्त्रिवैं।
कार्यं नृपतिनियोग, विनापि कर्तुं युक्तमिति किंचित् ॥ ३ ॥ ११३ ॥

त्यारें महिमति मन्त्री मलीआ ।
मन्त्रविचार विषय अतिकलीआ ।
ते सहु मन्त्र विचारो मोटा । जेहना बोल न थाये खोटा ॥ १२४ ॥
स्यान्हे क्षत्रिय भट सहारो । चारु एक विचार विचारो ।
ए बेहु चरम शरीरी राजे ।एहनें नवि काटो पण लाजे ॥ १२५ ॥
ए सुन्दर नर मयम पामी । कर्महणीनें शिवपद गामी ।
ते थी वात विचारो वेहेली । जेम भाजे सघलीए जे हेली ॥ १२६ ॥

परस्पर मे तीन प्रकार के युद्ध करने का निर्णय -

त्रण्य युद्ध त्यारे सहु वेठा । नीर नेत्र मल्लाहव परठ्या ।
जे जीते ते राजा कहीये । तेहनी आण विनय सु वहीये ॥ १२७ ॥
एह विचार करीनें नरवर । शल्या सहु साथे मच्छर भर ।
दीठु चारु सरोवर विमल । भरीऊ नीरह सित सित कमल ॥ १२८ ॥

जलयुद्ध

अति गम्भीर तरल तरले हरि । पेंठा भूप अपर पट पेहेरी ।
झीले भूप भर्या वहु आंटें । माहो माहे रमे जल छाटे ॥ १२९ ॥
रमता भरत तणायो रेलें । हारयो सहु जोता जल वेलें ।
त्यारे वाहुवली दल हरस्यु । भरत कटक मन मठ अतिनिरष्यु ॥ १३० ॥

नेत्र युद्ध

नेत्र युद्ध करता पण हार्यो । वाहुवली महावल जयकारयो ॥ १३१ ॥
चाल्या मल्ल अखाडे बलीआ । सुरनर किन्नर जोवा मलीआ ।
काछ्या काछ कशीकड ताणी । वोले वागड वोली वाणी ॥ १३२ ॥

मल्ल युद्ध

भुजा दण्ड मन मुड समाना । ताडता वपोरे नाना ।
हो हो कार करि ते धाया । वच्छोवच्छ पड्या ते राया ॥ १३३ ॥
हक्कारें पव्वारे पाडे । वलगा वलग करी ते आडे ।
पग पडघा पोहो वीतल बाजे । कडकडता तरुवर ते भाजे ॥ १३४ ॥
नाठा वनचर आठा कायर । छूटा मय गल फूटा सायर ।
गडगडता गिरिवर ते पडीआ । फूतकरता फणिपति डरीआ ॥ १३५ ॥

गढ गड गडीग्रा मदिर पडीग्रा ।
दिगदन्तीव मक्या चलचलीग्रा ।
जन खल भलीग्रा वालक छलीग्रा ।
भय भीरु ग्रवला कलमलीग्रा ॥ १३६ ॥

तो पण ते धरणी ववढू कें । लडथडता पडता नवि चूकें ।

भरत द्वारा चक्र फेंकना

त्यारे वाहुवली नवि डोल्यो । हलवेंसें चक्री हीदोल्यो ॥ १३७ ॥
देखी वाहुवली भट हसीग्रो ।
भरत तणा भट ग्रति कशमशीग्रा ।
वलतें रीश करी ने मुक्यु । चक्र वाहुवली करें ढुक्यु ॥ १३८ ॥
मान भग दीठो नृप रागे । वाहुवली चढीयो वेरागे
धिग धिग यह ससार ग्रसार । कदली गर्भ समान विचार ॥ १३९ ॥

बाहुवली का वैराग्य

विषय तणा सुख विप सम भासें ।
तन धन यौवन दिन-दिन नासें ।
सज्जन सहु मलीग्रा निज कामे । सु कीजे हय गय वर धामे ॥ १४० ॥
घर घधे पडीयो ते प्राणी । पाप ग्रनन्त करे ते जार्णी ।
मेते मूढ पणु सु कीधु । ज्येठा वधवनें दुख दीधु ॥ १४१ ॥
पहवो मनि वेराग धरीनें । भरतपती सु ग्ररज करीनें ।
निज राजे महावल वेंसारयो ।
क्रोध लोभ मद मदन निवार्यो ॥ १४२ ॥
छडी ऋद्धि गयो जिन पासें । लीधी सयम भव भय त्रासें ।
वरस एक मरयादा कीधी । ग्रन्न उदकनी वाधा लीधी ॥ १४३ ॥

बाहुवली की तपस्या

प्रतिमा योग धर्यो मनमाहे । उभा रही ग्रालवित वाहे ।
ध्यान धरे बहु जीव दया पर ।
नवि वोलें नवि चालें मुनिवर ॥ १४४ ॥
ग्रांप न फरके रोम न हरखें । वनसावज ग्रावीने निरखें ।
वनचर तनुऊ धसता दीसे । तो पण मुनि न चढे ते रीसें ॥ १४५ ॥

नख सु भिल्ल घर्से ते मल्ली । देह चढी नाना चिव वल्ली ।
विष विकराल भुजग भयकर । लवित गल कदल अति सुन्दर ।। १४६ ।।
कान विषय माला ते कीधा । पषीयडें बहुपरे दुख दीधा ।
वरसाले बहु बीज झबूके । तो पण ध्यान थकी नवि चूके ।। १४७ ।।
सघन घनाघन अम्बर गाजे । झझावात असेहेलो वाजे ।
लावी झड माडीनें दरपें । दादुर जल देपीनें हरपें ।। १४८ ।।
माता मोर करे रगरोल । बापीयडो बोले पीउ बोल ।
खलखल नीर वहेते कोतर । भरीया वारि सरोवर दुस्तर ।। १४६ ।।
झर-झर वरसे रात अधारी । झूरे विरही नर नवनारी ।
जे रे हेतो वर चित्र अवासें । ते ऊभो बाहेर चोमासें ।। १५० ।।
धूजे वनचर जाभी टाढें । नीलु वन न रहे हिम साढे ।
नवि सूये वेसे दृढ सवर । नवि ऊढ नवि पेहेरे अम्बर ।। १५१ ।।
जे सूतो निशि ललना सगे । ते शीयाले सहे हिम अगे ।
जे षड रस नव भोजन करतो । ते वनवासी अनशन धरतो ।। १५२ ।।
अति उन्हाले लू बहु वाजे । तरस थकी नवि पाछो भाजे ।
दाझे देह तपे रवि मस्तक । तो पण न चले बोल्यु पुस्तक ।। १५३ ।।
त्रण्य काल कीधु तप दुर्द्धर । तो पण मान न थाये जर्ज्जर ।
वरस दिवस पूगाते जे हवें । आवी भरत नम्यो पदतेहवें ।। १५४ ।।
जपे भरत विनय मनें आणी । मू को मान हईयासु जाणी ।
मुझ सखा पोहोवीतल केता । हवा हमें नेंछे अण देता ।। १५५ ।।
तु मुनि मण्डन मझ मद खण्डन । जनमनरजन भव भय नजन ।
कर करुणा करुणामय सागर । मुझ अपराध क्षमो गुण आगर ।। १५६ ।।
मन थी शल्य तजो मुनिनायक । जिम प्रगटें केवल सुखदायक ।
इम क्षमावी चोल्यो नरवर । जग वेगे पोहोतो कोशलपुर ।। १५७ ।।

बाहुबली को केवल ज्ञान होना

घरयु ध्यान हवे मुनि ज्यारे । केवल प्रकट थयु ते त्यारे ।
भाव धरी भवियण सम्बोधे । कर्म कलक कला न दिऊघे ।। १५८ ।।

जय-जय भुजवलि नमित नरामर।
सकल कलाधर मुगति वधूवर।

रचना काल

सवत सोलसमे सतसहे। ज्येष्ट शुकल पक्षे तिथि छहे ॥ १५६ ॥
कविवर वारें घोघा नयरें। अति उत्त ग मनोहरु सुघरें।
अष्टम जिनवर ते प्रासादे। साभलीये जिन गान सुसादें।
रतनकीरति पदवी गुण पूरे। रचिया छद कुमुद शशि सूरे ॥ १६० ॥

कलश

उत्कट विकट कठोर रोर गिरि भजन सत्पवि।
विहत कोह सदोह मोहतम अघ हरण रवि।
विजित रूप रति भए चारु गुण रूप विनुत कवि।
धनुप पाचसैं पचवीश वर उन्च तनुछवि ॥ १६१ ॥
ससार सरित्पति पार गत,
विवुध वृन्द वन्दित चरण।
कहे कुमुदचन्द्र भुजवली जयो,
सकल सघ मगल करण ॥ १६२ ॥

इति श्री वाहुबली छद वेअक्षरी समाप्त

ऋषभ विवाहलो

समरवी सरसति घो मुझ शुभमति,
करो वर वाणी पसाउ लोए।
प्रथम तीर्थंकर आदि जिनेश्वर वरणवू तास विवाहलोए ॥
जे नर नारिए भासए सारिए,
साभलसे मन नीरमलीए।
पामसे सुख घणा वाछित मनतणा,
भवि भवि नवल वलीए ॥ १ ॥

उलावो—

वलीय घणुसु वखाणीए जाणीए भूतले नामए।
सरस सीम सोहमणि घन वन अनुपम गामए ॥
झलहले नीर भर्या सरोवर, कमल परिमल महे महे।
हस सारस रमे रगे, नदी नीरमल जलवहे ॥ २ ॥

चाल

नाभिराजा एव मरुदेवी राणी

देश कोशल वर तिहा सुरपति पुर,
सम सोहे नगर रलीया मणुंए।
कोशला सुन्दर सतखणा मन्दिर,
सुरे वरवाणु करु गढ़ तणु ए ॥ ३ ॥
माणिक चोकए चतुर सुलोकए,
चहुटा चोराशी जिहा नव नवाए ॥
भोग पुरदर नर रूपें रतिवर,
कामिनि कठे कोयलपिय ॥ ४ ॥
राज रगे करे महिपति नाभि राजा नय भलो।
चउदमो कुलकर सकल सुखकर जगत जाणें गुण निलो।
तस पटराणी कविवर-वाणी चतुर मरुदेवी भली।
अति मधुरवाणी रूपरवाणी रति हरावि रसकली ॥ ५ चाल ॥

स्वप्न दर्शन .

एके समे सुन्दरी पाछली सखी शरवरी,
सोलसपन रूडा नीरखती ए ।
पहिलोए गजवर मदझर गिरिवर,
सरपो देवीनें मनि हरषतीए ॥ ६ ॥
वीजे धुरधर सवल चपलतर धवल नवल ते मनोहरए ।
सहज सोहामणो पामीए त्रीजले हरी बरए ॥ ७ ॥
हसित पदमासने जेठी हस्त पदमे सोहए ।
सपन चौथे लाछि दीठी जगत जन मन मोहए ॥
लहिकति लावी फूल माला झवर गुंजारव करें ।
पाचमे परियल मनमगाटमे नाशिकानें सुख करे ॥ ८ ॥
छवेन्न रजनीकर अमीझर सुखकर सोल कलाकर्रा छाजतोय ।
कुमुद विकासए दश दिशा भासए, छठ्ठेय रजनो राजतोय ॥
उगतो दिनकर सकल तमोहर कमल सोहाकर सातमेए ।
मछ युगल जलमाहि रमे झल झलतें अवलोकिनु आठमोए ॥ ९ ॥
अभ पुरण कलश नवमं सरोवर दशमे भर्‌यू ।
लहे लहे लहेरि नीर निरमल, कमल केशर पीजर्‌यु ॥
लोल जल कल्लोल गाजे, वारि राशी अग्यारमे ।
वर हेम धडीउ रयणजीडनु सिंहासण ते बारमे ॥ १० ॥
देव विमानए चित्र निधानए,
रचना मनोरम तेरमेए ।
नाग भुवन जन जोता हरे तनु मन,
समणे सोहामणे चउदमेए ॥ ११ ॥
राशी रतन तणी पच वरण गणी,
जगमग करतीए पनरमेए ।
अनल अधूमए तेजे घणु धूमए,
ऊ च शिखायें दीने सोलमेए ॥ १२ ॥
मरुदेवी जागी प्रिय कह्ने गइ सपन फल पुछ्र वली ।
नरपति कहे तव पुत्र जिनवर हर्सें मनणें होती रली ॥
साभली राणी सफल जाणी मलयती थारकि गइन।
नाना विनोदे दिवम जाता न जाणे हरंपत थइ ॥ १३ ॥

हत्रि मास आषाढ तणो बीजो वदि पक्ष ।
तिथि बीज मनोहर वार विराजित कक्ष ।। १४ ।।

चवियो अर्हमिंदर अवतरीयो जिनराज, ।
मरुदेवी कुपि धन्म सफल दिन आज ।। १५ ।।

देवियो द्वारा माता की सेवा—

इन्द्रादिक आव्या कीघू गर्म कल्याण ।
मति थोडी सारु सु करीये रे ते वखाण ।। १६ ।।

गया हरि निज थानकी भू की छपन कुमारी ।
जिन माय तणी सेवा करवा मनोहारी ।। १७ ।।

एक नित नहरावे, एक पखाले पाय ।
एक वीजणडे चटकावे सटके नाखे वाय ।। १८ ।।

एक वेणी समारे, नयणे काजल सारे ।
एक पीयल काढे एक अमरी सणगारे ।। १९ ।।

एक चोसर गू थे, एक आपे तबोल ।
एक पगते पीले, कुकम सु रग रोल ।। २० ।।

एक आछा अवर पहरावे सुरनारी ।
एक नलवटि केशर तिलक करे ते समारी ।। २१ ।।

एक रयण अरी सो देखाडे जिनमाय ।
एक वेणवजोडे एक सु कठि गाय ।। २२ ।।
एक नवरस नाटक नाचे ने नव रगे ।
एक वात कथारस कहे सकल सहेली सगे ।। २३ ।।
इम हसता रमता पूगाते नवमास ।
मधूमासे जनम्या पहोती सहुनी आस ।। २४ ।।

ढाल दो

इन्द्र एवं देवताओ द्वारा जन्माभिषेक .

आसन कपीया इन्द्रनाए, जाणीयो जिन तणो जनम ।
नमो नमो जय जिणंद ।। १ ।।
इन्द्र एरावण गजि चढ्या ए ।। साथि चाल्या सुरवृ द ।। नमो० ।। २ ।।
मरुदेवि मदिर आगणेए, आवीया सकल सुरेन्द्र । नमो० ।। ३ ।।
इन्द्र आदेश लेई सचीडए, गई जिन मातनें पास । नमो० ।। ४ ।।

आणीया जिन जी इन्द्राणीइए, आपीया इन्द्र तें हाथि । नमो० ॥ ५ ॥
इन्द्रे उसगे बैसारीयए, चामर छत्र सोहृत । नमो० ॥ ६ ॥
आगीले अमर विलासनीय, नाचती धरीय आणद । नमो० ॥ ७ ॥
धवल मगल बहु मगल गावतीय, वाजता वाजिअ्र कोडि । नमो० ॥ ८ ॥
मेरु शिखरे पधरावीयाए, कीधलु जनम विधान । नमो० ॥ ९ ॥
क्षीर सागर तणे जले भरयाए, कनक कलश सुविसाल । नमो० ॥ १० ॥
जिन प्रभु उपरि ढालीयाए, नहवण करयु मनरगी ॥ नमो० ॥ ११ ॥
जय जयकार अमर करे ए, दीधलूं वृषभ जी नाम ॥ नमो० ॥ १२ ॥
अमल अवर मणि मण्डनेए, शचीये करो सणगार ॥ नमो० ॥ १३ ॥
रूप अनूपम पेखतीए, नयण नृपति नवि थाय ॥ नमो० ॥ १४ ॥
जन्म महोछव हरी करीए, हृयडलें हरष न माय ॥ नमो० ॥ १५ ॥
मेरु थकी ते पाछा वल्याए, आविया जिनपुरी चन्द्र ॥ नमो० ॥ १६ ॥
जिन प्रभु जननी नें आपीयाए, स्तुति करी गया सुरराज ॥ नमो० ॥ १७ ॥
जनम महोछव जिन तणोए, हरषीया सूरि कुमुदचन्द्र ॥ नमो० ॥ १८ ॥

ढाल तीन

बाल क्रीडा—

आवो रे जोवा जइये, सखि मरुदेवी मल्हारे रे ।
गुण सागर रलिआमणो, ए त्रिभुवन तारणहार रे ॥ १ ॥

सो सूरज सो चादलो, स्यो रतिराणी भरतारे रे ।
सुर नर किन्नर मोही रह्या,
काई रूप अनोपम सार रे ॥ २ ॥

सोहासणि सुर सुन्दरी, जिन हरषधरी हुलरावे रे ।
भामण्डलि भामिनी, काई गीत मनोहर गावेंरे ॥ सो० ॥ ३ ॥

रमत करावें रगस्यु, सुरनारि के सिणगारे रे ।
दे आशीस ते रुअडी, तुं जय जय जगदाधारे रे ॥ सो० ॥ ४ ॥

दिन दिन रूपे दीपतो, काई बीज तणो जिम चन्दरे ।
सुर बालक साथे रमे, सहु सज्जन मनि आणदरे ॥ सो० ॥ ५ ॥

सुन्दर वचन सोहामणा, वोले वादुयडो बाल रे ।
रिम झिमवाजे घूघरडी, पगे चाले बाल मरालरे ॥ सो० ॥ ६ ॥

जीन सेहेजे विद्या सीखीयी,
काई सकल कला गुण जाणोरे।
योवन वेस विराजता, काई तेजे जीत्यो भाण रे॥ सो० ॥ ७॥
एक समे सुत देखीने, नाभि राजा करे विचार रे।
रिषभ कुवर परणावीयो,
जिन सफल थाये अवतार रे॥ सो० ॥ ८॥
त्यारि बोल्या नाभि नरेन्द्ररे, तेडीय मन्त्री आणदरे।
मझ मनें एह्वो उमाहरे, कीजे रिषभ विवाहरे॥ ९॥
जो जो कन्या सुगुण सुहपरे, इम कही रह्या भूप रे।
वचन चवें परधान रे, साभलो चतुर सुजाण रें॥ १०॥
कछ महाकछ रायरे, जेहनू जग जस गायरे।

यशोमति सुनन्दा की सुन्दरता

तस कुअरी रूपे सोहेरे, जोता जन मन मोहेरे॥ ११॥
सुन्दर वेणी विशाल रे, अवर शशि सम भाल रे।
नयन कमल दल छाजेरे, मुख पूरण चन्द्र राजे रे॥ १२॥
नाक सोहे तिलनु फूल रे, अवर सुरग तणू नही मूल रे।
थन थन कनक कलश उतग, उदरे राजे त्रीवली भग रे॥ १३॥
वाहूलता लात्री लेह केरे, हाथे रातडि रुडी झल केरे।
कुच कदली सरखी चगरे, पगपानी अलतानो रग रे॥ १४॥
रूपे रम्भ हरावी रे, जेहने तोले रति पणनावे रे।
प्रथम यशोमति नाम रे, वीजी सुनदा गुण अभिराम रे॥ १५॥
तेहने रिषभ कुअर परणावोरे, मोकली माणस नरत करावो रे।
एह विचार सभा मन भाव्योरे, ततक्षण वाह दूत चलावो रे॥ १६॥
तेणे जइ विनवीया राय रे, वात साभलता हरष न माय रे।
हरष्या अंतेउर परिवार रे, सज्जन कीधो जय जय जयकार रे॥ १७॥
कीधू विवाह वचन प्रमाण रे, चर्रो आप्यु कुलट दान रे।
वेहेलो दूत जइने आव्योरे, पाणी ग्रहण वधामणी लाव्योरे॥
जय जय रतन कीरति मुनिन्द्ररे, पाठ कमल रवि कुमुदचन्द्र रे॥ १८॥

पाचवीं ढाल

हवि साजन सहू नहोतरीग्रा ग्राव्या परवारे परवरीया ।
इन्द्र ग्राव्या तेध सप्त सता, सूर गुरुनें साथे हसता ।। १ ।।

विवाह मण्डप

ग्रावी इन्द्राणी सूरनारी, करे हास विनोद ते भारी ।
चारु मण्डप जन मन मोहे, वहू मूल चन्दु रुग्रा सोहे ।। २ ।।
टोडे तलीग्रा तोरण ते लहे के, हेम थभ तेजें वहु झलके ।
वेदी वारु करीने समारी, चोरी चित्र महा मनोहारी ।। ३ ।।
दीशे चारु मोतिनि माला नाना रयणनो झाक झमाला ।
रभा रोपि मण्डपनें ग्रागलि, पवने फरके ध्वज ग्रावलि ।। ४ ।।
हवे जमणवार सामल ज्यो,
चित देह उरग्रा लोमा करज्यो ।
पील्या चोषा कचोले भरीया सकट बासहु नोहु वरीग्रा ।। ५ ।।
ग्रागणे मण्डप सुविशाल, घेरि च्यार पासे पटशाल ।
तिहा चतुर सोहासणी नारी, माड्या वेशणा ते महु हारी ।। ६ ।।
मोटा पाटला नही डग डगता, सोहेते कीया वेपासे लगता ।
माडी ग्राडणी रूपा केरी, थाली वावन पलनीशुनेरी ।। ७ ।।
मूक्या रजत कचोला ग्राणी, सोहे मखर सुनानी चलाणी ।
चारु विनय करि तेडावीजे, चालो चालो ग्रसूरन कीजे ।। ८ ।।
देव पूजीया प्रथम ग्रघोली, ग्राव्यु साजनु सहुमली टोली ।
वर चित्र पीताम्वर पेहेरी, हाथे झारी सोहे रूपेरी ।। ९ ।।
पग धोई करीनि लगतें, वेटु साजनु ते यथा युगतें ।
च्यार भीज भली परि वेठी, श्रीसवामि पदमनि पेठी ।। १० ।।

विविध प्रकार के स्वादिष्ट व्यजन

ग्राप्या हाथ परवालवा नीर, प्रीसे नारी नवल पेहेरी चीर ।
साजा पाजा ताजा घी गलता,
फीणो फीणी डोठा परिमलता ।। ११ ।।
देखीहे समीहे इट्टू हीसे,   वेसणीये   जलेवी प्रीसे ।
रढि लागे घेवरनें दीठा, कोलहापाक पतासा मीठा ।। १२ ।।

दूध पाक चणा साकरीया, सारा सकरपारा कर करीया ।
कोटा मोति अमोदक लावें, दलीया कसमसीआ भावे ॥ १३ ॥

अति सुरवर से वरुआ सुन्दर, आरोगे भोग पुरन्दर ।
प्रीगे पापड मोटा तलीया, मुरी आला अति उजलिया ॥ १४ ॥

सीरे सरसीयें राई दीधी, मेल्हे केरी अथाणे कीधो ।
आप्या केर काकड स्वाद लागें,
लिंबू जमता जीभ रस जागें ॥ १५ ॥

नीलू आतीला छम काव्या, मू की तेल मरी झम काव्या ।
घी सोडा घणू करी छोल्या, लावी चीरी करीने मोल्या ॥ १६ ॥

रूडो राइये वघारते दीधो, रसनाइ भल्यो रसलीधो ।
भगी आदाल्हो लवधरी, जमता फली लागे सारी ॥ १७ ॥

वृताकनु शाक समार्यू, राइ तुम घरे हृहि वास्यू ।
लावे सेवनु नाई सटके, खांड खोबा भरि मूके लेखे ॥ १८ ॥

मांमा करता नामे घी खलके, भर्या डावरिया ते झलके ।
माडा मोटी मोठि क्षीर पाली,
जमे रसिया झबोली झबोली ॥ १६ ॥

तली वेढमीये वाकटाल्यो, मन गमते वडे आक वाल्यो ।
लांपसीये मन ललचाये, घारी पूरीयें नृपति न घायो ॥ २० ॥

रायभोग कमोदनो कूर, जीरा साल सुगधनो पूर ।
चोखी दाल तूव परिनी सोहे, टू न सरपी पीली मनमोहे ॥ २१ ॥

वार बाट राईत मतमता, कढी माहि मरीचमचमता ।
पांका कूट जीरा सु वघारया,
बीजा शाक ते आगलू हास्या ॥ २२ ॥

सथरा दही कातली आला, घोलुआ मोहि लवण जीराला ।
दुध कढी आचलाणी भरीया, गले घट घट ते ऊतरीया ॥ २३ ॥

चलु लीधा पछे सहु साथे, मुख -शुद्ध करी- सली हाथें ।
आव्या माडवे साजनु हसता, वारें वारें वषाण ते करता ॥ २४ ॥

खेर सार सोपारी ते रग, पानएलची सखर लविंग ।
मांहि मुं क्यू कपूरव रास, जिन आवे मोटे रुडो वास ॥
पछे आड अनूपम कीधी, नाभि राजायें आग्यना दीधी ॥ ढा ॥ २५ ॥

छठवीं ढाल

जिन इन्द्राणीये नह्वारावीया, पछे कीधोरे वरनें सिणगारके
वर वारु सोभतो ।। १ ।।

आदिनाथ का शृंगार

माथे रेपूव भर्यो भलो, रुडु नलवटेरें सोहे तिलक अपार के ।। २ ।।
आंखिरे काजल सारीआ, गालें कीधलु रे रक्षानु इधाण के ।। ३ ।।
कान रे कुडल झलकता, तेजे जितीआरे पूरण शशि भाण के ।। ४ ।।
वाजु-प्रबध विराजता, हइये लहेक तोरे मणि मोतीनो हार के ।। ५ ।।
हाथें वाधी रुडी राखडी, आगलीये रे घाल्या वेढवे च्यार के ।। ६ ।।
केडें कगीदोरो वेसतो, पगे झाझरे करे रण झणकार के ।। ७ ।।
सेहे जे रुप सोहामणु, वलीये हस्यारे बहु भूषण सार के ।। ८ ।।
रूपेरे त्रिभुवन मोहीउ, हवे करीयेरे वली घणु सु बखाण के ।। ९ ।।
इद्र अमरी मलु साजनु, आडि चादलोरे करे सजन सुजाण के ।। १० ।।
केशरना कर्या छाटणा, वली छाटेरे ते गुलावना नीर के ।। ११ ।।
फोफल पान आये घणा, मरदनी यारे नाखे शीतल समीर के ।। १२ ।।

सातवीं ढाल

इन्द्र - अणाव्योरे घोडली सोहे ।
पचवरण वारु अग ।। रिषभ घोडे चढे ।। १ ।।

विवाह के लिए घोडी पर चढ़ना

जोवा मलीया छे आसुर नर वृन्द । रिषभ घोडे चढे ।। २ ।।
कनक पलाण विराजतु, जेर बन्ध अनोपम तग ।। रिखभ ।। ३ ।।
चोकड ले चित चोरीयु, गेले रण झणकतो चग ।। ४ ।।
रग विरग सोली घणी, जग मोहे ते वाग अमूल ।। ५ ।।
रत्न जडयु मषीआ रड्यु वचे झलके सु नाना फूल ।। ६ ।।
शीस भरीरे सोहासणि, सोहे सुन्दर श्रीफल हाथ ।। ७ ।।
इन्द्र प्रभूकरि लीधला, घोडे सटक चढ्या जगनाथ ।। ८ ।।
मायेरे छत्र विराजतु, हरि ढाले चमर वेहु पास ।। ९ ।।
लुण उतारति वेहेनडी, सहु विघन गया ते नासि ।। १० ।।

एरावरण सरणगारियो, चाल्यो आगल झाक झमाल ॥ ११ ॥
कोटेंरे घटारण कति वाजे, घम घम घूघर माल ॥ १२ ॥
अमर अमरी नाचे रगसु, माहो माहि करे घणी केलि ॥ १३ ॥
गध्रव राग करे घणा, वाजे ताल-परवालज मृदग ॥ १४ ॥
वाशंलि वेण मनोहर वाजे नाना छन्द सुरग ॥ १५ ॥
ढोल दमा मारे गड गडे, रुडा सारणाइ नासाद ॥ १६ ॥
वाजे पच सवद ते सोहामणा, आहे तवलन फेरीना नाद ॥ १७ ॥
भूगल मेरी मदन भेर, ते साभलता सुख थाय ॥ १८ ॥
भाट भरणे वीरदावली, त्यारि दान अनेक देवाये ॥ १९ ॥
रग विरग वे साजनु, तीह सावे लानो पार ॥ २० ॥
इम उछव करताते घणो, वर आवीयो तोरण वार ॥ २१ ॥
दोखी उलट मन मो घरे, वहु भव्य कुमुदचन्द्र राय ॥ २२ ॥

आठवीं ढाल

विवाह

मोड इन्द्राणीए वाधीयोए, नीमालीरे पोकीआ अरघीया देव ।
साहेलीयेपो कीया आरधीया देव,
नाक साही वर निरखीयोए ॥ १ ॥
घाट घाल्यो तत क्षेव, माहि दामाहि वेसारीए ॥ २ ॥
अन्तर पडघरु जाम, कन्या वेसारिए वीजटिए ॥ ३ ॥
लगन वेला थइ नम, सकल आचार गुरुयें करयोए ॥ ४ ॥
काली गाँठी सावधान हस्ते मेला · वहवोए ॥ ५ ॥
कीधला अवर विधान, देव वाजिअ ते वाजीआए ।
फुलनी वृष्टि अपार गीत गाये सुन्दरी ए ॥ ६ ॥
सुर करे जय जयकार, चोरीये रीति सहु कीधलीए ।
वरतीआं मगल च्यार, विनम वारु कस्यो जुगतिसु ए ॥ ७ ॥
आपीयां अढलिक दान, लोक व्यवहार ते सहु कर्यो ए ॥ ८ ॥
सज्जन दीधला मान, अधिक आडम्बर आवीआ ए ॥ ९ ॥
वहुयर आपरणे घेरि, मनना मनोरथ सहु फल्याए ॥ १० ॥
उछव थयो भलिपेरि, इन्द्र उछव करि घरि गयाए ॥ ११ ॥
मन माहि हरप न माय हास विनोद करे घणाए ॥ १२ ॥
राज्य करे जिन राय, ताहेलीये कीया, अरधीया देव ॥ १३ ॥

नवीं ढाल

आदिनाथ का परिवार

पाले अनूपम न्यायरे जोन्हा सेवे सुरनर पाय।
त्रिण भुवन जस गायके, अभिनवो राजीयोरे ॥ १ ॥

भोगवे मनोहर भोगरे, नाना विध सुख सयोग।
धन धन कहे छे सहु लोग के, जगे जश गाजियोरे ॥ २ ॥

यसोमतीये जाया पुत्ररे भरतादिक सो सुचित्र।
ब्राह्मी तनया पवीत्र के, जगमाहि जाणीयेरे ॥ ३ ॥

बाहुबली बलवन्त रे, सुन्दरी वेहनें सोहत।
जनम्यो सुनन्दायें सतके, रूप वरवाणीयेरे ॥ ४ ॥

सेवे त्रिभुवन सर्व रे मन माहि न धरे गर्व।
त्र्याशी लाख पूरब के, व्येल्या भोगसु ए ॥ ५ ॥

चिन्तन एवं वैराग्य

एक समयते भूपरे, दीखी नीलजश रूप।
जाणी अथिर सरूप के, मन धर्यु योग स्यु रे जी ॥ ६ ॥

धिग धिग एह संसार रे, बहु दुख तणो भण्डार।
जुठो मल्यो सहु परिवार के, को केहु नही रे ॥ ७ ॥

राज्ये नहि मुझ काज रे, सु कीजे सेना साज।
भोगे त्रपति न आज के, लग णेवली सहीरे ॥ ८ ॥

क्षण क्षण खुटे आयरे, योवन राख्यु नवि जाय।
स्यु कीजे महीराय के, तणी पदवो भलीरे ॥ ९ ॥
कालें पडसे कायरे, नहि रासे वापने माय।
न थसें कोइ सहाय के, नरक जता वली ॥ १० ॥
नाना योनि मझार रे, भमीयो भव धणी एक वार।
न लह्यो धर्म विचार के, लोभ न पर हर्यो रे ॥ ११ ॥
नही पालो व्रत आचार रे, जीव कीधा पाप अपार।
विषय वलुधो गमार के, हा हुतो फर्यो रे ॥ १२ ॥
इम धरी मनें वेराग रे, कर्यो मोह तणो परित्याग।
कोसु लाग न भाग उदासी जिन थयो रे ॥ १३ ॥
भरत ने आप्यू राजरे, महिपतिनु मुक्यु साज।
चरित्र लेवाले काज के, अखय वडे गयारे ॥ १४ ॥

दसवीं ढाल

तपस्या

च्यार हजार राजस्यु ए, माल्हतडे लीधलो सयमचार।
सुणों सुन्दर, लीधलो सयमभार ॥ १ ॥
राज मुक्यु अण लोकनुए ॥ मा ॥ सफल कीधो अवतार ॥ सु ॥ २ ॥
आवीआ इन्द्र आणद सु ए ॥ मा ॥ सुर करे जय जयकार ॥ सु ॥ ३ ॥
जय जग जीवन जग धणीए ॥ मा ॥ जय भय सागर तार ॥ सु ॥ ४ ॥
त्रीजु कल्याणक तपत तणु ए ॥ मा ॥
करि गया हरि सुरलोग ॥ सु ॥ ५ ॥
सयम लेइ छमासनोए ॥ मा ॥ लीधलो स्वामीये योग ॥ सु ॥ ६ ॥
पारणें भामरें उतार्याए ॥ मा ॥ कोइ न जाणें आचार ॥ सु ॥ ७ ॥
इम करता छह महीना गयाए ॥ मा ॥ नही मलें शुद्ध आहार ॥ सु ॥ ८ ॥
एकदा ढेचरी ने गयाए ॥ मा ॥ श्रेयास रावने धामि ॥ सु ॥ ९ ॥
आहारनी प्रगति दीठी भली ए, तिहा रह्या त्रिभुवन स्वामि।
एक वरसें कर्यू पारणु ए, ईक्षुरस अमीय समान ॥ १० ॥

आहार

लेइ आहार जिनवरे कर्यु ए ॥ मा ॥ रुयडलु अक्षयदान ॥ सु ॥११॥
श्री जिनवर पछे वने गया ए ॥ मा ॥ योग लीयो अणकाल ॥ सु ॥१२॥
वार प्रकारे तप करे ए ॥ मा ॥ जिम आहारनु यू गति दीठी ॥ १३ ॥
तिहा रह्या त्रिभुवन स्वामी सू टल कर्म जजाल ॥ १४ ॥
ध्यान धरे अति नीर्मलुए ॥ मा ॥ अचलमन मेरु समान ॥ सु ॥ १५ ॥

कैवल्य प्राप्ति

घातीया कर्म्मनो क्षय करीए ॥ मा ॥ अपनु केवल ज्ञान ॥ सु ॥१६॥
समोसरण अमरें रच्यु ए ॥ मा ॥ वार सभाने सोहत।
धर्म उपदेश दे उजलोए ॥ मा ॥ सुरनर चित मोहत ॥ सु ॥१७॥

निर्वाण

विहार करीनें सवोधर्याए ॥ मा ॥ भव्य प्राणी तणा वृद ॥ सु ॥१८॥
अचल अष्टापदे जाइ चढ्याए ॥ मा ॥ केवली आदि जिनेंद्र ॥ सु ॥१९॥
तिहा जई स्वामीयें टालीयु ए ॥ थाकता कर्म नु नाम ॥ सु ॥२०॥
निर्वाण कल्याणक सुर करु ए ॥ मा ॥ पामीया मुगति वर ठाम ॥ सु ॥२१॥

रचनाकाल एव रचना स्थान :

सवत सोल अठ्योतरे ए ॥ मा ॥ मास आषाढ घनसार ॥२२॥
उजली बीजरलीया मणीए ॥ मा ॥ अतिभलोते शशिवार ॥ सु ॥२३॥
लक्ष्मीचन्द्र पाटें निरमलाए ॥ मा ॥ अभयचन्द्र मुनिराय ॥ सु ॥२४॥
तस पदे अभयनन्दि गुरुए ॥ मा ॥ रत्नकीरति सुभकाय ॥ सु ॥२५॥
कुमुदचन्द्रे मन उजलेए ॥ घोघा नगर मझारि ॥ सु ॥२६॥
रिषभ विवाहलो कीवलोए ॥ मा ॥ सीखसेजे नर नारि ॥ सु ॥२७॥
तेहने घरें आणंदह स्येए ॥ मा ॥ पोहोचसे मनतणी आस ॥२८॥
स्वर्ग तणा सुख भोगविए ॥ मा ॥ पामसे मुगति विलास ॥ सु ॥२८॥

इति ऋषभ विवाहलो समाप्त ।

नेमिनाथ का द्वादश मासा

(३)

आषाढ मास

मास आसाढ सोहामणो जी घन बरसे घोर अधकार जी ।
नीदयें नीर वहे घणा बारु मोर करे किगार जी ॥ १ ॥
मदिर आवो मोहन मुझ उपरि धरिय सनेह जी
एकलडी घरि किम रहु माहरी पल पल छीजे देहजी ॥ २ ॥

सावन मास .

श्रावण नाखे सरवडा त्यारि थर थर धूजें शरीर जी ।
राति अधारि झूरता किम करी मनि धरी वीर जी ।
मदिर ॥ ३ ॥

भाद्रपद मास

भाद्रवडो भरि गाजियो लवे बीजली वारो वार जी ।
त्यारि सांभरे वारो वार जी त्यारि साभरे प्राण आधार जी ॥ ४ ॥

आसोज मास .

आसो दिवस सोहामणो, नही कादवनो लवलेश जी ।
वाटलडी रलिया मणी, किम नाविया नेम नरेश जी ॥ ५ ॥

कार्तिक मास

कातिय दिन दिवालिना सखि घरि-घरि लील विलास जी ।
किम करु कत न आवियो ह्वेस्यु करिये घरि वासि जी ॥ ६ ॥

मगसिर मास ·

मागशिरे मन नवि रहे, किमकरि मोकलू संदेस जी ।
मनि जाणू जे जई मिलू, घरि योगण करो वेस जी ॥ ७ ॥

पोष मास

पोसिउ सपडे घणी पीउडें माग्यो तप सोस जी ।
कोणस्यु रोस घरी रहु , करमने दीजे दोस जी ॥ ८ ॥

माघ मास

माहि न आणी मोहनी, किम निठोर थया यदुराय जी ।
प्रेमे पधारो परुहणा, हु लागु हु लालन पाय जी ॥ ९ ॥

श्रावण मास

फागुण केसू फूलियो नरनारी रमे वर फाग जी।
हास विनोद करे घणा, किम नाहे धर्यो वेराग जी ।। १० ।।

चैत्र मास :

कोयलडी टहूका करे, फल लहे अम्बा डाल जी।
चैत्रे चतुर चित चालिये, किम तजीइ अवला काल जी ।। ११ ।।

वैशाख मास

वैशाखें तडको पडे लयु, दाझे कोमल काय जी।
ते माटियाउ धारिये एह योवन्या दिन जाय जी ।। १२ ।।

जेठ मास .

नीट जेठोडी नवि रहे, घरि पथियडा सहु आवे जी।
नेमि न आव्या किम करु, मुन्हे घरियण न सुहावे जी ।। १३ ।।

उजल जिन जर चढ्या, रह्या ध्यान विषय वितलायजी।
जय जय रत्नकीर्ति प्रभु, सूरी कुमुदचन्द्र वलि जाय जी ।। १४ ।।

(४) नेमिश्वर हमची

श्री जिनवाणि मनि धरु रे, आपो वचन विलास।
नेमिकुमर गुण गायस्यु तो, हैडे धरी उल्हास ।। हमचडी ।।

हमचडी हलि हेलि रे, घरि करिये नवरग केलि।
राजमती वर नेमिकुमरते, गाता मनि रग रेलि रे ।। १ ।।

हमची हमची सहिय साहेली, आवो करि सिणगार।
समुद्र विजय सुत रगे गाइये, जिम तरीये ससार रे ।। २ ।।

सोरठ देश सोहामणो रे, वन वाडी आराम।
गोधन कलि करता दीसे, रधिया रुडा गाम रे ।। ३ ।।

निरमल नीर भर्या ते सरोवर, फूल्या कमल अपार।
परिमल ना लीधा ते भमरा, उपरि करे गुजार रे ।। ४ ।।

सुन्दर सोहे सारडा रे, बगला वेठा टोले।
हंसा हसी केलि करता, चकवा चकवी बोले रे ।। ५ ।।

वाटलडी रलिया मणी रे, पथियडा पथि चाले।
सघल मीस सोहामणी तो, अणगमतु नही चाले रे ।। ६ ।।

ते माहि नवरगी नगरी द्वारवती वर ठाम।
गढ मढ मदिर मालियडा, तो निरखता अभिराम रे ।। ७ ।।

जेहनें पासे सागर राजे, गाजे कुल कल्लोल।
मणि मोती पर वाली भरीयो जल चरना झक झोल रे ।। ८ ।।
राज करे तिहा राजीयो रे, रूपे रति भरतार।
साभलियो वलियो अति, कलियो पातलियो सकुमाल रे ।। ९ ।।
अण्य खण्ड नो राणो जाणो, नारायण तस नाम।
वलभद्र वन्धव मनी सोहे, सोभागी गुण धाम रे ।। १० ।।
नेमि कुवर स्यु प्रेम धरता, करता क्रीडा हासु।
अह निसि गीत विनोद वहता, घडियन मुंके पासु रे ।। ११ ।।

वनक्रीडा के लिए जाना

तेह तणी रमणी सुर रमणी सारखी सोलह हजार।
तेहस्यु हास विलास करता, सफल करे अवतार रे ।। १२ ।।
एहवे शरद समे ते आव्यो, खेले अवला वाल।
निरमल कमल–कमल वन सोहे, वोले वाल मराल रे ।। १३ ।।
त्यारि नेमि कुअर कान्हुयडो, वलग हलधर हाथि।
सत्यभामा रा हीने रुखमणी, अतेउर सहु साथे रे ।। १४ ।।
वन क्रीडा करवाने चाल्या, वाटे रमता रहेता।
मनरगे मनोहर नामे, कमला कर जई पुहता रे ।। १५ ।।
झटकेस्युं झीलीनि कलिया नेमिकुवर ने पहेला।
मोतियडु नाखी ने पहेर्या वीजा अवर हेलारे ।। १६ ।।
हसता हसता टोलि करता नेमिकुअर महाराजे।
पोतीयहुनी चोवा आप्पु सत्य भामा ने काजेरे ।। १७ ।।
ते तो रीस करनी वोली, सत्यभामा अति गहेली।
एवहूं हांसू न कीजे मझस्यु हूं पटराणी पहेली रे। १८ ।।
जेणे सारिंग धनुष चढाव्यु, हेला शख वजाड्यो।
नागतणी सेजडियें सूतो, नागिनही वीहाड्यो रे ।। १९ ।।
तेहनू पोतीयडु नीचोऊ अवर न जाणू कोई।
मोटा सरिसू मान न कीजे, मनस्यु विमासी गोई रे ।। २० ।।
नेमिकुमारे साभलीयू रे, तेहनू वचन अटारूं।
मनस्यु एह विचार कर्यो जी, एहनु मान उतारो रे ।। २१ ।।
तिहां थकी ते पाछा वलिया आव्या नगर मझारि।
नेमिकुअर आयुधशालाई पेठा मच्छर भारि रे ।। २२ ।।

नेमिनाथ द्वारा शस्त्र बल दिखाना

सटकें धनुष चढाव्यु लटके, नाग शय्याइ सूता।
पूर्‌यो शख निशक करीने, लोग कर्‌या भय भूता रे ॥ २३ ॥
तरु कटू कडीया गोपुर पडिया गढ मोटा गड गडिया।
भट भट्ट भडिया भय लड थड़िया, दो गति दड वडिया रे ॥ २४ ॥
गिरि थर हरिया फणि सल सलिया कायर ते कणि करणिया।
सुर खल भलिया ससि रवि चलिया, सायर ते झल हलियारे ॥ २५ ॥
फूटा मान सरोवर मोटा, वचचर सघला नाठा।
हण हणता हयवर ते छुटा माता मयगल त्राठा रे ॥ २६ ॥
राज सभाई वैठो राजा, साँभलि ने कल मलियो।
नगर विषै कोलाहल करीयो कोण महीपति वलिथोरे ॥ २७ ॥
तेहनू वचन सूणी वलभद्रे बल तो उत्तर दीधो।
सत्यभाभा ना वचन थकी ए, नेमिकुमारे कीधु ॥ २८ ॥
त्याहारि ते मन माहि सक्यो कीघो मनस्यु विचाँर।
राजा अहमारु लेस्ये वलियो, करस्ये मान उतार रे ॥ २९ ॥
बलंता हलघर वधव बोल्या ए राजेस्यु करस्ये।
वर वेराग तणू ए कारण, पामीय सयम लेस्ये रे ॥ ३० ॥
ते सामलीने मनस्यु रचीयो सयम लेणा सच।
उग्रसेन कु अरिस्यु कीधो, तस ह्वीह्वा परपचारे ॥ ३१ ॥
घरि आवीने मण्डप रचियो सज्जन सादर करीया।
छप्पन कोडि यादव नो हतरिया परिवारि परिवारिया रे ॥ ३२ ॥
जमणवार कीधी ते युग ते, सतोख्या नरनारी।
जान जवाने काजि केहवी, नादरणी सिणगारि रे ॥ ३३ ॥

राजमती का सौन्दर्य

रुपे फूटडी मिन्ने जूठडी, वोले मीठडी वाणी।
विद्रुम उठडी पल्लव गोठडी, रसनी कोटडी वरवाणी रे ॥ ३४ ॥
सारग वयणी सारग नयणी, सारग मनी श्यामा हरी।
लकी कटि भमरी वकी, शकी हरिनी मारिरे ॥ ३५ ॥
सिथडलो सिंदूरे भरियो, केसर टीला करिया।
पानतणी वीडीयें मुखडा, भरिया ते रग बग्यिा ॥ ३६ ॥
झग मग कानि झालि झवूके, उगनिया नग जडिया।
अवला सवला नाग वलाया, सु दर सुनें घडिया रे ॥ ३७ ॥

वाडि भरी राख्या ए म्याहने, पूछु ते जग दीणो।
तह्य गोखनें कारणि स्वामी, ते सघाला मारीसेरे ॥ ६८ ॥
तेहनू वचन सूणी ने स्वामि, मन माहि कल मलिया।
धिन धिग परणे व ने माथे नेमिजी पाछा वलिया रे ॥ ६९ ॥

नेमिनाथ का वैराग्य

मन माँहि वेराग धरीने, मूक्यो सहु ससार।
नेमिकुयर सयम लेवाने, जई चढिया गिरनारि रे॥ ७० ॥
सहसा वन मा सयम लीवू, कीघू ग्रातम काज।
त्यारि तप कल्याणक कीधु ग्राव्या ते सुरराज रे ॥ ७१ ॥
कोलाहल वाहिर साभलिने, सुंसु करती रठी।
पूछी सजनी वल तुं वोली, नेमि गया गिरि रूठी रे ॥ ७२ ॥
तेडे वचने पुहवीतलि, लोटे जग ग्रछाडे।
हैहूताडे चोली फाडे, रडती गढि ग्राडेरे ॥ ७३ ॥

राजुल का विलाप

रोसें हार एकावल ग्रोटे, चटकें चूडी फोडे।
ककण मोडे मन मचकोडे, ग्रापण पू व खोडेरे॥ ७४ ॥
केमे ग्रणगल पाणी नाख्या, के तरु चोडी डाल।
साघु तणी निंद्या में कीधी, जूठा दीधा ग्राल रे ॥ ७५ ॥
के मे रजनी भोजन कीधा,के में उवर खाधा।
के मे जीव दया नही पाली, वन माहि दव दीधा रे ॥ ७६ ॥
के मे वहुयर वाल विछोह्या, के में परधन हरिया।
कद मूलना' खयण करिया कि मे व्रत नही धरिया ॥ ७७ ॥
के में कूडा लेखा कीधा, खोटीं माया माडी।
छाना पाप करया ते माटे, नेमि गया मझ छाडी रे ॥ ७८ ॥
इम कहेती लडथडती पडती, ग्रडवलती वल वलती।
ग्र ग वलू रे मनस्यु झूरे, ग्राखि ग्रासू ढलती रे ॥ ७९ ॥
लावी नहीं बोले वाला रातिपण नवि सूये।
मनुस्यु भूख तरस नही वेदे, जिन जिन जपति रोवे ॥ ८० ॥
किम करी दिननि गमस्यु पीउडा तुम पाखि कम करस्यु।
जिम जल पाखे माछलटी तिम विलखी थइने मरस्यु रे ॥ ८१ ॥
वाडि विना जिम वेलि न सोहे, ग्रर्थं विना जिम वाणी।
पडित विन जिम मभा न सोहे, कमल विना जिम पाणी रे ॥ ८२ ॥

राजा विण जिम भूमि न सोहे, चद्र विना जिम रजनी ।
प्रीउडा विन जिम अवला न सोहे, साभलि मोरी सजनी ॥ ८३ ॥

ते त्याहिरि सजनी ते बोली शोक न कीजे गहेली ।
एह थी रुडो वर परणावू उठिखूसी था वहेली रे ॥ ८४ ॥

राजीमती वल तीते बोली, फटि मु डीस्यु बोली ।
नेमि विना नर सघला बीजा, माहरे बधव तोले रे ॥ ८५ ॥

सहीयर सहू समभावी थाकी ते मनमा नवि आवे ।
उजल गिरि जई सयम लीधु, ते सघलो जगि जाणे रे ॥ ८६ ॥

राजीमति ते व्रत पाली ने, पहोती स्वर्ग दुवारि ।
नेमि जिनेश्वर मुगति गया ते, कुमुदचद्र जयकारे रे ॥ ८७ ॥

भट्टारक श्री कुमुदचद्र कृत श्री नेमिश्वर हमची गीत समाप्त

राग मारुणी गीत : (५)

गीत

नेमजी ने वालो रे भाई, जादव जीने वालो रे भाई ॥
हु तो योवन भरि किम रहेस्यु रे, बलि विरह तणा दुख सहेस्यु रे ।
घरि कोण थकी सुख लहेस्यु रे, हसी वात कोह्न जइ कहेस्यु रे ॥ १ ॥
तह्मे जूउ जूउ मनस्यु विचारी रे कोई नारि तजै निरधारी रे ।
पूछो वाटे जता नर नारी रे, कोई कहेस्ये ए बात न सारी रे ॥ २ ॥
तु तो त्रण्य भुवन केरो राणो रे, रखेरी सहैयामा आणो रे ।
अह्मस्यु एवडु तह्मे ताणो रे, अह्मे दासी तह्मारडी जाणो रे ॥ ३ ॥
जूउ आवे छे यादव राय रे, बली रोवे शिवा देवी माय रे ।
विलखी थई पूठई धाय रे, वछ तुझ विना मे न रहे वाय रे ॥ ४ ॥
तह्मे मोहन दीनदयाल रे, तह्मे जीवन दया प्रतिपाल रे ।
किम छाडो छो अवला बाल रे, इणि वाते देसे सहुगाल रे ॥ ५ ॥
तह्मे जग जीवन आधार रे, तह्मे मन वाछित दातार रे ।
ताहरा गुणनो न लाभे पार रे, ताहरा वचन सुधारस सार रे ॥ ६ ॥
ताहरा सुरनर प्रणमे पाय रे, ताहरु नाम योगीश्वर ध्याय रे ।
ताहरा गुण इन्द्रादिक गाय रे, सूरी कुमुदचन्द्र वलि जाये रे ॥ ७ ॥

सार पदकडी कवु कोठडी, मोटडी फूली फावे।
सेस फूलनू मूल न थापे, सिंथडलो सोहावेरे ।। ३८ ।।

भूमकडु भमके ते भाभु, जोता मनडु मोहे।
वारु वीटी मिली अगूठी नल वट टीली सोहेरे ।। ३९ ।।

तपकली पीला रतलिया मादलिया मचकाला।
मोती केरो हार मनोहर भूमकडा लटका लारें ।। ४० ।।

राखडली रढियाली जालि जोता हैडे हरखी।
खीटलडी मीटलडीराखी, खते, जोवा सरीखी रे ।। ४१ ।।

हाथे चूडी रगे रुडी, काकण चागण चोटा।
वाहोडली सरीखा वेहरखडा, मलिया वलिया मोटा रे ।। ४२ ।।
कर करि यालिका रेली रे, मोरली मोहन गारी।
माणिक मोती जडी मनोहर वेसरनी बलिहारी रे ।। ४३ ।।

घम घम घम के घुघरडारे, वीछीयडा ते वाजे।
रमभम रमभम भाभर भमके, का वीपल के राजे ।। ४४ ।।
किसके पहेरण पीत पटोली नारी कुजर चीर।
किसके आछा छापल छाजे सालू पालव हीर रे ।। ४५ ।।
किसके अमरी रग सुरगी किसके नीला कमषा।
किसके चूनडियाला चमके किसके राता सरिषा रे ।। ४६ ।।
किसके पहिरण जाद रचायो किसके चोली चटकी।
किसकी अतलस उची उपे, रग तणो ते कटको रे ।। ४७ ।।
किसका चरणा घुघरियाला, किसका ते वर्षीयाला।
किसका कमल वना कनियाला, किसका ते मतियालारे ।। ४८ ।।
मयगल जिम मलयती वाले, कोयल सादें गाये।
धवल मगल दीये मनरगे, मुनि जनवि चलावे रे ।। ४९ ।।

बारात का प्रस्थान

हयवर गयवर रथ सिणगार्या, पायक दल नही पार।
वाकी वहेले हरि जोतरिया, चग तणो भणकार रे ।। ५० ।।
पालखडी चकडोल सुखासण वेठा भोग पुरन्दुर।
चाली जाँन कर्यो आडवर, मलिया सुरनर किन्नर रे ।। ५१ ।।
समुद्रविजय सिव देवी राणी, हरि हलधर सहु माहे।
नेमिकुमर ने परणावाना भरिया ते उछाहे रे ।। ५२ ।।

नेमिकुयर हाथीयडे चढिया, माथे खुप विराजे।
काने मणि कुडल देखीने, वीर जनीकर लाजे रे ॥ ५३ ॥
वेनडली वेठि ते पासें भाभणडा उतारे।
रूप कला देखी ने जेहनी, रतिपति हैडे हारे रे ॥ ५४ ॥
गाये गीत सोहामणि रे, दीये वर आशीस।
जय जगजीवन वर जय जग नायक, जीवो कोडि वरीस रे ॥ ५५ ॥
धन धन मात पिता मे धन धन, धन धन यादव वश।
जिहा जग मडण भव भय खडन, अवतरिया जिन हस रे ॥ ५६ ॥
ढमके ढोल दमामा मद्दल, सरणाई वाजत।
पच शब्द भेरी न फेरी, नादि नभ गाजत रे ॥ ५७ ॥
वाटि हास विनोद करता, चाल्या यादव वृद।
वहेला जई जूनेगढ पहोता, सज्जन मन आणद रे ॥ ५८ ॥
उग्रसेन आदरस्यु साहमू कीधे ते मल भासे।
लाजते वाजते वारू पहोता ने जनवासे रे ॥ ५९ ॥
धसम सती बाई ते त्याहारिं साथे सहीयर वाल्ही।
गोखि चढी ते वन जोवाने, राजामतीमनि ह्याल्ही रे ॥ ६० ॥

बरात देखने की उत्सुकता

राजमती बोली ते त्याहारि, साभलि सहीयर मोरी रे।
जो तु नेमिकुअरि देखाडे, हू वलिहारि तोरी रे ॥ ६१ ॥
चामर छत्र टलेवे पासें रूपे मोहन गारो।
हाथिडा उपरि जे बैठो उपेलो वर ताहरो रे ॥ ६२ ॥
राजीमती ने वचन सुणीने, साहमू जोवा लागी।
नेमिकुयर वर देखि हरषि,प्रेमे मनस्यु जागी रे ॥ ६३ ॥
त्यारिं ते तेडावी माये राजीमती न्हवरावी।
सणगारी सहूने मन गमती, रूपे रभ हरावी रे ॥ ६४ ॥
तेहवे तेज मणी आखडलली बहेल कदेता मटकी।
राजीमतीना मन माहे ते वारे वारे खटकी रे ॥ ६५ ॥
जेहवे लगन समय थयो जाणी, हरषे सहु हल फलिया।
नेमिकुअर परणवा चढिया, साहमासोनी मलिया रे ॥ ६६ ॥
ते देखी मका ता चाल्या, मन माहि चल चलिया।
आगलि थी गाढेगा गरता, रडता पशुआ साभलिया रे ॥ ६७ ॥

राग सारग (६)

सखी री अब तो रह्यो नहिं जात ।।
प्राणनाथ की प्रीत न विसरत, क्षनु क्षनु क्षीजत गात ।। सखी री० ।।१।।
नाहि न भूख नही तिसु लागत, घरहि घरहि मुरझात ।
मन तो उरझ रह्यो मोहन सु सोवन ही सुरझात ।। सखी री० ।।२।।
नाहि ने नीद परती निसिवासर होत वीसुरत प्रात ।
चन्दन चन्द्र सजल नलिनीदल मद मरुत न सोहात ।। सखी री० ।।३।।
गृह आगन नु देख्यो नही भावत दीन भई विललात ।
विरही वाउरी फिरति गिरि, गिरि लोकन ते न लजात ।। सखी री०।।४।।
पीउ विन पलक कल नही जीसकू न रुचत रसिक जु वात ।
कुमुदचन्द्र प्रभु सरसदरस कु नयन चपल ललचात ।। सखी री० ।।५।।

राग सारग (७)

किम करी राखु माहारु मन्न ।
जिन तजी गयो रे सेसा वन्न ।।
मयण वृथा मुन्हे अन्न न भावे, सामलिया वीण झूरू ।
आसडली मुन्हे नेम मलानी कोण जुगति करु पुरु ।। किम० ।। १ ।।
भूपणभार करे अति अगे, काम कथा न सुहावे ।
कुमुदचन्द्र कहे तेम करो जेम, नेमि नवल घर आवे ।। किम० ।। २ ।।

राग मलार (८)

आलीरी आ वरखा रित आजु आई ।
आवत जात सखी तुम की तह्न, पीउ आव न सुध पाई ।।आ०।। १ ।।
देखीत तस भर दादुर दरकारे, वसत हे झरलाई ।
वोलत मोर पपईया दादुर, नेमि रहे कत छाई ।आ०।। २ ।।
गरजत मेह कुदीत अरु दामिनि, मोपे रह्यो नही जाई ।
कुमुदचन्द्र प्रभु मुगति वधुसु, नेमि रहे वीरमाई ।आ०।। ३ ।।

राग नट नारायण (९)

आजु में देखे पास जिनेन्द्रा ।। टेक ।।
सावरे गात सोहामनी मूरत, सोभित सीस फणेंदा ।।आजु०।। १ ।।

२/कमठ माहामद भजन रजन, भविक चकोर सुचन्दा ।
१/पाप तमोपह भुवन प्रकासक उदित अनूप दिनेंदा ।।आजु०।। २ ।।
भुविज दीडिजपति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरवेंदा ।
कहत कुमुदचन्द्र होत सवे सुख, देखत वामानन्दा ।।आजु०।। ३ ।।

राग भैरव (१०)

जय जय आदि जिनेश्वर राय, जेहनें नामे नव निधि थाय ।
मन मोहन मरुदेवी मल्हार, भवसागर उतारे पार ।।जय०।। १ ।।
हेमवरण अति सुन्दर काय, दरसण दीठे पाप पलाय ।।जय०।। २ ।।
युगला धरम निवारण देव, सुरनर किंनर सारे सेव ।।जय०।। ३ ।।
दीनदयाल करे दुख दद, कुमुदचन्द्र वादे आणद ।।जय०।। ४ ।।

राग भैरव (११)

चन्द्र वरण वादो चन्द्रप्रभ स्वामी रे ।
चन्द्रवरण पचम गति पामी रे ।। १ ।।
मोह महाभट मद दल्यो हे लारे ।
काम कटक माहि कीधा जेणे भेला रे ।। २ ।।
विघन हरण मन वाछित पूरे रे ।
समर्या सार करे अघ चूरे रे ।। ३ ।।
घोघा मण्डन चन्द्रप्रभ राजे रे ।
जेहनो जस जग माहि वारु गाजेरे ।। ४ ।।
परम निरजन सुर नमे पाय रे ।
कुमुदचन्द्र सूरी जिन गुण गाय रे ।। ५ ।।

राग कल्याण : (१२)

जन्म सफल भयो, भयो सुकाज रे ।
तन की तपत टरी सब मेरी, देखत लोडण पास आजरे ।।जन्म०।। १ ।।
सकट हर श्रीपास जिनेसर, वदन विनिर्जिते रजनी राज रे ।।
अंक अनोपम अहिपति राजित, श्याम वरन भव जलधियान रे ।। २ ।।
नरक निवारण शिवसुख कारण सब देवनी को हे शिरताज रे ।
कुमुदचन्द्र कहे वांछित पूरन, दुख चूरन तु ही गरीबनिवाज रे ।। ३ ।।

राग कल्याण (१३)

चेतन चेतत किउ बावरे ।
विषय विषे लपटाय रह्यो, कहा दिन दिन छीजत जात आयरे ।। १ ।।
तन धन योवन चपल सपन को, योग मिल्यो जेस्यो नदी नाउ रे ।।
काहे रे मूढ न समझत अजहु, कुमुदचन्द्र प्रभु पद यश गाउ रे ।। २ ।।

राग कल्याण चर्चरी (१४)

थेई थेई थेई नृत्यति अमरी, घुवरी सु घमकार ।
भमरी अमर गण नचावे ।।
सरीगम धुनि सुसप्त स्वर विराज राग रग ।
तान मान मिलित वेणु वसरी वजावे ।।थेई।। १ ।।
घु धुमि धुधुमि ध्वनी मृदग चग तालवर उपाग ।
श्रवण अति सोहावे ।।
जय जिनेश नत नरेश शची सुरचित चारु वेश ।
देश देश कुमुदचन्द्र, वीर ना गुण गावे ।।थेई।। २ ।।

राग कल्याण चर्चरी (१५)

वनज वदन रुचिर रदन काम कोटिरूप कदन ।
श्रृगु सुवचो रटति राज नन्दनी ।। वनज ।। १ ।।
स्वीकृत यदि तज्यते यद्भवति कि कुल धर्म एप इति ।
मुदा निधान तदनु मन्द स्कदीनी ।
कृपा कूप विनत भूप प्रिया धुनानु गृह्यता ।
कुमुदचन्द्र स्वामी मुदा सुधा स्कदनी ।। २।।

राग कल्याण चर्चरी : (१६)

श्याम वरण सुगति करण सर्व सौख्यकारी ।।
इन्द्र चन्द्र मानवेन्द्र वृन्द चारु चचरीक।
चुंवित चरणारवृंद पाप ताप हारी ।।श्याम।। १ ।।
सकल विकट संकट हरन हस तट ।
सुहर्ष कारण शेप अक धारी ।।
पास परम आस पूरी कुमुदचन्द्रसूरी ।
जय जय जिनराज तुं भववारि राशि तारी ।।श्याम।। २ ।।

राग देशाख (१७)

आस्युरे इम कीधु माहरा नेमजी अरण समझे किम जाय ।
तोरण बढीने पाछा वलता लोक हसारत थाय ॥आचली॥ १ ॥

अह्मने आस हती अतिमोटी, नेमिकुमार परणीये ।
मास अधमास इहा राखीने, मन गमतु ते करीस्ये ॥आ०॥ २ ॥

आपासे अति उची मेडी, पाछलि छे हाट श्रेणी ।
ते उपरि थी नगर तमासो, जो इस्ये जालिये हेरी ॥आ०॥ ३ ॥

वोली टोली टोल करता गीत साहेली गाये ।
हास विनोद कथा रस कहेता, दिन जातो न जणाइ ॥आ०॥ ४ ॥

आवो आवो रे मोहन मदिर माहरे, रीझइ मन माहरु ।
बालेक आखडली मचकावत सूजाये छे ताहरु ॥आ० । ५ ॥

तह्मनेंसू वलि वलि वीनवीइ तम्हे छो अन्तरयामी ।
रहो रहो रसिक वलो तुह्म पाछा, कुमुदचन्द्र ना स्वामी ॥आ०॥ ६ ॥

राग धन्यासी (३८)

मे तो नरभव वाधि गमायो ।

न कीयो तप जप व्रत विधि सुन्दर ।
काम भलो न कमायो । मैं०॥ १ ॥

विकट लोभ तें कपट कूट करी ।
निपट विषै लपटायो ॥

विटल कुटिल शठ सगति वेठो ।
साधु निकट विघटायो ॥मैं तो०॥ २ ॥

कृपण भयो कछु दान न दीनो ।
दिन दिन दाम मिलायो ॥

जब जोवन जजाल पड्यो तब ।
पर त्रिया तनु चित लायो ॥मैं तो०॥ ३ ॥

अन्त समे कोउ सग न आवत ।
झूठिहि पाप लगायो ॥

कुमुदचन्द्र कहे चूक परी मोहि ।
प्रभु पद जस नही गायो ॥मैं तो०॥ ४ ॥

राग धन्यासी : (१६)

प्रभु मेरे तुम कु' एसी न चहीये ॥
सघन विघन घेरत सेवक कु ।
मौन धरी किउ रहीये ॥प्रभु०॥ १ ॥
विघन हरन सुख करन सवनिकु ।
चित चिन्तामनि कहीये ॥
अशरण शरण अवन्धु वन्धु ।
कृपासिंधु को विरद निवहीये ॥प्रभु०॥ २ ॥
हम तो हाथ विकाने प्रभु के ।
अव जो करो सोई सहिये ॥
तो फुनि कुमुदचन्द्र कहे शरणागति की ।
प्रभु सरम जु गहीये ॥प्रभु०॥ ३ ॥

राग धन्यासी (२०)

आजु सबनी मिं हू वडभागी ।
लोडण पास पाय परसन कु, मन मेरो अनुरागी ॥आजु०॥ १ ॥
वामा नन्दन वृजिनि विहडन, जगदानन्दन जिनवर ।
जनम जरा मरणादि निवारण, कारण सुख को सुन्दर ॥आजु०॥ २ ॥
नीलवरण सुर नर मन रजन भव भजन भगवन्त ।
कुमुदचन्द्र कहे देव देवनीको, पास भजहु सव सत ॥आजु०॥ ३ ॥

राग श्री राग (२१)

वन्दे ह शीतल चरण ॥
सुरनर किन्नर गीत गुणावली, मतुल रुचं भव भयहरण ॥वन्दे०॥ १ ॥
निज नख सुखमा चित द्विजपति चय, मुदित मुनि निश्चित शरण ।
जन्म जरा मरणादि निवारण,
नत कुमुदचद्र श्री सुख करण ॥वन्दे०॥ २ ॥

राग असाउरी : (२२)

अवसर आजू हेरे हवेदान पुण्य कांई कीजे ।
मानव भव लाहो लीजे ॥अव०॥ १ ॥

भव सागरना भमता भमता, नर भव दोहिलो मलियो रे।
संपति मति रुडू कुल पाम्यो, तो धर्म विषय थी रलियो रे ।।अव।। २ ।।
यौवन जाय जरा नितु व्यापे, क्षण क्षण आयुस थावे रे।
रोग शोग नाना दुख देखी, तोस्ये नही सान न आवे रे ।।अव०।। ३ ।।
क्रोध मान माया सहु मू को, परधन परस्त्री वर जोरे।
चरचो चरण कमल प्रभु केरा, जिम ससार न सरजो रे ।।अव०।। ४ ।।
वृद्ध पणे तप जप नही थाये, जीवन वय जालविये रे।
घर लागे कूउ खोदीने तो कहो किम घर उल्हविये रे ।।अव०।। ५ ।।
वहु परिवार घणी हु मोटो, मूरिख मोटि समझी रे।
स्वारथ वीते कोई नवि दीखे, तो जिम तरुवर ना पखी रे ।।अव०।। ६ ।।
मे मे रत्तोरा माए तो, वृद्ध तिजनिवारो रे।
मन मरकट नो हठ वशि आणो तो, नरभव फोकम हारो र ।।अव ।। ७ ।।
पर उपगार करी जस लीजे, पर निंदा नवि करीये रे।
कुमुदचद कहे जिम लीलाई, तो भवसागर उतरीये रे ।।अव०।। ८ ।।

राग गोडी (२३)

लालाद्यो मुझ चारित्र चूनडी, वेराग करारी रग रे।
व्रत भात भली घणी सोभती, वारु समकित पोत सुचगरे ।। १ ।।
रुडी सोहे माहि तप फूदडी, छवियालि दयानि वेलि रे।
दशलक्षण डालि दीपती, शिल पत्र तणी रगरेलि रे ।। २ ।।
मूल गुणनी विराजे मजरी, पच समिति पाखडी सोहत रे।
उंची त्रण्य गुपति रेखा भजे, जेह्ने जोता मन मोहत रे ।। ३ ।।
वर सवरनी तिहा चोकडी, वे ध्यान पालव सोहाय रे।
रटियालि रत्नत्रय कोर रे जोता मनुस्यु तृपति न थाय रे ।। ४ ।।
एह उढी राजीमती साचरी, तेणे मोह्या सुरनर राय रे।
मोही मुगति साहेली रूपनें, सूरो कुमुदचन्द वलि जाय रे ।। ५ ।।

इतिगीत (२४)

ए ससार भमतडारे न लह्यो धर्म विचार ।।
मे पाप कर्म की धाधणी ते थी पाम्यो दुख अपार रे।
मन मोहन स्वामी मोरा अतरयामी, नमु मस्तक नामी देवरे ।। १ ।।

ए तो कष्ट करीने पामीयोरे, मानव भव अवतार।
ते निष्फल मे नीगम्यो कहु साभली तेहनी वात रे ॥ २ ॥

मे कपट कीधा अति पाडुआ रे, रचियो अति परपच।
मर्म मो सावलि वोलिया, वलि पोस्या इद्रिय पाच रे ॥ ३ ॥

क्रोध पिशाचि हु नम्यो रे, डसियो काम भुजु ग।
लहेरवाजी महा मोहनी, हु तो राच्यो पर त्रिय सगरे ॥ ४ ॥

लोभ लपट थयो अति घणु रे, धन परियण ने काजि।
जोवन मद मातो थयो, तिणे आण्यो घणू एक वाजिरे ॥ ५ ॥

आप वखाणु अति घणू रे, कोधी परनी ताति।
कूडा आलि चढावियो, थयो उन्मत्त दिनराति रे ॥ ६ ॥

मन वाछित सुख कारणे रे, कीधा पाप अधीर।
अति उज्जलता कारणे, धोयो कादव माहि चीर रे ॥ ७ ॥

कर्म कीधा अण जाणता रे, ते के कहेता थाय ते लाज।
ए मन मादा भे घणू कहु ते कोहने जई आजार ॥ ८ ॥

हवे तु जग गुरु मभनें मल्योरे जगजीवन जगनाथ।
सूरी कुमुदचन्द करे वीनती, निज सेवक कीजे सनाथ रे ॥ ९ ॥

राग परजीउ (२५)

वालि वालि तु वालिम सजनी, विण अवगुण किम छडी नारि।
तोरण थी पाछो जे वलियो, जइ चढियो गिरि गढ गिरिनारि ॥ १ ॥

लीधो सयम श्री जिनराजि सुन्दर सहेसावन्न मभारि।
सुरनर किनर कर्यो महोछव, जिम वलता नावे ससार ॥ २ ॥

रोस छवेस्यु करियो पोफट, ते यदुनदन नावे वार।
कुनुदचन्द्र स्वामी सामलियो, उतारे भव सागर पार ॥ ३ ॥

राग परजीयो. (२६)

लाल लाल लाल लाल तु माजासरे।

तोरण थी पाछो वल्यो ताहरी लोक करस्ये हास।
यदुनद रे, सुखकदरे, नेम एक सामलो माहरी वीनती।
जिम वाधे ताहरी माम।
लीधा वोलज मूकता स्यु रहस्ये ताहरू नाम ॥यदु०॥ १ ॥

एक बार तु जो पाछो वले तो किजे हास विलास ।
सखी सहुर्ने भूमखे रमता, फूलडा रुडा गास्य ।। २ ।।

कर जोडी ने वीनवू, वाल्हारथ पाछो वालि ।
जो आम मुन्हे वाडी जसे, ताहरे माथे चढस्ये गालि ।। ३ ।।

रहे रहे रे यादवा जो डग भरे तो नेम ।
योवन वेशें एकली, घेर तुझ विना रहु किम ।। ४ ।।

रहे उभो जो पाछु वली, तु साभलि सुन्दर वाणि ।
आवे यादव मडली तेहनी, जाण हइयास्यु-काण ।। ५ ।।

हवे प्रेम करी पाछावलो, हठ मुको नेम नरेन्द्र ।
दीन दयाल दया करो, इम बोले कुमुदचन्द ।। ६ ।।

राग धन्यासी (२७)

सगति कीजे रे साधु तणी वली, लीजे ते अरि रत नाम ।
जेह थी सीझे रे मन नू चीतव्यु, जिम लहो अविचल ठाम ।। १ ।।

जीवडा तुम करे सि माहरु, माहरु मनस्यु विमासी रे जोय ।
स्वारथ जाणी रे सहु आवी मल्यु, अत समे नही कोय ।। २ ।।

लक्ष चोरासी रे जोनि भमतडा, माणस जनम दुर्लभ ।
इम जाणी रे तप जप की जोई, धडियन करिये विलब ।। ३ ।।

तन धन यौवन जीवन थिर नाही, विघटी जास्ये सुजाण ।
ते माटइ करी सीख अह्मारडी पाल तो जिनवर आण ।। ४ ।।

पापज कीधा ते अति पाडुआ, रड चडिया ससार ।
धर्म ज पाम्यो रे कष्ट घणू करी, मूरख फोकम हार ।। ५ ।।

जे दुखदीठा ते अति दोहिली, ते जाणे जिन चद ।
हवै है यास्यु रे धर्मज कीजीये, जिम छूटो भव फद ।। ६ ।।

रामा रामा रे धन धन झखतो, पडियो तु मोहनी जाल ।
विषय विलूधो रे जिन गुण विसर्‌यो दिन दिन आवे छे काल ।। ७ ।।

सगा सहू नेरे सग पण कारिमू, सगो ते सही जिनराज ।
तेह नामइ थी रे शिवसुख पामीइ सरे ते जीवनू काज ।। ८ ।।

जोता जोता रे जग गुरु पीमीयो तेहथी मरहेसि दूरि ।
जनम मरण ना जिम दुख महुटले, कहे कुमुदचन्द सूरि ।। ९ ।।

राग गुज्जरी (२८)

म करीस परनारी नो मग ।। टेको ।।
हाव भाव करे ते खोटो जेह वो रग पतग ।। म० करीस ।। १ ।।
पेहेलु मन सताप चटपटी, सोक सताप ते आवे ।
जेम लागो होये भूत भमता, ते मने चित भमावे ।। म० ।। २ ।।
भूखत रस नवि लागे तेहाथी, अन्न उदक नवि भावे ।
न रुचे वात विनोद कथा रस, नहि निसि निद्रा आवे ।। म० ।। ३ ।।
लपट लोक कही बोलावे, सहु सज्जन रिसावे ।
माथे आल चढे पतजाय, लोकह सारथ थाते ।। म० ३ ।।
राज दण्ड वन हारण विगुचरण, नरक माहे दुख कारी ।
कुमुदचन्द्र कहे करी वीमासरण, तजो चतुर परनारी ।। मकरीस ।। ५ ।।

राग सारग (२९)

नाथ अनाथनी कु कछु दीजे ।
विरद सभारी छारीहउ मन ति, काहे न जग जस लीजे ।। नाथ ।। १ ।।
तुम तो दीनदयाल ही निवाज, कीयो हू मानुप गुरण अव न गरणीजे ।।
व्याल वाल प्रतिपाल सविपतरु, सो नही आप हरणीजे ।। नाथ० ।। २ ।।
में तो सोई जोता दीन हूतो जा दिन को न छूई जे ।
जो तुम जानत उरु भयो हे, वाधि वाजार वेचीजे ।। ३ ।।
मेरे तो जीवन धन मवहु महि, नाम तिहारे जीजे ।
कहत कुमुदचन्द्र चरण सरण मोहि जे भावे सो कीजे ।। ४ ।।

राग सारग . (३०)

जो तुम्ह दीन दयाल कहावत ।।
हमसी अनाथनि हीन दीन कु काहे न नाथ नीवाजन ।। जो० ।। १ ।।
सुर नर किनर असुर विद्यावर, सव मुनि जन जस गावत ।
देव महीरुह कामधेनु ते, अधिक जपत सच पावत ।। जो ।। २ ।।
चन्द चकोर जलद ज्यु सारग मीन सलिलज ध्यावत ।
कहित कुमुदपति पावन तुहि, त हिरिदे मोहि भावत ।। जो० ।। ३ ।।

(३१) मुनिसुव्रत गीत

मुरत मोहन वेलडी रे, दर्सरण पाप पलाय ।
मुख दीठे दुख विसरे रे, सेवे छे मेवे सुरासुर पाय ।।

गज गामि आवो भामिनी ए; पुजेवा पुजेवा सुव्रत पाय ।।गज।।
तात सुमीत्र मनोहर रे, जेहनी पोमादेवी माय।
मुख सोहे जेहवो चाद लो, रे, स्यामल स्यामल वर्ण सुकाय ।। २ ।।
उचयणू अति जेहनुरे, वीश धनुष परमाण।
मोह माहाभट निर्दल्योरे, मयण मयण मनाव्यो आण ।।गज०।।३।।
नयर राजगृह उपना रे, जग गुरु जगदानद।
ध्यान करे नित जेहनु रे, मुनिवर मुनिवर केव वृ द ।।गज०।। ४ ।।
प्रगट्यु तीर्थ जेणे वीसमु रे, मनवाछित दातार।
गुणसागर अति रुवडारे, जेहना वचन अतिसार ।।गज०।। ५ ।।
दीनदयाल सोहमणी रे, सु दर करुणा सीधु।
जगजीवन जग राजीयोरे कारण कारण वीणए बधु ।।गज०।। ६ ।।
रोग सोग नामे टले रे सहान वीघन हरे दूर।
सेवो भविक तम्हे भावसु रे, विनवे विनवे कुमुदचद सूर ।।गज०।। ७ ।।

।। इति मुनिसुव्रत गीत समाप्त ।।

(३२) हिन्दोलना गीत

विनय करीने वंनवू हीदोली डारे, भगवति भारति माय।
जेह नामि मति पामीये हिन्दोलीडारे वलि रे विमलमति थाये ।।
एक समय सू हिन्दोलडारे हीवती सखिय वे च्यार।
चन्द्र किरण सम उजलो ।।
हैडले झलके तोहार रातिरुडी अजूवालडी ।। हि० ।। २ ।।
घरि घरि उछव रास ।।
गाय ते गीत सोहामणी कामिनी करे रे विलास ।। ३ ।।
त्यारि राजुल कहे हे सखी, साभलो एक सन्देश।
जाउ सखी जइ वीनवो, सुन्दर नेमि नरेश ।। ४ ।।
माहरी वती करो वीनती, प्रणमीय तेहना पाय।
तुझ विना पल एक मुझने घडीय बराबरि थाय ।। ५ ।।
घडी एक पहोर समानडी, पहोर दिवस दिन मास।
मास वरस दिन जेवडो वरस युगातर तास ।। ६ ।।
राति दिवस राजीमती समरे छे तम तणो नेह।
जिम सरोवर हसलो, वापियडा मन मेह ।। ७ ।।

धर्मिनू मन जिम धर्मसु, गुरिगनी भगति गुणवंत ।
जिम चक्रवाक मनि रवि वसे, कोयल जिम रे वसंत ॥ ८ ॥

याचक जिम समरे दातार ने, दातार पात्र उदार ।
जिम निज घरि समरे पथियो सती समरे भरतार ॥ ९ ॥

जिम तृषातुर नीरनें, तिम तुह्म रायुल नारि ।
क्षरिण-क्षरिण वाट नीहालती, निज घर अगरण वार ॥ १० ॥

पूछे पोपटने पाज रे, बोलो ने पोपट राज ।
कहो क्यारि नेम जी आवस्यो, जम सगे अह्म तरणा काज ॥ ११ ॥

वलिय पारेवाने वीनवे, साभल्यो तु तो सुजारण ।
ताहरि गगन गति रूअडि, करि पिउ आव्यानु जारण ॥ १२ ॥

सकुन वधावो जोवती, पूछति पथि ने वात ।
जे कहे नेमनी आवता, ते मोरो वाववा वात ॥ १३ ॥

घर वन जाल सगू सहू, विरह दवानल भाल ।
हु हिरणी तिहा एकली, केसरि काम कराल ॥ १४ ॥

मात पिता सहू वीसर्या, नही गये परिजन नाम ।
वाहलो मने एक नेम जी, जेहो हमारो आतम राम ॥ १५ ॥

हेविहिरणा मागु तुझ कह्ने, अह्मने तुमा सर जेस ।
जो सरजे अह्मने वली, मारणस जनम म देशि ॥ १६ ॥

जो भव दे मानव तरणो, तोम करेस सयोग ।
सजोग जो सर जे लेई, तोम करे सवियोग ॥ १७ ॥

इष्ट वियोग दुख दोहिला, ते दुख मुखें न कहवाय ।
थोडा माहि समझो घरणू तम विना मे न रहे वाय ॥ १८ ॥

भोजन तो भावे नही, भूषरण करे रे सताप ।
जोहु मरिस्य विलम्बि थई, तो तह्म लागस्ये पाप ॥ १९ ॥

पशु देखी पाछा वल्या, मनस्यु थयारे दयाल ।
मुझ उपरि माया नही, ते तह्मस्या रे कृपाल ॥ २० ॥

तह्मे सयम लेवा साचर्या, जाण्यो पम्यो हवे मर्म ।
एकस्यु रुसो एकस्यु तुमो, अवलो तुम्हारो धर्म ॥ २१ ॥

हिन्दोलना गीत का परिचय " पृष्ट पर देखिये ।

राज रडु अण्य लोकनू, रुडो हमारो योवन वेश ।
जो सरगे जस्यो तप करी, तिहा तो एहवू न लेहसि ॥ २२ ॥
हवे प्रभु पाछा वलो, करिये छे विनय अनेक ।
अति ताण्यु त्रूटे नेम जी, मन माहि करो रे विवेक ॥ २३ ॥
त्यारि दिवस हुइ पाधरा, त्यारि सगू सहु कोय ।
ज्यारि वाका थाये दीहडा, त्याहारि सज्जन वेरी होय ॥ २४ ॥
अथवा करम फर्‌यु अह्म तणू, तो तह्मस्यु कर्‌यो रोस ।
जेहवू दीधू तेहवू पामीये, कोहे दीजे नही दोस ॥ २५ ॥
रायुल अमीने इम कहीउ वलि-वलि जोडिने हाथ ।
प्रीछवो जो पाछा वले, जिम अह्मे थाउ सनाथ ॥ २६ ॥
लेई सदेसो चालो सहु सखी जइ चढी गिरिवर शृ ग ।
घणीय जुगति करी प्रीछव्या, मन दीठु तेहनू अभग ॥ २७ ॥
आवी ते सखि पाछी वली, वात कही तिणिवर ।
ते तो बोले-चाले नही, मनस्यु निठोर अपार ॥ २८ ॥
त्यारि राजुल उठी सचरी, तजिय सपति ततकाल ।
सयम लेई तप आचर्‌यो जिम न पडे मोह जाल ॥ २९ ॥
व्रत रुडा पाली करी पामी ते अमर विमान ।
कर्म तजी केवल लही, नेमि पाम्या निरवाण ॥ ३० ॥
ए भणता सुख पामीइ, विघन जाये सहु दूरि ।
रतनकीरति पट मडणो, बोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ३१ ॥

(३३) त्रण्य रति गीत

दश दिशा बादल उनया दम्पति मनि उल्हास ।
दीसे ते दिन रलिया मणा, घन वरसे रे लवे बीज आकाश के ॥

वर्षा ऋतु,

वरषा रति आदि आवी, आदि वरषा रति वाधे वहु रतिराज ।
न आव्यो रे पीउडो घरि आज, न आणी रे मनि निज कुल लाज ॥
स्यु कीजे रे नही पीउ सुख साज के, वरषा रति आज आवी ॥ १ ॥
पथीयडा झूरे घणू साभली दादुर सोर ।
बापीयडो पिउ-पीउ लवे पापीयडोरे बोले कलरव मोर के ॥ २ ॥

पखीयडें माला कस्या मनि धरी पावस प्रेम।
'काली ते मेहरण रातडी, वाल्हूयडा विरण सुनें घरि रहीये केम के ॥ ३ ॥

गगन अति गडगडे वाजते झंझावात।
कुंज विहंगम मडली गीरि कन्दर रे, गुंजे हरि कपि जात के ॥ ४ ॥

गाजे ते अम्बर छाहिउ, झड वादल वहु भांति।
अगियो अधार ते तग तगें वोले तिमिरा रे भरिमा झिम राति के ॥ ५ ॥

सुख समे प्रीउडो नावियो मनि थयो अतिहि नीठोर।
कोई भाभिनीह भोलव्यो, करि कामरण रे मार चितडानो चोर के ॥ ६ ॥

शीत ऋतु .

सोहमरणा दिन शीतना गाये ते गोरी गीत।
शीतनो भय मनिधरी हुवे मानिनि रे मुके मन तरणा मान के ॥ ७ ॥

हिम रित रे बीजी आवी बीजी हिम रति रे सखि हरय निवान।
ना होलियो रे वसे गिरि गुहरान, वियोगें रे वरणसे देह वान ॥ ८ ॥

योवन जाये रे प्रीउने नहीं सान के ॥
हिमरतें हिम पडे हे सखी दाझे ते धन वन राय।
तुझ विना ए दिन दोहिला ह्यारी दाझेरे अति कोमल कायरे ॥ ९ ॥

वाजे ते शीतल वायरो, वाझे ते वाहिर ठार।
धूजे ते वनना पखिया, किम रहस्ये ते वनि प्रियसुकुमार के ॥ १० ॥

वन छाडि दव भय कमलिनी, जले रहे मनि धरीनातेष।
तिहा थकी परिण हीमे दही नही, छुटियेरे वह्लि रातिरा लेख के ॥ ११ ॥

तेल तापन तुला तरुणी ताम्र पट तवोल।
तप्ततोयते सातमू सुखिया नेरे हिम रति सुख मल के ॥ १२ ॥

शीयालो सघलो गयो, परिण नावियो यदुराय।
तेह विना मुझने झूरता एह दीहडारे वरसा सो थाय के ॥ १३ ॥

कोयल करे रे टहुकडा लहे केते अबा डाल।
वेलि ते पोपट पाढुउ तेह साभली रे स्ये न आव्या लाल के ॥ १४ ॥

ग्रीष्म ऋतु

ग्रीसम रितु त्रीजी आवी, त्रीजी ग्रीसम रति किम जास्ये एह ॥
घरे नाव्योरे नाहोलो धरी नेह, सामलिया रे मनि समरो गेह ॥ १५ ॥

नही तर रे प्राणत जस्ये देह के ग्रीसम रति ॥
फूल्या ते चपक केवडा फूल्यु ले वन सहु कोय ।
पानडा परिण नही केरने, पुण्य पाखि किम रुडी सम्पति होय के ॥ १६ ॥
तडको पडे अति दोहिलो, रवि तपे पर्वत शृ ग ।
अति झाल लागे लु तणी हवे आवो रे मुझ कज मृगाक ॥ १७ ॥
कर्पूर वाशित वारिस्यु चन्दने चरचु अग ।
केसर घसी करु छाटणा,
जो तु राखे रे हमारा मन तणो रग के ॥ १८ ॥
कामिनी करि शृ गार, सरसी करे वन जल केलि ।
सामला मूको आयला मुझ सरिसोरे प्रिय मनडू मेलिके ॥ १६ ॥
इम झूरती राजीमती, जई चढी गिरिनारि ।
सूरी कुमुदचन्द्र प्रभु नेमि ने धन्यासी रे आयो हु वलिहार के ॥ २० ॥

(३४) वरणजारा गीत

वरण जारा रे एह ससार विदेस भयीय भमीतु उसनो ।
तेरी घणी घणी वार ज्यारे गीत पुर जोइया ॥ १ ॥
लख्य चोराशी योनि गाम माहि तु रडवम्यो ।
मनस्यु विमासी जोय खोटे वणजें रणियो थयो ॥ २ ॥
मूल गयु तिणि वार खोटि आवी दुखियो थयो ॥
जीव तु चतुर सुजाण मोह ठगा रे भोलव्यो ॥ ३ ॥
कीघा कुसगति प्रीति सात व्यसन ते सेवीया ॥
पाप कर्‌या ते अनन्त जीव दया पाली नही ॥ ४ ॥
साचो न वोलियो बोल मरम मोसावहु वोलिया ॥
पर निंदा परतीति ते करी अण जाणते वणजारा रे ॥ ५ ॥
आप वखाण्यु अपार, अवगुण ते सहु उलव्या ॥
कुड कपटनी खाणि, परधन तें चोरी लिया ॥ ६ ॥
उलवी विसरी वस्तु, थापिज मूकी उलवी ॥
विषय विलूधो गमार, परनारी रगे रम्यो ॥ ७ ॥
योवन मद थयो अध, हु हु हु करतो फिरयो ॥
रीस करी अण काज, गुण नवि जाण्यो क्षमा तणो ॥ ८ ॥
इंद्रिया पोस्या पाच, पाप विचार कर्‌यो नही ॥
पुत्र कलत्र ने काजि, हा हा हु तो हीडीयो ॥ ६ ॥

सजन कुटव ने मित्र आप सवारथ सहु मल्यु ॥
कीधा कुकर्म अनत, धन घन रामा भख तो ॥ १० ॥
घर परियण ने लोभ, वणज घणा तें के लव्या ।
तेह्नो न लाधो लाभ, जेणे लाभे सुख पामीये ॥ ११ ॥
मरवु छे निरधार, तो फोकट फूले कस्यु ॥
कोई न आवेस्ये साथि हाथि दीधू साथें आवस्ये ॥ १२ ॥
ते माटेस्यो रे जजाल, करतो ह्रीडेवुकारिमु ॥
नाभल ये तु सीख, ममना मनोरथ जिम फले ॥ १३ ॥

साज तु सुन्दर साध, मन रूपी रुडो पोठियो ॥
वारु वेराग पल्हाण, मुगति पटी तु मीडजे ॥ १४ ॥
समकित रासडि वाधिजे, उवट जिम जाये नही ॥
सयम गुण पह्लाण धर्म वसाणे तु भरेव ॥ १५ ॥

लीजे दया व्रत सार, शील तणो सग्रह करे ॥
अनुप्रेक्षा ते सभालि, अण्य रतन नु जतन करे ॥ १६ ॥
पच महाव्रत भार, सनित गुपति ते राख जे ॥
साधु तणो गुणवीर, जीव तणी परिजालवे ॥ १७ ॥

सभारये नवकार, जिन जी तणां गुण मनिधरे ॥
ग्रन्थ पुराण विचार, धर्म शुकल ध्यान चिन्तवे ॥ १८ ॥
सहे गोरनो उपदेश, एक घडी नवि विसरे ॥
तपनी तुम करेसि काणि, जेणे कर्ममल सहु टले ॥ १९ ॥

मधुर मोदक उपवास, गाठि सुखडली बाध जे ॥
निर्मल शीतल नीर ज्ञान घूटडला तु भरे ॥ २० ॥
सत्य वचन पच खांण, ते सुखवास तु वावरे ॥
म करेसि तु परमाद, वाटे जालव तो जजे ॥ २१ ॥

खडग क्षमा करे हाथ, चोर परिग्रह नास से ॥
साधर्मि ने साथ, मुगति तुरी वहेलो पुहचस्यो ॥ २२ ॥
सिद्ध तणा गुण आठ, मुगति वधू तेंणें राचस्ये ॥
जन्म जराना त्रास, मरण वली-वली नही न डे ॥ २३ ॥

काल अनतानत सौख्य सरोवरि भीलस्यो ॥
ए वणजारा नू गीत, जे गास्ये हरषे सही ॥ २४ ॥
ते तरस्ये ससार अजर अमर थई महा लसे ॥
रतनकीरति पद धार, कुमुदचन्द्र सूरी इम कहे ॥ २५ ॥

(३५) शील गीत

सुणो सुणो कता रे सीख सोहामणी ।
प्रीति न कीजे रे परनारी तणी ॥

त्रोटक :

परनारि साथि प्रीतडी, प्रीउडा कहो किम कीजिये ।
उ घ आपी आपणी उजागरो किम लीजीइ ॥
काछडी छुटो कहे, लपट लोक माहि लीजीइ ।
कुल विषय खपण न खार लागे, सगामा किम गाजिये ॥ १ ॥

ढाल

प्रीति करता रे पहिलू वीभीये ।
रखे कोई जाणे रे मन मा धुजिये ॥

त्रोटक :

ध्रुजीये मनस्यु भूरिये पण जोग मिल वोछे नही ।
ए राति दिन पलपता जाये, आवटी मरवु सही ॥
निज नारी थी संतोष न वल्यो, परनारी थी तोस्यु हस्ये ।
जो भरे भाणे नृपति न वली, एठ चाटेस्यु थस्ये ॥ २ ॥

ढाल

मृग तृष्णा थी तरस्य नही टले ।
बालू केसू पीले रे तेल न नीसरे ॥

त्रोटक :

नवि नीकले पाणी विलोबता लेस माखण नो वली ।
छूडता वाचक भरा फाणे, तस्या वात न साभली ॥
ते म नारी रमता पर तणी, सतोष तो न वले घडी ।
चटपटी ने उचाट लागे, आंछि नावे निष्दडी ॥ ३ ॥

ढाल

जेहवो खोटो रे रग पतग नो ।
तेहवो चटको रे पर त्रिय सग नो ॥

त्रोटक

परत्रिया केरो प्रेम प्रिउडा रखे को जाणो खरो ।
दिन च्यार रग सुरग रुअडो, पछे न रहे निरवरो ॥
जे घणा साथे नहे माडे, छाडि तेहस्यु वातडी ।
इम जाणी मम करि नाहला, परनारि साथें प्रीतडी ॥ ४ ॥

ढाल

जे पतिवाह तोरे वचे पापिणा ।
परम्यु प्रीते रे राचे सापिणी ॥

त्रोटक :

मापिणी सरखी वेणि निरखी, रखे शील थकी चले ।
आखिने मंटके अगि लटके देव दानवने छले ॥
माडकालि अति रमाली, वाणि मीठी सेलडी ।
साभली भोला रखे भूले जाण जे विष वेलडी ॥ ५ ॥

ढाल ·

सग निवारो रे पर रामा तणो ।
शोक न कीजे रे मन मलवा घणो ॥

त्रोटक ।

शोक स्याह ने करो फोकट, देखा छू पणि दोहिलू ।
क्षण सेरीइ क्षण मेडीइ, ममता न लागे सोहिलो ॥
उसास नइ नीमास आवे, अग भाजे मन भमें ।
वलि काम तापे देह दाभे अन्न दीठु नवि गमे ॥ ६ ॥

ढाल ·

जाय कलामी रे मनस्यु कल मले ।
उदमादो थइ रे अलल फसल लवे ॥

त्रोटक ·

तेलवे अलल फलल अजाणो मोह गहेलो मनि डरे ।
मह्रा मदन वेदन कठिन जांणी मरण वारु त्रेवडे ॥
ए दश अवस्या काम केरडी कत काया ने दहे ।
हम चित जाणी तजो राणी पारकी जिम सुख लहे ॥ ७ ॥

ढाल ·

परनारी ना पर भय साभलो ।
कता कीजे रे भाव ते निरमलो ॥

त्रोटक

निरमले भावे नोह समझो, परवधू रस परिहारो ।
चापियो कीचक भमिसेने, शिला हेठलि साभलो ॥
रण पड्या रावण दशे मस्तक रड वड्या ग्रन्थे कहु ।
ते मुजपति दुख पुज पाम्यो, अजस जग माहि रह्यो ॥ ८ ॥

ढाल .

शील सलूणारे माणस सोहिये ।
विण आभरणें रे मन मोहीये ॥

त्रोटक

मोहिये सुरवर करे सेवा, विष अमीसायर थल ।
केसरीसिंह सीयाल थाये अनल अति शीतल जल ॥
सापथ ये फूलमाला लच्छि घरि पाणी भरे ।
परनारि परिहरि शील मनि धरि मुगति बहु हेलावरे ॥ ६ ॥

ढाल ।

ते माटइ हुरे वालि भवीनवू ।
पागि लागी नेरे मधुर वचने चवू ।

त्रोटक :

वचन माहरुं मानिये परिनारी थी रहो वेगला ।
अपवाद माथे चढे मोटा, रक थइये दोहिला ॥
घन धान्य ते नर नारि जे दृढ शील पाले जगतिलो ।
ते पामसे जस जगत माहि, कुमुदचन्द्र समुज्जलो ॥ १० ॥

गीत राग घन्यासी (३६)

आरती गीत

करो जिन तणी आरती, अण सुख वारती ।
विघन उसारती भविक तणा ॥ १ ॥
थाल वर सोहती, सकल मन मोहती ।
अशु भव्य मोहती, तेज पूजा करो ॥ २ ॥
पुण्य अजू आलती, पापतिमर टालती ।
अमर पद आलती, अण प्रयासे ॥ ३ ॥
भव भय मजती, भाव ढिंगजती ।
सुरमन रजती, राज्य मानती ॥ ४ ॥

वाजित्र वाजता, अ वर गाजता ।
नरवधू नाचता, मनह रंगे ।। ५ ।।
जिन गुण गावता, शुभ मन भावता ।
मुगति फल पावता, चतुर चंगि ।। ६ ।।
सुगन्ध सारग दहे, पाप ते नवि रहे ।
मनह वांछित लहे, कुमुदचन्द्र करो जिन आरती ।। ७ ।।

(३७) चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत

चालो चन्द्रमुखी सखी टोली, पहेरो पटोलि चोलि रे ।
पूजिये पावन पास जिणसर, पीमीये सपति वहोली रे ।। १ ।।
सुन्दर वासव रास कपूरें, वासित जलें जिन पूजीईं ।
जनम जराने जापन कीजे, मरण थकी नवि वीहीजीए ।। २ ।।
चन्दन केशर ने रसि चरचो, त्रण्य भुवन केरो राय रे ।
पाप तणो सताप टले सहू, जिम मनि वंछित थायेरे ।। ३ ।।
अछत पूज करो प्रभु आगलि, पच परम गुरु नामि रे ।
नव निधि चउदह रतन अति रुवडा, जिम लहीइ निजधामे रे ।। ४ ।।
जाई जूइ सरवर सेवत्रे, कुंद कमल मचकुंदे रे ।
चम्पक तरणी चम्पक लिड, चरचो चरण आनंद रे ।। ५ ।।
कूरदालि वडावर व्यंजन, पोलिय घीइ भवोली रे ।
पातलडी पकवान चढावो, रची रचना वर उली रे ।। ६ ।।
दीवडलो अजू वालो रे आली, आरतडी उतारो रे ।
आरतडी भाजे जिम मननी, पाप तिमिर सहु वारो रे ।। ७ ।।
सुन्दरी ससिवदनी प्रभु चरणे, कृष्णागरउ खेवोरे ।
पावन धूम शिखा परिमलना छूटिये करमनि खेवोरे ।। ८ ।।
कमरख कदली फल सोपारी, सखिय चढावो सारी रे ।
रायण करमदा वदाम वीजोरा दाडिम अति मनोहारी रे ।। ९ ।।
जल चन्दन अक्षत वर कुसुमे, चरु दीवडली धूपे रे ।
फल रचना सूं अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूपे रे ।। १० ।।
इस अनूपम भाव वरीने, पूजता पास जिणंद रे ।
रोग शोग नवि तें अगे, न हुई कोइम्यु देद रे ।। ११ ।।

भूत प्रेत पिशाचर पीडा, वाघ वरु नवि अडकेरे ।
पास प्रभू तणू नाम जपता, नवि हैडे दुख खडके रे ॥ १२ ॥
सघन विघन वेगलडा जाये, नवि ताणे वहु पाणी रे ।
कुमुदचन्द्र कहे पास पसाइ, राचे मुगति महाराणी रे ॥ १३ ॥

(३८) दीपावली गीत

आज दीवालि रे वाई दीवाली, तह्मे पहेरो नव रग फालि ।
धन-धन रगल तेरसि नो दिन पूज्य धार्‌या चाली रे ॥ १ ॥
गाऊ गी तव धावो गोरने, मोतीयडे भरी थाली ।
चरचो अग चतुर सोहामणी, चरण कमल सु पखाली रे ॥ २ ॥
वुद्धि सिद्धि आपी अति रुअडी, कालि चउदसि काली ।
पाप हरण लीजे ते पोसो मननामल सहु टालि रे ॥ ३ ॥
चउदशिनी पाछलडी राति, कर्म तणा मद गाली ।
महावीर पहोता निर्वाणे, अजरामर सुख शाली रे ॥ ४ ॥
गोतम गुरु केवल दीवडलो, लोकालोक निहालि ।
सुरनर किंनर कर्‌यो महोछव, जय-जव रव देता तालि रे ॥ ५ ॥
तेज भमाम पर्व दीवाली, परठी झाक झमाली ।
घरि-घरि दीवडला ते झलके, राति दीसे अजुवाली रे ॥ ६ ॥
पडवे राति जुहार पटोला, तिरुडी मम चाली ।
श्री सदगुरुना चरण जुहारो, पामो रवि रद्धि आली रे ॥ ७ ॥
वीजें हेजे करे ते भाविज वेह्नडली अति व्हाली ।
ए पाचे दीहा जपन्होता, आवो आवो हरपे चालि रे ॥ ८ ॥
हास विनोद करे मृग नयणी शशि वयणी रूपाली ।
कुमुदचन्द्र नी वाणि मनोहर, मीठा अमिय रसाली रे ॥
आज दीवाली वाई दीवाली ॥ ९ ॥

राग धन्यासी गीत (३९)

म करस्यो प्रीति ज एक रूखि ।
एक कठिन वेदन नवि जाणे, एक मरे विलखी ॥ १ ॥
जल विन मीन मरे टल वलि ने, जलनें काई नही ।
वापियडा ने प्रिउ प्रिउ रटता, जलधर जाय वही ॥ २ ॥

तरस्यो ते मन जल जल झखे, जल जड थईज रहे।
दीवे पडेय पतग मरे पणि दीवो ते न लहे ॥ ३ ।
प्रेम भरी जोता चन्दनि हरखे मनस्यु चकोर।
ते चादलडो चिंतन जाणे, धिग–धिग नेह निठोर ॥ ४ ॥
विकसे कमल दिवाकर देखी, ते तो मने न धरे।
मोर करे अतिसोर सनेहे मेह न नेह करे ॥ ५ ॥
काया मन भाया आणी ने, जीवें रही वलगी।
जीव जतें सटके झटकीनें, ते नाखी अलगी ॥ ६ ॥
नाद निमित्त मरे मृग गहेलो, नाद निगुण निगरोल।
त्त माटह मन राखो रुयडा, कुमुदचन्द्र ना बोल ॥ ७ ॥

राग धन्यासी गीत (४०)

सखि किम करिये मन धीर रे,
नेमि उज्जल गिरि जई रह्या हा रे हा ॥ १ ॥
जूउ नाथ नीउरनी पेर रे,
विण वाके किम परहरी हा रे हा ॥ २ ॥
मन हु ती मोटी आस रे, नाथ निरास करी गयो ॥ ३ ॥
सखि कहे ज्यो साची वात रे, मोह राखयु मा बोलस्यो ॥ ४ ॥
कुणें कीधू एह वू काम रे, तोरण जई पाछा वल्या ॥ ५ ॥
इणें किम न करी मन लाज रे, छोकर वादी सीकरी ॥ ६ ॥
जेणें रडती मूकी मात रे, वचन न मान्यु तात नु ॥ ७ ॥
तो कुण अहमारी पात रे, फोकट झाझू झूरीये ॥ ८ ॥
हवे धरीये सयम भार रे, जिम मन वाछित पामीये ॥ ९ ॥
जय जिनवर तु आसीस रे, कुमुदचन्द्र ना नाथ हा रे हा ॥ १० ॥

(४१) नेमि जिन गीत

वचन विवेक वीनवे वर राजुल राणी।
साभलिये प्रिय प्रेमस्यु कहु मधुरी वाणी ॥ १ ॥
किम परणेवा आवीया सहु यादव मेली।
तोरण थी किम चालियो रथ पाछो वेली ॥ २ ॥

विण वाके किम छाडियो, अवला निरधारी ।
बोल्या बोल न चूकीए, जिन जी मनोहारी ॥ ३ ॥

पशु अवाडि देखी फर्या ए मसि सहु खोटु ।
विगर सभारे आपणू ये जगमा मोटु ॥ ४ ॥

दीन दयाल दया करो, रथ पाछो वालो ।
समुद्रविजयनी आण तले जो आघा चालो ॥ ५ ॥

मन मोहन पाछा चलो गृह पावन कीजे ।
योवन वय अति रुअडू तेहनो रस लीजे ॥ ६ ॥

हास विलास करो घणा, रमणीस्यु रमता ।
सुख भोगवीइ सामला सुन्दर मनि रमता ॥ ७ ॥

प्रिय पाखि दुर्जन हसे घरि किम करी रहीये ।
विरह तणा दुख दोहिला कहु किम सहीये ॥ ८ ॥

अन्न उदक भावे नही, विष सरिखु लागे ।
मडन मनि-मनि नही, कामानल जागे ॥ ९ ॥

इम कहेनी रडति थकी राजुल ते थाकी ।
नेम निठुर माने नही गयो गिरिरथ हाकी ॥ १० ॥

कुमुदचन्द्र प्रभु शामलो जेणे सयम धरीयो ।
मुगति वधू अति रुवडी तेहने जई वरियो ॥ ११ ॥

गीत (४२)

करो तम्हे जीव दया मनोहारी, हिंसा नो मत जोरे प्राणी ।
जिम पामो भव पार ॥ १ ॥
पिष्ट शिखडिक नीहि साथी, लागु पाय अपार ।
जूउ यशोघर चन्द्रमति वेहु, भमीया भवत्रण च्यार ॥ २ ॥
भव पहेले भुपति के कीमा, स्वान तणो अवतार ।
वीजें भवे वन माहि सेहलो, श्याम भुजगम स्फार ॥ ३ ॥
मीन थयो त्रीजे चचल, सिन्धू विषय शिशुमार ।
जाल वन्ध अति छेदन भेदन दुक्खा तणो भण्डार ॥ ४ ॥
भव चोथे अज अजा पणें न हुउ सुक्ख लगार ।
जनम पाच मे अज भैंसो थई, वह्यो अलेख भार ॥ ५ ॥
भव छट्ठे चरणायुध पक्षि जेहने जीव अहार ।
सातमे भवे कुसुमावलि गर्भे, युगल हवा ते उदार ॥ ७ ॥

एह ससार जाहि रड वडता, दोहिलो कर्म विचार।
जेहवा दुख लहे छे प्राणी ते जाणे कीरतार ॥ ७ ॥
कृत्रीम जीव तणी हिंसा थी लागु पाप अपार।
हिंसा नवि कीजे रे, प्राणी कुमुदचन्द्र कहे सार ॥ ८ ॥

(४३) गुरु गीत

सकल सजन मली रे, पूजो कुमुदचद ना पाय रे।
पाट अद्योत कर्‌यो रे, जाणे ऋषिवर केरो राय ॥
गरुउ गोर अवतर्‌यो रे, दीठे दालिद्र पातिक जाय।
उपदेशें उछवे रे सघ प्रतिष्ठा वहु विध पाय ॥
मत्र जपे रे यतीयचार पंचाचार ॥ १ ॥
सुमति गुपति आदि ए पाले चारित्र तेर प्रकार।
क्रोध कषाय तजी रे वेगे, जीत्यो रति भरतार।
शील शृ गार सोहे रे, वुद्धि उदयो अभय कुमार ॥ २ ॥
सखी मे दीठडो रे, मीठडो सोल कला जस्यो चद।
जीव रख्या करे रे, अनोपम दया तरुवर कद ॥
विद्यावलि करी रे, आण मनाव्या वादि वृ द।
जस वहु विस्तरयो रे, चरण कमल सेवे नरेन्द्र ॥ ३ ॥
आखडी कज पाखडी रे, अधर रग रह्यो परवाल।
वाणी साभली रे, लाजी गई कोयल वन अतराल ॥
शरीर सोहामणू रे, गमने जीत्यो गज गुणमाल।
को कहे गुरु अवतारे देउ, दान मान मोती माल ॥ ४ ॥
गोपुर गाय मलू रे, वसूधा मध्ये छे विख्यात।
मोढ वशमा रे, साह सदाफल गोरवो तात ॥
शील सोभागवती रे, सु दरी पदमावाई जेहनी मात।
पुत्रम .. योरे लक्षण सहित पवित्र सुजात ॥ ५ ॥
सघपति कहान जी रे सघ वेण जीवादे नो कत।
सहेसकरण सोहे रे तरुणी तेजल दे जयवत ॥
मलदास मनहरु रे मारी मोहन दे अति सत।
रमा दे वीर भाई रे गोपाल वेजलदे मन मोहत ॥ ६ ॥

बारडोली मध्ये रे, पाट प्रतिष्ठा कीध मनोहार।
एक शत आठ कुभ रे ढाल्या निर्मल जल अतिसार ॥
सूर मत्र आपयो रे सकल सघ सानिध्य जयकार।
कुमुदचद्र नाम कह्यू रे, सघवि कुटब प्रतपो उदार ॥ ७ ॥

गीत (४४)

चालि—मोटो मुनि जी मोहन रूपे जाणिए।
. . ॥
मुखमडल जी पूरण शशि सोहामणो।
रूप रग जी करुणावत कोडामणो ॥

त्रोटक—कोडामणो ए रूप रगि रतनकीरत सूरीराय जी।
एकें ते चिते अनुभव्यो, पूजो ते ए गोर पाय जी ॥
पाय पूजो गुरु तणा जिम पामो सुख भडार जी।
सू दर-दीसे सोभतो भवियण नो आधार जी ॥

चालि—कीया पतिपाले भलो।
अभिनदह जी पाटि, उदयो गुण निलो ॥
विद्यावत जी शास्त्र सिद्धान्त सहू लह्यू।
संगीत सार जी पिंगल सहु पाठे कहे ॥

त्रोटक—पिंगल सहू पाठइ कहेने वाणी विवुध विशाल जी।
पर उपकारी पुण्यवत भलो जीव दया प्रतिपाल जी ॥
जीव दया प्रतिपाल सूणिए गोर गच्छपति सार जी।
मूलसघ माहि महिमा घणो सरस्वती गच्छ सिणगार जी ॥

चालि—गिरुउ गोर जी क्षमावत माधुगु जाणीए।
माया मोह जी मच्छर मनमानाणीए ॥
एहवो गोर जी तप तेजे सो जीपतो।
अवनि माहि जी दिन दिन दीसे दीपतो ॥

त्रोटक—दिन दिन दीसे दीपतो ने हुवड वशे आज जी।
सिहासण सोहे भलो लीला लावन्य लाज जी ॥
लील लावण्य लाज कहीइ रतनकीरति सूरीराज जी।
कर जोडी ने कुमुदचन्द सेवक सार्‌या काज जी ॥

(४५) दशलक्षण धर्म व्रत गीत

धर्म करो ने नित ऊजले रे, जे दश लक्षण सार ।
स्वर्गतणा ते सुख पामीइ, जिम तरीए संसार ॥ १ ॥
क्रोध न कीजे प्राणिया रे, क्रोध करे दुख थाय ।
धार क्षमा गुण धारिता रे, जन्म मरणनो दुख जाय ॥ २ ॥
कोमलता ते गुण आदिए रे, छांडि तजो अभिमान ।
तप जप संयम सहू फले रे, पामो अविचल ठाम ॥ ३ ॥
सरल पणा थी गुण ऊपजे रे, मूंको कपट नो भाव ।
मन नो मैल न राखीइ रे, पामीय निर्मल ज्ञान ॥ ४ ॥
जूठु वचन नवि बोलिये रे, बोलिये साचो बोल ।
सुख सघला ऊपजे रे, तु करिये कलोल ॥ ५ ॥
शौच पणु ते वली पामीए रे, बाह्य अभ्यन्तर भेद ।
भ्रष्ट पणा थी दुख पामीइ रे, कीजे धर्म उछेद ॥ ६ ॥
सुन्दर संयम पालीइ रे, टालिये सर्व विकार ।
इन्द्रीय ग्राम उजाडिये रे, नाखिये दुर्धर भार ॥ ६ ॥
बार प्रकारे तप कीजीइ रे, निर्मल थये रे देह ।
मुगति तणां ते सुख पामीइ रे, जेह तणा नही छेह ॥ ८ ॥
दान मनोहर दीजीये रे, कीजिये निर्मल चित ।
जन्म जरा ना दुख सहु टले रे, पामीय सौख्य अनंत ॥ ९ ॥
ममता मोह न कीजीये रे, चिंतवीइ वैराग ।
साथे कोई न आवसरे, मूंकीये मन नो राग ॥ १० ॥
प्रेम करीने पालीये रे, ब्रह्मचर्य गुण खाणि ।
सामलना सुख पामीइरे, कुमुदचन्द्रनी वाणि ॥ ११ ॥

(४६) व्यसन सातनूं गीत

साते व्यसने वधुधो प्राणी, कीधा कर्म कुकर्म ।
लक्ष चोरासी योनि भमता, न लह्यो धर्म नो मर्म रे ॥
जीव मूके व्यसन असार, जीव छुटे तू संसार ॥जीव७। आचली ॥
व्यसन पहेलू जू वटु रमता, धन सघलू हारी जे ।
नाम जुआरी कहि बोलावे, लोक माहिलाजी जे ॥जीव०॥ २ ॥

बीजे व्यसनें जीव हणी ने, मास अशन थई खायो।
तेहनें नरक माहि रड वडतां, दुख घणी परिथाये ॥जीव०॥ ३ ॥

त्रीजे व्यसनें सुरा जे पीये, तेहनी मति सहु जाये।
भखे आल पखाल असुद्धे, जाति माहि न समाये ॥जीव०॥ ४ ॥

वेश्या व्यसन तजो सहु चोथु, जे छे दुख भण्डार।
धन जाये लपट कहवाये, नासे कुल आचार ॥जीव०॥ ५ ॥

व्यसन पाचमू जीव आखेटक, रमता जीव सताये।
मारे जीव अनाथ अवाचक, ते वूडे भव पाये ॥जीव०॥ ६ ॥

साभलि सीख अह्मारडी छट्ठे म करिस्य केहनी चोरी।
ते सघला मलीने खासे, पडसे तुझ उपरि जमदोरी ॥जीव०॥ ७ ॥

म करिस्य मूरख व्यसन सातमे परनारी नो सग।
हाव भाव करस्ये ते खोटो, जे हवो रग पतग ॥जीव०॥ ८ ॥

जूआ रमता पाडव सीदाये सास थकी वक भूप।
मद्यपान थी यादव खीज्या, वणस्या तेहना काज ॥जीव०॥ ९ ॥

चारुदत्त दुख अति घणु पाम्यो, राज्यो वेश्या रूप।
ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप ॥जीव०॥ १० ॥

चोरी थकी शिवभूति विडव्यो, जी शीके चढी रहे तो।
परनारी रस लपट रावण, ते जग माहि विगूतो ॥जीव०॥ ११ ॥

व्यसन एक ने कारण प्राणी, पाम्या दुक्ख समूह।
जे नर सघला व्यसन विलूधा, टेहनी सी कहू वात ॥जीव०॥ १२ ॥

इम जाणी जे विसर्जे, मनि घरी सार विचार।
श्री कुमुदचद्र गुरु ने उपदेशे ते पामे भव पार॥
जीव मूके व्यसन असार, जेम छूटे तु ससार ॥जीव०॥ १३ ॥

(४७) अठाई गीत

गौतम गणघर पाय नमीने, कहेस्यु मुझ मति सारुगी।
साभलियो भवियण ते भावी, अष्टाह्निका विधि वारु जो ॥ १ ॥

मास अषाढ मनोहर सोहे, कार्तिक फागुण मासि जी।
आठमी धरी उपवास जी कीजे, मनुस्यु अति उल्लास जी ॥ २ ॥
नाम भलू नदीश्वर तेहनू, टाले भवना फद जी।
एक लक्ष उपवास तणू फल, बोले वीर जिणंद जी ॥ ३ ॥

नवमी दिन पकासन कीजे महा विभव तप नाम जी ।
दश हजार उपवास तणू, फल पामे शिव पद ठाम जी ॥ ४ ॥

दशमीने दीहाडे ते कीजइ, काजि कनो ग्रहार जी ।
त्रैलोक्य सार शुभ नाम मनोहर, आपे त्रैलोक्य सार जी ॥ ५ ॥

साठि हजार उपवास फलेंते, टाले मन ना दोष जी ।
एकादशीइ एकल ठाणू चोमुखे तप सतोप जी ॥ ६ ॥

पाच लक्ष दश गुण उपवासह जे छे पुण्य भण्डार जी ।
वारसिनें दिवसे ते कीजे, अणागार सुखकार जी ॥ ७ ॥

पाच लाख तप नाम चोरासी, लाख उपवास सफल कहीइ जी ।
तेरसि पट्रस अशन करी जे, स्वर्ग सोपानें रहीये जी ॥ ८ ॥

च्यालिस लक्ष उपवास तणू फल, आपे अति अभिराम जी ।
एक अन्न त्रिण व्यजन जमीइ, चउदिश दिन सुख धाम जी ॥ ९ ॥

सर्व सम्पदा नाम महातप, कहिये कलिमल नामे जी ।
एक लक्ष उपवास तणू फल, गौतम गणधर भासे जी ॥ १० ॥

पूनिम नो उपवास ज करिये इद्रकेतु तप भणीइ जी ।
त्रिण्य कोडि शिर लाख प्रमाणें, उपवासह फल गणिद जी ॥ ११ ॥

सर्व मिलीने पाच कोडि एकतालिस, लक्ष दश सहस्र जी ।
वर उपवास तणू फल तहीये, अष्टाह्निका व्रत करेसि जी ॥ १२ ॥

मदन सुन्दरीइ मनने रगे, श्रीपाले व्रत कीधू जी ।
मन माहि अति भाव वरीने, मन वाछित तस सीधू जी ॥ १३ ॥

जे नरनारी व्रत करीस्य, तेहनें घरि आणद जी ।
रत्नकीरति गोर पाट पटोधर, कुमुदचद्र सुरिंद्र जी ॥ १४ ॥

(४८) भरतेश्वर गीत

श्री भरतेश्वर रायस्या शुभ कीधला रे ।
कोण पुण्य कीधला रे ।
जिणे तात आदीश्वर पाम्या ।
सुरनर सेवित पाय ॥ १ ॥

समोसरणजी रचना जेहने, अण्य शालि निहा भासइ ।
मानस्तभ च्यारे निमि सुन्दर, जेहथी मन उल्हासे ॥

वृक्ष अशोक अनोपम पुष्पित, शोभे श्री जिन पासे ।
जन्म जन्मना रोग शोक दुख, जे दीठे सहु नासे ॥ २ ॥

परिमल भार अपार गगन थी, कुसुम वृष्टि महिथाये ।
उहरि भ्रमर करे गु जारव, जाणे जिन गुण गाये ।
सर्व जीवनी भासा माहि, सशय सघला जाये ।
साभलता दिव्य ध्वनि, जिननी मन मा हर्ष न माये ॥ ३ ॥
चचच्चन्द्र मरीचि मनोहर, उपरि चमर ढलाये ।
जे नर नमें जिनेश्वर चरणे, तेहना पाप पुलाये ॥

हेम सिहासन उपरि वेठा, जिन शोभा न कलापे ।
च्यारे पासेइ चतुर्मुख दीसे, जोता तृप्ति न पाये ॥ ४ ॥
दीन दयाल प्रभु नी पाछलि, भामडल अति राजे ।
तेज पुज देखीने जेहनू, रवि रजनीकर लाजे ॥

अतिगम्भीर तार तरलस्वन देव दुदभि वाजे ।
जाणे मोह विजय वाजित्रज नादे अबर गाजे ॥ ५ ॥
मजुल मुक्ता जाल विराजित, छाजे छत्र अनूप ।
जेहनो इद्रादिक जस गावे त्रण्य जगत नो भूप ॥

प्रातिहार्य वसु सख्य विभूषित, राजे रम्य सरूप ।
केवलज्ञान कलित भुवनत्रिक ते तारे भव कूप ॥ ६ ॥
भव्य जीव ने जे सबोधे, चोवीस अतिशयवत ।
युगला धर्म - निवारण स्वामी महिमडल विचरत ॥
शेष कर्म ने जीते जिनवर थया - मुक्ति श्रीवत ।
कुमुदचन्द्र कहे श्री जिन गाता, लहिये सुक्ख अनत ॥ ७ ॥

(५०) पार्श्वनाथ गीत

हासोट नगर सोहामणो - जिन सुन्दर वामानद ।
गर्भ महोछव जेहनें सहू, आव्या इद्र आणद ॥
पासजी सपति पूहोजी, सकटहर सकट चूरो जी ॥ १ ॥

वादल नही वरसा नही, नही गाजने वीज प्रचण्ड ।
अउछ कोडि वररत्ननी, नित वरसे धार अखण्ड ॥ २ ॥

नयणदीठो नही साभल्यो, कही रयण तणो वलि मेह ।
ते तुझ मात गृह आगणे, दठो दिन दिन अतिशय येह ॥ ३ ॥

जन्म जाण्यो जिन जी तणो, त्यारि मिलिया अमर सु जाण।
मेरु शिखर लेई जाई सिहा, कीधू जनम विधान ॥ ४ ॥

सजल घनाघन सामलो, अतिकाय कला मनोहर।
रूप अनोपम जोवता, काम कोटि कीजे वलिहार ॥ ५ ॥

मन वेराग धरी करी, तह्यें मूक्यु महीपति साज।
बाल तप आदर्यो, तह्यें कीधू आतम काज ॥ ६ ॥

पछे योग जुगुति तीणें करी, धारी निर्मल आतम ध्यान।
घाति कर्मनो क्षय करी, उपनू वर केवल ज्ञान ॥ ७ ॥

लोक अलोक विषय करी, हरे पाप तिमिर जिनराज।
रवि छवि नवि शोभा लहे, चालि चन्द्र कला करी लाज ॥ ८ ॥

जीनिय घातिय चोकडी, तह्मे पाम्या परम पद स्थान।
अकल स्वरूप कला तोरी, तु तो अमिन अमेरु समान ॥ ९ ॥

श्रीरतनकीरति गुरुनें नमी, कीधा पावन पचकल्याण।
सूरी कुमुदचद्र कहे जे भणे, ते पामें अमर विमान ॥ १० ॥

(५१) अंघोलडी गीत

रमति करी घरि आवीया, कहे मरुदेवी माय।
आवो वच्छ अघोलवा, रुडा त्रिभुवन केरडा राय ॥

ऋषम जी अघोलियो अघोलडी अगि सोहाय।
अंघोलिये प्रथम जिनेंद्र अघोलिये त्रिभुवन चद्र ॥ १ ॥

अगि लगाडू अति भलू, मघ मघ तु मोगरेल।
नखर सूये मुग चोपडु घालू माये सारु केवडेल ॥ २ ॥

केसर चदन बावना भलू माहि व रास।
अगर तणो रग जो करो, अने उगटणू सुवास ॥ ३ ॥

सुन्दर गन घोली करी, नह्वरावे सुरनारि।
सुवर्ण कु डी जने भरी, नेमि त्रल-त्रल निर्मल वारि ॥ ४ ॥

जब अंघोलि चढिया अगोछि जिन अंग।
रग सुरग विराजितु पहेर्या नाह्ना पीतावर चग ॥ ५ ॥

आजि आगि सोहामणी, त्रिभुवन जन मोहन।
अति सुन्दर टेगर तणु, रुडु निलवट तिलक सोहन ॥ ६ ॥

उठ्या कुअर कोडामणा, करो सुखडली सार ।
वेसी सुवर्ण वेसणें, मेहलू मेवा मीठा मनोहार ॥ ७ ॥
खारिक खड़ लेलानवा दाख वदाम अखोड ।
पिस्ता चारोली भली, खाता मनस्यु थाये घणू कोड ॥ ८ ॥
घेवर फीणी खाजली, सखर जलेबी जाणि ।
मोदकने तल साकली चण्या साकरिया रस खाणि ॥ ९ ॥
एम नाना विध सूखडी, करी उठ्या नाभि मल्हार ।
खाधा पान सुरगस्यु, मरुदेवी करे सिणगार ॥ १० ॥
झिणो झगो विराजतो वाधी घटी आणद ।
नवल पछेडी सोभती मोह्य मोलियो सुरनर वृंद ॥ ११ ॥
कांने कुडल लहकता, हार हैए झलकत ।
कडिदोरो कडि उपतो, पगे घुघरडी घमकत ॥ १२ ॥
वाजू वध सोहामणी, राखडली मनोहार ।
रूपे रतिपति जीतीयो जाये कुमुदचन्द्र वलिहार ॥ १३ ॥

(५२) चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण चौपई

आदि जिनेश्वर प्रणमो पाय ।
युगला धर्म निवारण राय ॥
धनुष पचसे उच शरीर ।
कनक कांति शोभित गभीर ॥ १ ॥
अजित नाथ आये सुर लोक ।
जनम मरण ना टाले शोक ॥
धनुष आए लेने पचास ।
उच पणे हाटक सम भास ॥ २ ॥
समव जिन सुख आये वहु ।
अहि निश सेव करे ते सहू ॥
धनुष च्यारसे दे प्रमाण ।
हेम वरण शोभे वरणाय ॥ ३ ॥
अभिनंदन नमतां दुख टले ।
मन ना वछित सघ ....॥
.... उठते मण्डित काय ।
हेम काति दीठा सुख थाय ॥ ४ ॥

सुमतिनाथ वर मति दातार ।
उतारे भव सागरनों पार ॥
धनुष त्रिणसे सोहे देह ।
जत रोचि पूजो जिन एह ॥ ॥ ५ ॥

पमकाद्ति करुणा कर क्षेव ।
सुर नर किन्नर सारे सेव ॥
चाप अढीसे मूरति मान ।
अरुण अनूपम दीये वानि ॥ ६ ॥

सेवो सु दर देव सुपास ।
जि पूरे वर मननी आस ॥
उ च पणे तनु शत युग चाप ।
नील वरण टाले सताप ॥ ७ ॥

चन्द्रभास चद्रानन भलो ।
शत मुख सेव करे जगतिलो ॥
धनुष डौढ सो मान जिणद ।
गोर काति टाले भव फद ॥ ८ ॥

पुष्पदंत सेवो मन शुद्धि ।
जे आये अति निर्मल बुद्धि ॥
सोज सराशन तनु उत्त ग ।
ऊजलडू सोभे जसु अ ग ॥ ९ ॥

शीतलनाथ सुशीतल वाणि ।
जे जिनवर गुण गणनी खाणि ॥
नेऊ चाप शरीर अनूज ।
हेम वरण सेवे जस भूप ॥ १० ॥

सेवो देव भलो श्रेयान ।
जे आपे मन वछित दान ॥
ऊच पणे विमऊ ।
वनुष हेम सम तनु जगदीश ॥ ११ ॥

वासुपूज्ये पूजो मन रग ।
जे पहिरे नवि भूषण अ ग ॥
सित्यर चाप अरुणस्यु रूप ।
तेहनें नित्य उवेषो धूप ॥ १२ ॥

दोहा—पुण्य करो रे प्राणिया, पुण्य भलू ससार ।
पुण्ये मन वछित मिले, रूप रगीली नारि ॥ १३ ॥

पाप न कीजे पाडुआ, पाप थकी दुख थाय ।
पापी भार्यो प्राणियो, च्यारे गति मे जाय ॥ १४ ॥

चौपाई—वदो विमल विमल गुणवत ।
जेहना चरण नमे नित सत ॥
साठि सराशन देहज कर्यो ।
हेम वरण मुगति जइ रह्यो ॥ १५ ॥
समरो देव दयाल अनत ।
अवर न कीजे खोटा तत ॥
देह शराशन वे पच बीस ।
हाटक सरखी छवि नवि रीस ॥ १६ ॥
धर्मनाथ नें मन मां धरो ।
जिन शिवरमणी हेला वरो ॥
त्रीस पनर धनुष सोहंत ।
हेमवरण सुर नर मोहत ॥ १७ ॥
शातिनाथ नू समरो नाम ।
जिन अधात टाले से ठाम ॥
विसुणा बीस शरासन वेर ।
हेम वरण जाणे नवि फेर ॥ १८ ॥
कुंथु जिनेश्वर करूणा कद ।
जेहना चरण नमे सुर वृ द ॥
धनुष बीस पनर तन काय
'हेम' वरण सुर नर जस गाय ॥ १९ ॥
समर्या सिद्धि करे अरनाथ ।
मुगति पुरी नो जे जिन साथ ॥
धनुष त्रीस ऊ चा अति भला ।
शात कुभ नरपी तनु कला ॥ २० ॥
मल्लि जिनेश्वर महिमा घणो ।
जैह टाले फेरो भवतणो ॥
ऊ चू अ ग धनुष पच बीस ।
हेम वरण सेवो निश दीश ॥ २१ ॥

पूजो जिन मुनिसुव्रत सदा।
रोग सोग नव आवे कदा ॥
धनुष वीस तनु कलि काति।
जेह नामे नासे भव भ्राति ॥ २२ ॥
सेवो नमि नमि तस चरण।
सेवक जन नें शिव सुख करन ॥
पन्नर चाप शरीर सु हेम।
वरण भस्म लो जमना क्षेम ॥ २३ ॥
पूजो पद नेमीश्वर तणा।
जि पहोचे मननी सहु मणा।
उच पणे दश धनुष सुस्याम।
काय कला दीसे अभिराम ॥ २४ ॥
भवियण सहू समरो जिन पास।
जिम पहोचे सहू मननी आस ॥
उच पणें दीसे नव हाथ।
हरीत वरण दीसे जगनाथ ॥ २५ ॥
महावीर वदू त्रिण काल।
जिम मेटे भव जग जजाल ॥
सात हाथ सोहे जस तनू।
हेम वरण शोभे अति घणू ॥ २६ ॥
ए चोवीसे जिनवर नमो।
जिम ससार विषे नवि भमो ॥
पामो अविचल सुखनी खाणि।
कुमुदचन्द्र कहे मीठी वाणि ॥ २७ ॥

(५३) श्री गौतम स्वामी चौपई

प्रेह ऊठी लियो गौतम नाम।
जिम मन वछित सीझे काम ॥
गौतम नामि पाप पलाय।
गौतम नामि भावठिजाय ॥ १ ॥
गौतम नामे नासे रोग।
गौतम नामे सुन्दर भोग ॥

गौतम नामे गुण सपजे ।
गौतम नामे भूपति भजे ॥ २ ॥
गौतम नामे पुहचे आस ।
गौतम नामि लच्छि विलास ॥
गौतम नामे सब अघ टले ।
गौतम नामे सज्जन मिले ॥ ३ ॥
गौतम नामे बाघे वुद्धि ।
गौतम नामि नव निधि सिद्धि ॥
गौतम नामे रूप अपार ।
गौतम नामे हय गय सार ॥ ४ ॥
गौतम नामि मदिर घणा ।
गौतम नामि सुख सहु तणा ॥
गौतम नामि गमती नारि ।
गौतम नामे मोहे ' '" ॥ ५ ॥
गौतम नामि वहुदी करा ।
गौतम नामि नावे जरा ॥
गौतम नामि विष उतरे ।
गौतम नामे जलनिधि तरे ॥ ६ ॥
गौतम नामे विद्या घणी ।
गौतम नामें निर्विष फणी ॥
गौतम नामि हरी नवि नडे ।
गौतम नामें नवि आखडे ॥ ७ ॥
गौतम नामे नोहे शोक ।
गौतम नामे माने लोक ॥
सेवो गौतम गणधर पाय ।
कुमुदचद्र कहे शिव सुख थाय ॥ ८ ॥

(५४) संकटहर पार्श्वनाथनी विनती

गौतम गणधर प्रणमू पाय, जेह नामे निरमल मति थाय ।
गासु पास जीनेन्द्र ॥ १ ॥
अश्वसेन कुल कमल नभोमणी, जग जीवन जिनवर त्रीभोवन धणी ।
वामा राणी नदो ॥ २ ॥

कमठ महा मदकरी पचानन, भवीक कुमुद वन हिमकर आनन ।
भव भय कानन दावो ॥ ३ ॥
नील वरण अति सुन्दर सोहे, निरखता सुर नर मन मोहे ।
मनु मगल मावो ॥ ४ ॥
नगर वराणसी जनम ज कहीये दरशन दीठे सिव सुख लहीये ।
महीयले महिमावत ॥ ५ ॥
वाल पणे जर सीघो, मोह महाभटनो क्षय कीवो ।
लीधु पद अरिहत ॥ ६ ॥
समोहसरण जीनवरनु राजे, केवल ज्ञान कला अति छाजे ।
भाजे भव सदेह ॥ ७ ॥
वाणी मधुरी मनोहर गाजे, अण वाजा वाजित्र ज वाजे ।
लाजे पावस मेह ॥ ८ ॥
देस विदेस वीहार करीने, कर्म पलोल सहु दूर हरीने ।
पाम्या परमानदो ॥ ९ ॥
तुम नामे सहु भावेठ भाजे, तुम नामे सुख सपति छाजे ।
छूटे भवना फद ॥ १० ॥
रोग सोग चिंता सहु नासे, तुम नामे रुद्धी मत भाजे ।
आणद अग अपार ॥ ११ ॥
तुम नामे मेघल मद जलभर, रोस चढो केशरी अति दुद्धर ।
तेन करे कन थार ॥ १२ ॥
तुम नामे शीतल दावानल, तुम नामे फणपति अति चचल ।
नेह न करे मन सोस ॥ १३ ॥
उद्धति अरियण थलम वलाकर टले दुष्ट जलवर ।
न हो वधन सोख ॥ १४ ॥
मात पिता तुम सज्जन स्वामि, तह्म बावव तह्मे अतर जामि ।
तमे जग गुरु मने ध्याउ ॥ १५ ॥
सकटहर श्री पाश जिनेश्वर, हासोट नयरे अतिसय सोभाकर ।
नित नित श्री जीन गाउ ॥ १६ ॥
जे नर नारि मनसु भणसे, तेहने घर नव निंध सपसे ।
लहसे अविचल ठाम ॥ १७ ॥

श्री रतनकीर्ति सुरिवर जतिराय, तेह परसादे जिन गुण गाय ।
कुमुदचंद्र सुर नामि ॥ १८ ॥

(५५) लोडण पार्श्वनाथनी विनती

समरू सारदा देवि माय, अहनिशि सुर नर सेवे पाय ।
आये वचन विलास ॥ १ ॥

लाड देस दीसे अभिराम, नगर डभोई सुन्दर ठाम ।
जाहा छे लोडण पाश ॥ २ ॥

आवे सघमली मनरगे, नर नारि वादे सहु संगे ।
पूजे परमानदो ॥ ३ ॥

जय जयकार करे मन हरखे, जिन उपर कुसुमाजलि वरषे ।
स्तवन करे बहु छदे ॥ ४ ॥

गाये गीत मनोहर सादे, पच सवद वाजे करि नादे ।
. नारि वृ द ॥ ५ ॥

वेलुनी प्रतिमा विख्यात, जाणे देस विदेसे वात ।
सोहे शीस फणेद ॥ ६ ॥

सागरदत्त हतो वणजारो, पाले नियम भलो एक सारो ।
जिन वदी जय वानी ॥ ७ ॥

एक समय वाटे उतरीये, जम वावेला जिव साभरीयो ।
सच करे प्रतिमानो ॥ ८ ॥

वेलुनी प्रतिमा आलेखी, वादी पूजीने मन हरखी ।
ते पधरावि कुपे ॥ ९ ॥

त्यारे ते वलुनी मूरत, जल माहि थई सुन्दर सूरत ।
अग अनोपम रूपे ॥ १० ॥

वणजारो ते वेहेलो आव्यो, बलतो लाभ घणो एक लाव्यो ।
उतरीयो तेणे ठामे ॥ ११ ॥

सागरदत्त करे सु विचार, वाटे कुशल न लागी वार ।
ते स्वामिने नामे ॥ १२ ॥

राते सुपन हवू ते त्यारे, केम नाखी कूप मझारे ।
काढ ईहा थी मझने ॥ १३ ॥

घणे कष्ट जिनराज नु देव पाम्यो ।
हवे सर्व संसारना दुक्ख वाम्यो ॥
जारे श्री जिनराज नु रूप दीठू ।
त्यारे लोचने स्यढलु अमीय वूठु ॥ ७ ॥

आवी कामधेनु घर मांहे चाली ।
भरी रत्नचिंतामणी हेम थाली ॥
जाणू घर तणी आगणे कल्पवृक्ष ।
फलो आलव वांछित दान सौक्ष ॥ ८ ॥

गयो रोग संताप ते सर्व नाठो ।
जरा जन्मने मरण नो आसना हाठो ॥
हवे सरणे आप्या तणी लाज कीजे ।
कर्‍या जे अपराध सहु खमीजे ॥ ९ ॥

घणु विनवू, नवू छु जगनाथ देवो ।
मने आप जो भव भज स्वामि सेवो ॥
एह वीनती भावसु जे भणसे ।
कुमुदचंद्र नो स्वामि शिव सौख्य देसे ॥ १० ॥

(५७) राग प्रभाती

जाग रे भवियण उद्यम नवि कीजे ।
थयु सु प्रभावित नोकार गणीजे ॥ आंकली ॥

प्रथम अरहंतनू लीजिये नाम ।
जेम सरेरु अडला वछित काम ॥ जागो० ॥ १ ॥

सिद्ध समरता आलस मूको ।
माणस जनम ते फोकम चूको ॥ जा० ॥ २ ॥

पच आचार पाले यतिराय ।
तेहनें वदता पाप पलाय ॥ जा० ॥ ३ ॥

जे उवझाय साहे श्रुतवत ।
तेहनू ध्यान धरिये एक चित ॥ जा० ॥ ४ ॥

साधु समरीई जे व्रत पाले ।
निर्मल ताप करी कर्ममल टाले ॥ जा० ॥ ६ ॥

पच परमेष्ठि जे ए नितु ध्याई ।
कहे कुमुदचद्र ते नर सुखी थाये ॥ जा० ॥ ७ ॥

(५८) राग प्रभाती

जागि हो भवियण सफल विहाणु ।
नाम जिनराज नूल्योतले भाण ॥ १ ॥ आचली ॥
वृषभ जिन अजित सभव सुखकारी ।
देव अभिनदन प्रगट्यो भवहारी ॥ जा० ॥ २ ॥
सुमिति पद्मप्रभ सागर गुण गाउ ।
जिनको सुपासना गुण गण ध्याये ॥ ला० ॥ ३ ॥
चितवो चद्रप्रभ देव जिनराज
पुष्पदत्त नमो जिन सरे काज ॥ जा० ॥ ४ ॥
सकल सुख खाणी सीतल जिनदेव ।
समरो श्रेयास सुर नर करे सेव ॥ जा० ॥ ५ ॥
पूजता वासुपूज्य गुण सार ।
विमल अनत भवसागर तार ॥ जा० ॥ ६ ॥
धर्म जिन शाति कुथ अर मल्लि ।
भग कीधी जेणें कामनी मल्ल ॥ जा० ॥ ७ ॥
नमो मुनिसुव्रत नमि दुख चरण ।
नेमि जिनवर मन वाछित पूरण ॥ जा० ॥ ८ ॥
पास जिन आस पूरे महावीर ।
एह चोवीस जिन मेरु समधीर ॥ जा० ॥ ९ ॥
जे नर नारी ए वीनती गास्ये ।
कहे कुमुदचन्द्र ते नर सुखी थास्ये ॥ जा० ॥ १० ॥

राग प्रभाती (५९)

जागि हो भवियण उघीये नही घणू ।
थयुासु प्रभाति तू नाम ले जिन तणू ॥आचली॥ १ ॥
उठी जिनराजनें देहरे जइए ।
देव मुखि देखता जिम सुख लहीये ॥जागि०॥ २ ॥
पछे पद वदीई श्री गोर केरा ।
छुटीइ जिम वली भवतणा फेरा ॥जागि०॥ ३ ॥
देव गूरु साख्य समायक कीजे ।
पच परमेष्टी नाम जपीजे ॥जागि०॥ ४ ॥

तु काचे तातणवे साडे, काढे हु न वलागुं भामारे ।
तुझने ॥ १४ ॥

वणजारो जाग्यो वेलक सु, उठो उल्टकर वरीयो मनसु ।
गयो ताहा परभाते ॥ १५ ॥

सज्जन साथे वात करीने, मुक्यो तातण जिन समरीने ।
सागरदत्तो जाते ॥ १६ ॥

काचे तातण जिनवर वैठा, लेहे कता सहु लोके दीठा ।
हलवा फूल समान ॥ १७ ॥

वाहेर पधारावि वे सार्या, जे जे जन सहु कोणे जुहार्या ।
आप्पा उलट दान ॥ १८ ॥

जोतां हइडे हरष न भाय, वचने रूप कहु नवि जाय ।
चित असभम थाय ॥ १९ ॥

नाना विध वाजित्र व जाडे' आगल थी खेला न चाडे ।
माननी मगल गाये ॥ २० ॥

आएया अधीक दीवाजा साथे, वणजारे लीधा जिन हाथे
रम्य डंभोई गाम ॥ २१ ॥

रुडे दीन मूरत जोडने, वारु पूजा नमण करीने ।
पधराव्या जिन धामे ॥ २२ ॥

नाम घरु ते लोडण पास, पचम काले पूरे आस ।
वाका विघन निवार ॥ २३ ॥

नामे चोर नडे नही वाटे, ऊजड अटवी डूगर घाटे ।
नदीयो पार उतारे ॥ २४ ॥

भूत पिशाच तणो भय टाले, चेडा मन्न न सभ्रन ।
डाकीणी दूरे त्रासे ॥ २५ ॥

व्यंतर वा पाणी थई जाये, जस नामे विषहर नवि खाये ।
वाघ न आवे पासे ॥ २६ ॥

भव भवनी भावेठ जे मजे, रण माहि वेरी नवि गजे ।
रोग न जावे अ गे ॥ २७ ॥

जेहने नामे नासे सोक, सकट सघला थाये फोक ।
लक्ष्मी रहे नित सगे ॥ २७ ॥

नाम जपता न रहे पास. जनम मरण टाले सताप ।
आपे मुगति नीवास ॥ २९ ॥

जे नर समरे लोडण नाम, ते पामे मन थाछित काम ।
कुमुदचद्र कहे भाषा ॥ ३० ॥

(५६) जिनवर विनती

प्रभु पाय लागु करू सेव ताहारी ।
तमे साभलो श्री जिनराव माहारी ॥
मन्हे मोह वेरी पराभव करे छै ।
चौगति तणा दुक्ख नही वीसरे छे ॥ १ ॥
हू तो लक्ष चोरासिय योन माहि ।
भम्यो जनम ने मरण करे मभाहे ॥
पूरा मे कर्‌या कर्म जे धर्म छाडी ।
कवहु ते सहु साभलो स्वामी माडी ॥ २ ॥
हू तो लोभ लंपट थयो कपट कीधा ।
घणू मोलवी परतणा द्रव्य लीधा ॥
वली षड पोस्यो करी जीव हसा ।
करी पारकी कुतली निज प्रसस्या ॥ ३ ॥
मे तो वालीया पार का मर्म मोसा ।
नही भासीया आपणा पाप दोसा ॥
सदा सग कीधो परनारी केरो ।
नही पालीयो धर्म जिन राज तेरो ॥ ४ ॥
पद्‌मोघर तणे पास ... ।
नही सभल्यो जिन उपदेस सुधो ॥
हू तो पुत्र परिवार ने मोह मातो ।
नही जाणीयो जिनवर काल जातो ॥ ५ ॥
गृहरिंभनु पाप करी षड मार्‌यो ।
माहा मुरखे नरभव फोक हार्‌यो ॥
गयो काल ससार आले भमता ।
सह्या ते अति दुर्गति दुख अनता ॥ ६ ॥

ते पछी गुरु वचनामृत पीजे ।
जिम भव दुख जलाजलि दीजे ॥जागि०॥ ५ ॥
कीजीये सगति साधुनी रुडी ।
जेहथी उपजे नही मतिमूडी ॥जागि०॥ ६ ॥
क्रोध माया मद लोभ मूकीजे ।
हसीय सुपामने दानजदीजे ॥जागि०॥ ७ ॥
वोलिये वचनते सर्व सोहातु ।
जेहथी उपजे नही दुख जातु ॥जागि०॥ ८ ॥
मूकीय मोह जजाल सहू खोटु ।
जोडस्ये को नही श्रायुप त्रूटे ॥जागि०॥ ६ ॥
जायछे योवन थाप तु डार्यो ।
तप जप करीस्ये ने लीजीये लाहो ॥ जागि० ॥ १० ॥
कहे कुमुदचन्द्र जे एह चिंतवस्ये ।
तेहने घरि नितु मगल विलस्ये ॥ जागि० ॥ ११ ॥

राग प्रभाती (६०)

श्रावो रे सहिय सहिलडी सगे ।
विघन हरण पूजीये पास मनरगे ॥ श्राचली ॥
नीलवरण तनु सुन्दर सोहे ।
सुरनर किन्नरना मन मोहे ॥ श्रावो० ॥ १ ॥
जे जिन वदिता वाछित पूरे ।
नाम लेता सहु पातक चूरे ॥ श्रावो० ॥ २ ॥
जे सुप्रभाति उठी गुण गाये ।
तेहनें घरि नव निधि सुख थाये ॥ श्रावो० ॥ ३ ॥
भय भय वारण त्रिभुवन नायक ।
दीन दयाल ए शिव सुख दायक ॥ श्रावो० ॥ ४ ॥
श्रतिशयवत ए जगमाहि गाजे ।
विघन हरण वारु विरुद विराजे ॥ श्रावो ॥ ५ ॥
जेहनी सेव करे धरणेंद्र ।
जय जिनराज तु कहे कुमुदचन्द्र ॥ श्रावो ॥ ६ ॥

राग प्रभाती (६१)

उदित दिन राज रुचि–राज सुविभात ।
भाथ भावच भावय मुभ जात ॥
मु चहे मदत्वं मचक नत सुर ।
भज भगवत मभि भूरि भाभासुर ॥ १ ॥
त्यक्त तारुण्य युत तरुणी वर भोग ।
योग युक्ता यति ध्यान धृत योग ॥ मु० ॥ २ ॥
धृतह सित वदन कज भविक शत शात ।
विसृत विस्तार तम उच सघात ॥ मु० ॥ ३ ॥
सुरवर स्तुति मुखर मुख भूरि सुखमा कर ।
विश्व सुख भूमिनो वघनत्व हर ॥ मु० ॥ ४ ॥
विगत तारा वर विहत घन तद्र ।
हस भासा प्रमुद कुमुदचन्द्र ॥
मु चहें मदत्व मचक नत सुर ॥ मु० ॥ ५ ॥

राग पचम प्रभाती (६२)

आवोरे साहेली जइए यादव यणी ।
पाउले लागीने कीजे वीनती घणी ॥
आवडो आडवर करी सेहने ते आव्या ।
तोरण थी पाछा वली जाता लोक हसाव्या ॥ आ० ॥ १ ॥
विण वांके किम मू की ने चाल्या रुडा सामला ।
मनुस्यु विमासी जुयो मु की आमला ॥ आ० ॥ २ ॥
पीउडा पाखिरे किम मदिर रहीइ ।
कुमुदचन्द्र नो स्वामी कृपाल कहीइ ॥ आ० ॥ ३ ॥

राग देशाष प्रभाती (६३)

जागि हो भोरु भयो कहा सोवत ॥
सुमिरहु श्री जगदीश कृपानिधि जनम बाधिक खोवत ॥जागि॥ १ ॥
गई रजनी रजनीस सिधारे, दिन निकसत दिनकर फुनि उवत ।
सकुचित कुमुद कमलवन विकसत,
सपति विपति नयननी दोउ जोवत ॥जागि०॥ २ ॥
सजन मिले सब आप सवारथ, तुहि बुराई आप शिर ढोवत ।
कहत कुमुदचन्द्र यान भयो तुहि,
निकसत घीउ न नीर विलोवत ॥जागि॥ ३ ॥

(६) चन्दा गीत

विनय करी रायुल कहे, चदा ! वीनतडी अवधारो रे।
उज्जल गिरि जई वीनवो, चदा ! जिहा छे प्राण आधार रे।

गगने गमन ताहरु रूवडू, चदा ! अमीय वरपे अनत रे।
पर उपगारी तू भलो, चदा ! वलि वलि वीनवु सत रे ॥ १ ॥

तोरण आवी पाछा वल्या, चदा ! कवण कारण मुझ नाथ रे।
अह्य तणो जीवन नेमजी, चदा ! खिण खिण जोउ छु पथ रे ॥ २ ॥

विरह तणा दुख दोहिला, चदा ! तें किम मे सहे वाय रे।
जल विना जेम माछली, चदा ! ते दुख मे न कहे वाय रे ॥ ३ ॥

मे जाण्यु प्रीउ आवस्ये, चदा ! करस्ये हाल विलास रे।
सप्त भूमि नेउरडे, चदा ! भोगवस्यु सुखराशी रे ॥ ४ ॥

सुन्दर मदिर जालिया, चदा ! झलके छे रत्ननी जालि रे।
रत्नखचित रुडी सेजडी, चदा ! मगमगे धूप रसाल रे ॥ ५ ॥

छत्र सुखासन पालखी, चदा ! गजरथ तुरग अपार रे।
वस्त्र विभूपण नित नवा, चदा ! अग विलेपन सार रे ॥ ६ ॥

पट रस भोजन नव नवा, चदा ? सूखडी नो नही पार रे।
राज ऋधि सहू परहरी, चदा ! जई चढ्यो गिरि मझारि रे ॥ ७ ॥

भूपण भार करे घणू चदा ! नग मे नेउर झमकार रे।
कटि तटि रसना नडे घनि, चदा ! न महे मोतीनो हार रे ॥ ८ ॥

झलकति झालिहु झवहु, चदा ! नाह विना किम रहीये रे।
खीटली खति करे मुझनें, चदा ! नागला नाग सम कहीये ॥ ९ ॥

टिली मोरु नलवट दहे, चदा ! नाक फूली नडे नाकि रे।
फोकट फरके गोफणे, चदा ! चोट लेस्यु कीजे चाकरे ॥ १० ॥
सेस फुल सीमें नवि धरु, चदा ! लटकती लन सोहावे रे।
घम घम करता घू घरा, चदा ! वीछीया विछि सम भाव रे ॥ ११ ॥
जे सूतो चित्रित उरटे, चदा ! ते रहे आज अगासि रे।
उन्हाले रवि दोहिलो, चंदा ! ते किम सहे गिरि वासे रे ॥ १२ ॥
वरसाले वरसे मेहलो, चदा ! वीजलो नो झातकार रे।
झझावात ते वाज से, चदा ! किम सहे मुझ भरतार रे ॥ १३ ॥
हिम रते हिय अति पडे, चदा ! थर थर कपे काय रे।
ए दिन योग छे दोहिलो, चदा ! स्यु करस्ये यदुराय रे ॥ १४ ॥

पोपटडो बोले पाडवूं, चदा ! मोर करे बहु सोर रे ।
वापीयडो पिउ पिउ लवे, चदा ! कोकिल करे दुख घोर रे ।। १५ ।।

कर जोडी लागू पाउले चदा ! एटलू करो मुझ काज रे ।
जाउ मनावो नेम ने, चदा ! आपू वधामणी आज रे ।। १६ के

अगुलि दश दते धरु, चदा ! जई कहो चतुर सुजाण रे ।
जे मनमथ जग भोलवे, चदा ! ते तुझ मनि छे आण रे ।। १७ ।।

ते माटें मनमथ मोकली, चदा ! कतने करो आधार रे ।
सोल कला करी दीपतो, चदा ! तु रहें हर शिर लीनो रे ।। १८ ।।

मुझ विरहणी ना दीहडा, चदा ! वरस समान ते थाय रे ।
जो तह्मे काम ए नवि करो, चदा ! जगह सारथ थाय रे ।। १९ ।।

सदेसो लेई सचर्‌यो चदा ! गयो ते नेमि जिन पासे रे ।
युगति करी घणू प्रीछव्या, चदा ! मनस्यु थयो ते निरास रे ।। २० ।।

पाछावली आवी कह्यू, चदा ! ते तो न माने बोल रे ।
सामलि रायुल साचरी चदा ! मू की मोहनो जजाल रे ।। २१ ।।

सयम लेई व्रत आचरी चदा ! सोलवे स्वर्गं हवो देवरे ।
अष्ट महा ऋद्धि जेहनें चदा ! अमर अमरी करे सार रे ।। २२ ।।

श्री मूलसघे मडणो चदा ! सुरिवर लखमीचन्द रे ।
तेह पाटि जगि जाणिये, चदा ! अभयचन्द मुणिद रे ।। २३ ।।

पाटि अभयनदी हवा चदा ! रत्नकीरति मुनिराय रे ।
कुमुदचन्द्र जस उजलो, चदा ! सकल वादी नमे पाय रे ।। २४ ।।

तेह पाटि गुरु गुणतिलो, चदा अभयचन्द्र कहे चादो रे ।
जे गास्ये एह चदलो, चदा ! ते जगमा घणु नदो रे ।। २५ ।।

।। भ० अभयचन्द्र कृत चदा गीत समाप्त ।।

राग नट

(७०)

पेखो सखी चन्द्रप्रभ मुखचन्द्र ।। टेक ।।

सहस किरण सम तनु की आभा, देखत परमानन्द ।।पेखो०।। १ ।।
समयसरण सुभभुति विभूपित, सेव करेत सत इन्द्र ।
महासेन कुल कज दिवाकर, जग गुरु जगदानन्द ।।पखो०।। २ ।।
मनमोहन मूरति प्रभु तेरी, मैं पायो परम मुनींद ।
श्री शुभचन्द्र कहे जिन जी मोकू, राखो चरन अरविंद ।।पेखो।। ३ ।।

राग कल्याण (३)

आदि पुरुष भजो आदि जिनेंदा ॥ टेक ॥
सकल सुरासुर शेख सु व्यंतर, नर खग दिनपति सेवित चदा ॥
जुग आदि जिनपति भये पावन ।
पति उदारण नाभि के नदा ॥ १ ॥
दीन दयाल कृपा निधि सागर ।
सार करो अघ तिमिर दिनेंदा ॥आदि०॥ २ ॥
केवलग्यान थें सव कछू जानत ।
काह कहू प्रभु मो मति मदा ॥
देखत दिन दिन चरण सरण तें
विनती करत यो सूरि शुभचन्दा ॥आदि०॥ ३ ॥

राग सारंग (४)

कौन सखी सुध लावे श्याम की ॥ कौन सखी० ॥
मधुरी धुनी मुखचन्द विराजित, राजमति गुणगावे ॥ श्याम० ॥ १ ॥
अग विभूषण मनोमय मेरे, मनोहर माननी पावे ।
करो कछू तत मत मेरी सजनी, मोहि प्राननाथ मीलावे ॥श्याम०॥ २ ॥
गजगमनी गुण मदिर श्यामा मनमथ मान सतावे ।
कहा अवगुन अव दीनदयाल, छोरि मुगति मन भावे ॥श्याम०॥ ३ ॥
सव सखी मिलि मन मोहन के ढिग, जाई कथा जु सुनावे ।
सुनो प्रभू श्री शुभचन्द्र के साहेव, कामिनी कुल क्यो लजावे ॥ ४ ॥

(५) शुभचन्द्र हमची

पावन पास जिनेश्वर वदु अतरीक्ष जिनदेव ।
श्री शुभचन्द्र तणा गुण गाउ, वागवादिनी करि सेव रे ॥ १ ॥
शशि वयणी मृग नयणी आवो सुन्दरी सहू मलि सगे ।
गाऊ श्री शुभचन्द्र तणोवर पाट महोछव रगे ॥ २ ॥
श्री गुजराते मनोहर देशे, जलसेन नयर सोहावे ।
गढ मठ मदिर पोलिपगार, सजल खातिका भावेरे ॥ ३ ॥
'हुवड' वश हिरणी हीरा, सम सोहे मनजी वन्य ।
तस मन रजन माणिक दे शुभ, जायो सुन्दर तन्न रे ॥ ४ ॥

बालपणे बुधिवत विचक्षण, विद्या चउद निधान ।
जैनागम जिन भक्ति करे एह, जिन सासन बहु तान रे ॥ ५ ॥

व्याकर्ण तर्क वितर्क अनोपम, पुराण पिंगल भेद ।
अष्ट सहस्री आदि गथ अनेक जु, च्हो विद जाणो वेद रे ॥ ६ ॥

लघु दीक्षा लीधी मनरगे, वाल पणे जयकारी ।
नवल नाम सोहे अति सुन्दर, सहेज सागर ब्रह्मचारी रे ॥ ७ ॥

छण रजनी कर वदन विलोकित, अर्द्ध ससी सम भाल ।
पकज पत्र समान सुलोचन, ग्रीवा कबु विशाल रे ॥ ८ ।

नाशा शुक चचीसम सुन्दर अधर प्रवाली वृ द ।
रक्तवर्ण द्विज पक्ति विराजित, नीरखता आनन्द रे ॥ ९ ॥

रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभयकुमार ।
सीले सुदर्शन समान सोहे, गौतम सम अवतार रे ॥ १० ॥

एकदा अति आनदे वोले, अभयचन्द्र जयकार ।
सुणयो सहु सज्जन मन रगे, पाट तणो सुविचार रे ॥ ११ ॥

सहेज सिन्धु सम नही को यतिवर, जगमा जाणो सार ।
पाट योग छे सुन्दर एहने, आपयो गछ नो भार रे ॥ १२ ॥

सघपति प्रेमजी हीरजी रे, सहेर वश शृ गार ।
एकलमल्ल अखई अति उदयो, रत्नजी गुण भडार रे ॥ १३ ॥

नेमीदास निरूपम नर सोहे, अखई अवाई वीर ।
हु वड वश शृ गार शिरोमणि, वाघजी सघजी धीर रे ॥ १४ ॥

रामजीनन्दन गागजी रे, जीवधर वर्द्धमान ।
इत्यादिक सघपति ए साते आवा श्रीपुर गाम रे ॥ १५ ॥

पाट महोछव माड्यो रगे, सघ चतुर्विध लाव्या ।
सघपति श्री जगजीवन राणो, सघ सहित ते आव्या रे ॥ १६ ॥

दक्षण देशनो गच्छपती रे, धर्मभूपण तेडाव्या ।
अति आडवर साथे साहमो करीने तप धराव्या रे ॥ १७ ॥

शुभ मुहूरत जोई जिन पूजा, शातिक होम विधान ।
जमणवार युग ते जल जात्रा, आपे श्रीफल पान रे ॥ १८ ॥

सवत् सत एकवीसेरे, जेठ वदी पडवे चंग ।
जय जयकार करे नरनारी, ढाले कलश उत्त ग रे ॥ १९ ॥

धर्मभूपण सूरी मत्र ज आप्या, थाप्या श्री शुभचन्द्र ।
अभयचन्द्र ने पाटि विराजि, सेवे सज्जन वृ द रे ।। २० ।।

दिम दिम मद्दन तबलन फेरी, तत्ताथेई करत ।
पच शबद वाजित्र ते वाजे, नादे नभ गज्जत रे ।। २१ ।।

मनोहर मानिनि मगल गावत, गद्रव करत सुगान ।
वदीजन विरुदावली बोले, आपे अगणित दान रे ।। २२ ।।

श्री मूलसघ सरस्वती गछे, विद्यानन्दी मुनीद ।
मल्लिभूपण पद पकज दिनकर, उदयो लक्ष्मीचन्द्र रे ।। २३ ।।

सहेर वश मडण मुकटामणि, अभयचन्द्र माहत ।
अभयनन्दी मन मोहन मुनिवर, रत्नकीरति जयवत रे ।। २४ ।।

मोठ वश शर हस विचक्षण, कुमुदचन्द्र जयकारी ।
तस पद कमल दिवाकर प्रगट्यो, सेव करे नरनारी रे ।। २५ ।।

अभयचन्द्र गरुयो गछनायक सेवित नृप नर वृ द ।
तस पाटे गुरु श्री सघ सानिध थाप्या श्री शुभचन्द्र रे ।। २६ ।।

परवादी सिंधुर पचानन, वादी मा अकलंक ।
अमर माहि जिम इद्र विराजे, सरवरि माहि ससाक रे ।। २७ ।।

दिवस माहि जिम रवि दीपतो, गिरि मा मेरु कहत ।
तिम श्री अभयचन्द्र ने पाटि, श्री शुभचन्द्र सोहत र ।। २८ ।।

श्री शुभचन्द्र तणीए हमची, जे गाये जिन धामे ।
श्रीपाल विवुध वदे ए वाणी, ते मन वछित पाये रे ।। २९ ।।

।। इति श्री शुभचन्द्रनी हमची समाप्त ।।

(६)

प्रभाति

सुप्रभाति उठी श्री गोर गायो ।
जेम मन वछित वेग ले पाउ ।

सूरी अभयचन्द्र ना पद प्रणमीजे ।
जमन जनम तणा दुख गमीजे ।। सु० ।। १ ।।

पच महाव्रत सुध ला धारी ।
पच समिति वरे अग उदारी ।। सु० ।। २ ।।

अण्य गुपति गुरु चारित्र पाले ।
क्रोध माया मद लोभ ने टाले ॥ सु० ॥ ३ ॥
जेहने शील आभूषण सोहे ।
दीठडे भविव्रयाना मन मोहे ॥ सु० ॥ ४ ॥
वयण सुधारस पा अति मीठा ।
निरखता लोचने अमिय पईठा ॥ सु० ॥ ५ ॥
वचन कला करी विश्व ने रजे ।
वादी अनेक तरणा मद भजे ॥ सु० ॥ ६ ॥
श्री मूलसघ मडरण मुनिराज ।
प्रगट्यो सवोधवा काजि ॥ सु० ॥ ७ ॥
रत्नकीरति पद कुमुद शशि सोहे ।
अभयचन्द्र दीठे जगत मन मोहे ॥ सु० ॥ ८ ॥
तारण तरण गोयम अवतार ।
नित नित वदित विबुध श्रीपाल ॥ सु० ॥ ९ ॥

(७)

प्रभाति

सुप्रभाति नमो देव जिणद ।
रत्नकीर्ति सूरी सेवो आनद ॥ आचली ॥
सबल प्रबल जेणें काय हराव्यो ।
जालणा पोरमाहि यतीये वधाव्यो ॥ सु० ॥ १ ॥
वाग्वादिनी वदने वसे एहने ।
एहनी उपमा कहीसे केहनें ॥ सु० ॥ २ ॥
गछपती गिरवो गुण गम्भीर ।
शील सनाह धरे मनधीर ॥ सु० ॥ ३ ॥
जे नरनारी ए गोर गीत गासें ।
गणेश कहे ते शिव सुख पास्ये ॥ सु० ॥ ४ ॥

(८)

प्रभाति

आवो साहेलडी रे सहू मिलि सगे ।
वादो गुरु कुमूदचन्द्र ने मनि रगि ॥आवो०॥ १ ॥

छद आगम अलकार नो जाण ।
वारु चिन्तामणि प्रमुख प्रमाण ।।आवो०।। २ ।।
तेर प्रकार ए चारित्र सोहे ।
दीठड़े भवियण जन मन मोहे ।।आवो०।। ३ ।।
साह सदाफल जेहनो तात ।
धन जनम्यो पदमा वाई मात ।।आवो०।। ४ ।।
सरस्वती गछ तणो सिणगार ।
वेगस्यु जीतियो दुर्द्धर मार ।।आवो०।। ५ ।।
महीयले मोढ वशे उ विख्यात ।
हाथ जोडाविया वादी सघात ।।आवो।। ६ ।।
जे नरनारी ए गोर गुण गाये ।
सयमसागर कहे ते सुखी थाये ।।आवो०।। ७ ।।

गीत

ढाल मुक्ताफलनी (६)

श्री आदि जिन नमी पाय रे, प्रणमी भारती माय रे ।
गास्यु गच्छपति राय रे, गाता सुख वहु थाय रे ।।
आवो साहेली सघली नारि रे, वादो कुमुदचन्द्र सार रे ।
रत्नकीर्ति पाटि उदार रे, लघु पणे जीत्यो जिणे मार रे ।।आचली।'
गोमडल नयर विशाल रे, तिहा वसे मोढ वश गुणमाल रे ।
सदाफल साह गुणवत रे, घरि रामापदमा सत रे ।। आवो० ।।
ते वेहू कुखि उपनो वीर रे, बत्तीस लक्षण सहित शरीर रे ।
वुद्धि वहोत्तरि छे गभीर रे, वादी नग खडन वज्र समधीर रे ।।आवो०।।
श्री मूलसघे गोयम समान रे, सरस्वति गछ महिमा निधान रे ।
तनू कनक समवान रे, मोटा महीपति मान रे ।। आवो० ।।
पच महाव्रत पाले चग रे, त्रयोदश चारित्र छे अभग रे ।
वावीस परीसा सहे अगिरे, दरशन दीठे उपजे रग रे ।। आवो० ।।
रत्नकीर्ति वोले वाणी रे, अमृत मीठी अमीय समाणि रे ।
वात देशातरे जाणी रे, पाटि आप्यो सुख खाणी रे ।। आवो ।।
कहान जी सहसकरण मल्लिदास रे, वीर भाई गोपाल पूरे आसरे ।
पाट प्रतिष्ठा महोत्सव कीध रे, जग मा यश वहु लीध रे ।। आवो० ।।

वारडोली नगरे मनोहार रे, आप्यो पदनो भार रे।
तव हवो जय जयकार रे, कहे सयमसागर भवतार रे ॥ आवो० ॥

राग धन्यासी (१०)

श्री नेमिश्वर गीत

सखिय सहू मिलि वीनवे वर नेमिकुमार।
तोरण थी पाछा वल्या, करीस्यो रे विचार ॥ १ ॥
राजीमती अति सुन्दरी गुणनो नही पार।
इंद्राणी नही अनुसरे जेहनू रूप लगार ॥ २ ॥
वेणी विशाल सोहामणी जीत्यो श्याम फणिद।
भाल कला अति रूवडी, अरधो जस्योचन्द ॥ ३ ॥
आखडली कज पाखडी, काली अणियाली।
काम तणा शर हारिया जेहनू सु नीहाली ॥ ४ ॥
आनन हसित कमल जस्यु नाक सरल उतग।
घणू अ करीस्यु वखाणीये सुडा चच सुचग ॥ ५ ॥
अरुण अधर सम उपता जेहवी पर वाली।
वचन मधुर जाणी करी कोयल थई काली ॥ ६ ॥
कठे कबु हरावीयो हैयडे हरे चिन्त।
बाहुलता अति लेहकती कर मन मोहत ॥ ७ ॥
अधर अनोपम पातलू जेहनू पोयण पान।
हरी लकी कटि जाणिये उरु रभ समान ॥ ८ ॥
पान्हीस उची अति रातडी आगलडी तेहवी।
सर्व सुलक्षण सुन्दरी नही मलसे एहवी ॥ ९ ॥
रहो रहो लाल पाछा चलो कह्यू वचन ते मानो।
हास विलास करो तह्म अति घणू मातानि ॥ १० ॥
एह वचन मान्यु नही लीधो सयम भार।
तप करीस्या सुख पामिया सज्जन सुखकार ॥ ११ ॥
कुमुदचन्द्र पद चादलो अभयचन्द उदार।
धर्मसागर कहे नेमजी सहू ने जय-जयकार ॥ १२ ॥
॥ इति श्री नेमिश्वर गीत ॥

गीत

राग सारग (११)

आवो रे भामिनी गज वर गमनी ।
वादवा अभयचन्द्र मिली मृगनयणी ॥ आचली ॥ १ ॥
मुगताफलनी थाल भरीजे ।
गच्छ नायक अभयचन्द्र वधावीजे ॥ आ० ॥ २ ॥
कुंकुम चन्दन भरीय कचोली ।
प्रेमे पद पूजो गोरना सहूमली ॥ आ० ॥ ३ ॥
हुबड वशे श्रीपाल साह तात ।
जनम्यो रूडी रतन कोडम दे भात ॥ आ० ॥ ४ ॥
लघु पणें लीधो महाव्रत भार ।
मन वश करी जीत्यो दुर्द्धर मार ॥ आ० ॥ ५ ॥
तर्क नाटक आगम अलकार ।
अनेक शास्त्र भण्या मनोहार ॥ आ० ॥ ६ ॥
भट्टारक पद एहने छाजे ।
जेहनो यश जगमा वारू गाजे ॥ आ० ॥ ७ ॥
श्री मूलसघे उदयो महीमा निधान ।
याचक जन करें गेह गुण गान ॥ आ० ॥ ८ ॥
कुमुदचन्द्र पाटि जयकारी ।
धर्मसागर कहे गाउ नरनारी ॥ आ० ॥ ९ ॥

---

(१२)

कुमुदचन्द्रनी हमची

सुन्दर नर एक निरुपम उदयो, अवनी अधिक उदार।
मूलसघ मुगटामणि दिनमणि सरसति गछ भडार रे ॥ १ ॥
हमचडी माहरी हेलि रे, गोरनी वडो मोहन वेलि।
रत्नकीरति पाटई कुमुदचन्द्र सोहे, सेवो सजन साहेल रे ॥ २ ॥
सकल रयण गुणे करी मडित, गोमण्डल धन गाय।
सदाफल सा तस नयरि, सुन्दर पदमाबाई धन धाय रे ॥ ३ ॥
एवेहू कूखे नर निपनो पावन पुरुष पवित्र।
बाल ब्रह्मचारी सग नही नारी, समकित चित सोहे वितरे ॥ ४ ॥
सामुद्रिक शुभ लक्षण सोहे, कला वहोत्तरि अग।
चतुर चउरत्नहे पच प्रेमे वहे त्रण्य रयणहुरे दग रे ॥ ५ ॥
सील सोहागी ज्ञान गुणेकरी, कदर्प दर्प हराव्यो।
भाग्य आपणे सोहे गोर सजनी, उत्तरथी आह्या आको रे ॥ ६ ॥
सघपति काहानजी सेहेस करण धनवीर भाई गूणे मल्लिदास।
गुण मडित गोपाल सहुमली, आव्यो पट्टोधर पास ॥ ७ ॥
कल्याणकीरति आचार अनोपम, उपम अवनी अपार।
महिमावत महीमा मुनिवर, माने मोटा माहत रे ॥ ८ ॥
संवत् सोल छपन्ने सवत्सर प्रगट पटोधर थाप्या।
वारडोली नयरे रत्नकीरति गोरे सुर मत्र शुभ आप्या ॥ ९ ॥
दिन-दिन दीपे परमत जीये जति जिन शासनचन्द्र।
श्रीसघ सानिध नाम कहे, गोर कुमुदचन्द्र मुनेन्द्र रे ॥ १० ॥
पडित पणे प्रसिद्ध प्राकमो वागवादिनी वर एहने।
सेवो सुरतरु चित्यो चिन्तामणि उपमा नही केहने रे ॥ ११ ॥
परम पावन गोर पुजना प्रेमे अल जो करे मझ मन्न।
नयणें नीरखी सजनी सहे गोर ते दिन कहिस्ये धन्य रे ॥ १२ ॥
साध पुरुस जेम श्रीजिन वाघे मधुकर मालति सग।
मान सरोवर मराल वाछे, चतुरनें चतुर सुरग रे ॥ १३ ॥
चकवी जिम दिन करने वाछे, चातुक मेह मन थाय।
तिम वछु हु कुमुदचन्द्र गोर, पूजता पाय पलाय रे ॥ १४ ॥
सघाष्टके सोभतो सेहे गोर, वादी ए कही हे सजनी।

मनोरथ पहोचसे मन तणा रे, सफल फलस्ये दिन रजनी रे ।। १५ ।।
विद्यानदि पाट मल्लिभूषण धन लखमीचन्द्र अभेचन्द्र ।
अभेनदी पाट पटोधर सोहे रत्नकीरति मुनीद्र रे ।। १६ ।।
कुमुदचन्द्र तस पाटइ दिन मणि घडी ख्यात जगि जेह ।
वदन तो सुन्दर वाणी जलधर श्री सघ साथे नेह रे ।। १७ ।।
हरखे हमची कुमुदचन्द्रनी गाये सुणे नर नार ।
मकट हर मन वछित पूरे, गणेस कहे जयकार रे ।। १८ ।।

।। इति श्री कुमुदचन्द्रनी हमची समाप्त ।।

अवशिष्ट

ब्रह्म जयराज (४५)

ये भट्टारक सुमतिकीर्ति के शिष्य थे। इनके द्वारा लिखा हुआ एक गुरु छन्द प्राप्त हुआ है जिसमें भट्टारक सुमतिकीर्ति के पट्ट शिष्य भट्टारक गुणकीर्ति के पट्टाभिषेक का वर्णन दिया हुआ है। पूरे गुरु छन्द मे २६ पद्य है जो विविध छन्दो वाले हैं। ब्रह्म जयराज ने और कितनी रचनाए लिखी इसकी गिनती अभी नही की जा सकी है। उक्त रचना मे सवत् १६३२ में होने वाले पद्मकीर्ति के पाट महोत्सव का वर्णन आया है। गुरु छन्द का सार निम्न प्रकार है—

भट्टारक गुणकीर्ति सुमति कीर्ति के शिष्य थे। राय देश मे चतुरपुर नगर था। वहा हूवड जातीय श्रेष्ठी सहजो अपार वैभाव के स्वामी थे। पत्नी का नाम सरियादे था। सहजो जाति के शिरोमणि थे और चारो ओर उनका अत्यधिक समादर था। उनके पुत्र का नाम गणपति था जिसके जन्म पर विविध प्रकार के उत्सव आयोजित किये गये थे। युवावस्था के पूर्व ही उसने कितने ही शास्त्रो का अध्ययन कर लिया। वे अत्यधिक सुन्दर थे। उनका शरीर अत्यधिक कोमल एव आखे कमल के समान थी। लेकिन गणपति चिन्तनशील थे इसलिये विवाह के पूर्व ही वे सुमतिकीर्ति के शिष्य बन गये। उनका नाम गुणकीर्ति रखा गया।

साधु बनने के पश्चात् उन्होंने वागड देश के विविध गावो मे विहार करना प्रारम्भ किया। डूगरपुर मे सघपति लखराज द्वारा आयोजित महोत्सव में इन्हें पाँच महाव्रत पालन का नियम दिया गया। इसके पश्चात् शान्तिनाथ जिन चैत्यालय मे इन्हें उपाध्याय पद मे विभूपित किया गया। उपाध्याय जीवन मे इन्होंने गोम्मटसार आदि ग्रन्थो का पठन पाठन किया। कुछ समय पश्चात् इन्हें

१. इसका विवरण पहिले नहीं दिया जा सका।

आचार्य बना दिया। गुणकीर्ति अत्यधिक प्रतिभाशाली एव चतुर सन्त थे। ज्ञान एव विज्ञान के वे पारगामी विद्वान थे। सघ व्यवस्था मे वे कुशल थे। उनके गुरु भट्टारक सुमतिकीर्ति उनसे अतीव प्रसन्न थे और अपने योग्यतम शिष्य को पाकर अत्यधिक आशान्वित थे। इसलिये उन्होने उन्हे अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। बागड देश मे उन्होंने अपना पूरा प्रभुत्व स्थापित कर दिया।

डूगरपुर के उस समय रावल आसकरण शासक थे। वे नीति कुशल न्यायप्रिय शासक थे। उनके शासनकाल मे जैनधर्म का चारो ओर प्रभाव था। नगर मे अनेक सघपति थे जिनमें कान्हौ, धर्मदास, रामो, भीम, शकर, दिडो, कचरो, रायम आदि के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं। इन्होने नगर के बाहर महाराजा आसकरण से क्षत्रक्षेत्रीय बावडी के लिये स्थान मांगा और एक महोत्सव के मध्य उसकी स्थापना की गयी। इस समय जो जलयात्रा का सुन्दर जलूस निकाला गया था उसका वर्णन भी अतीव सजीव एव सुन्दर हुआ है।

सवत् १६३२ में इन्होंने भी एक विशेष महोत्सव मे अपने ही शिष्य को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और उसका नाम पदमकीर्ति रखा। गुणकीर्ति ने इस समारोह को वडी धूमधाम से आयोजित किया। युवतियो ने मगल गीत गाये। विविध प्रकार के वाजा बजे। देश के विभिन्न भागो से उस समारोह मे भाग लेने के लिये सैंकडो व्यक्ति आये।

शान्तिदास (४६)

ये कल्याणकीर्ति के शिष्य थे। बहुवलीवेलि इनकी प्रमुख रचना है जिसको लघु बाहुबली वेलि के नाम से लिखा गया है। इसमे २६ पद्य है। उक्त बेलि के अतिरिक्त इनकी अनन्तव्रत विधान, अनन्तनाथपूजा, क्षेत्र पूजा, भैरवमानभद्र पूजा आदि और भी लघु रचनायें मिलती है। हिन्दी के अतिरिक्त, सस्कृत मे भी कुछ पूजा कृतिया मिलती है। लघु बाहुवली वेलि में इन्होने अपना निम्न प्रकार परिचय दिया है—

भरतनरेश्वर आवीया नाम्यु निजवर शीस जी।
स्तवन करी इस जपरा हू किंकर तू ईस जी।
ईस तुमनि छाडीराज मझानि आपीउ।
इम कही मन्दिर गया सुन्दर ज्ञान भुवने व्यापीउ।
श्री कल्याणकीरति सोम मुरति, चरणदेव मिनाणि कइ।
शातिदास स्वामी बाहुवलि सरण राखु प्रभु तुम्हतणी।

नामानुक्रमणिका

ग्राम एवं नगर

डॉ कस्तूरचन्द कासलीवाल

जन्म 8 अगस्त, 1920, ग्राम सैथल (राज)

शिक्षा एम ए, पी-एच डी, शास्त्री

साहित्य सेवा ' चालीस से भी अधिक ग्रन्थो का लेखन एव सम्पादन ।

प्रमुख कृतिया राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूचियाँ पाँच भागो मे (तीन हजार से अधिक पृष्ठो मे), प्रशस्ति सग्रह, प्रद्युम्न चरित, जिनदत्त चरित, हिन्दी पद सग्रह, बनारसी विलास, चम्पाशतक, वीर शासन के प्रभावक आचार्य, Jain Granth Bhandars in Rajasthan, शाकम्भरी के विकास मे जैनो का योगदान, महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एव भट्टारक त्रिभुवन कीर्ति, कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि, मुलतान जैन समाज—इतिहास के आलोक मे, भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र ।

नाटक परित्यक्ता, लडकी, जीवन सघर्ष, नयी दिशा, घर की लाज एव तपस्विनी—सभी मचित ।

पुरस्कृत कृतियां . राजस्थान के जैन सन्त (विद्वत् परिपद् द्वारा) महाकवि दौलतराम कासलीवाल (शास्त्री परिषद् द्वारा)

सम्मानित वीर निर्वाण भारती मेरठ द्वारा अक्टूबर 74 मे सम्मानित एव इतिहास रत्न की उपाधि से सम्मानित, अन्तर्राष्ट्रीय जैन शोध विद्यापीठ अलीगज द्वारा विद्यावारिधि उपाधि से सम्मानित, अप्रेल 79 मे निवाई (राज०) समाज द्वारा सम्मानित, अगस्त 80 मे महिला जाग्रति सघ जयपुर द्वारा सम्मानित

सम्पादन . वीरवाणी जयपुर, परिवहन सम्पदा जयपुर, स्मारिकाऐं—बाबू छोटेलाल स्मृति ग्रन्थ, पण्डित चैनसुखदास न्यायतीर्थ स्मृति ग्रन्थ, पण्डित बाबूलाल जमादार अभिनन्दन ग्रन्थ, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे 250 से अधिक लेख प्रकाशित ।

अध्यक्ष राजस्थान जैन साहित्य परिपद्, महिला जाग्रति सघ, ज्ञान विद्यालय, जयपुर ।

सयुक्त मन्त्री श्री दि जैन आचार्य सस्कृत महाविद्यालय एव अन्य बीसो सस्थाओ के कर्मठ सदस्य ।

परिवार दो भाई, एक बहिन, दो पुत्र, तीन पुत्रियाँ एव दो पौत्र